

UNIVERSAL
LIBRARY

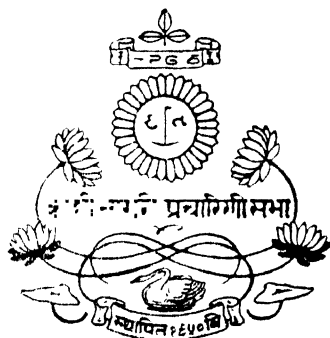
OU_182493

UNIVERSAL
LIBRARY

मनोरंजन पुस्तकमाला-११

संपादक

श्यामसुंदरदास बी० ए०



काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की ओर

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

Published by
K Mittra,
at The Indian Press, Ltd.,
Allahabad.

Printed by
A. Bose,
at The Indian Press, Ltd
Benares-Branch.

“ए ज़बर्दस्त ज़ेरबस्त आज़ार ।
गर्म ताकै वमानद् ई बाज़ार ॥”

लालचीन

एक ऐतिहासिक उपन्यास

लेखक

ब्रजनंदनसहाय

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१८३५

मूल्य १।।

भूमिका

प्रिय पाठक-वर्ग,

साहित्य का एक प्रधान अंग उपन्यास है। इसका पुष्ट एवं सुंदर रहने से साहित्य की श्री तथा गौरव-वृद्धि होती है। जिस साहित्य में उत्तम उपन्यास नहीं हैं वह साहित्य सर्वांगसुंदर तथा पूर्ण कदापि नहीं समझा जाता। अतएव हर एक साहित्य में उत्तम उपन्यास का प्रचार होना नितांत आवश्यक है।

हिंदी-साहित्य में उपन्यास के प्रायः दो ही उद्देश्य समझे जाते हैं—एक तो मनोरंजन करना और दूसरा उच्च भाव अथवा आदर्श प्रदर्शित करना। निःसंदेह इन दोनों उद्देश्यों की सिद्धि समाज, जाति तथा व्यक्ति-विशेष सभी के लिये परमावश्यक है, तथापि इन दोनों के अतिरिक्त उपन्यास का एक तीसरा प्रधान अंग है, जिसकी ओर विशेषकर पाश्चात्य लोगों की ही दृष्टि गई है। अँगरेजी में इसे Character sketch कहते हैं और हम हिंदी में इसे चरित्र-चित्रण कह सकते हैं। जिस प्रकार परिश्रम के उपरांत कलांति दूर करने के लिये तथा मन में स्फूर्ति ले आने के लिये मनोविनोद आवश्यक है, और जिस प्रकार उच्च आदर्श निदर्शित करके व्यक्ति तथा समाज के भाव एवं आदर्श को उच्च बनाना उपयोगी है

उसी प्रकार इस संसार-संग्राम में सफलता प्राप्त करने के लिये सांसारिक मनुष्यों के चरित्र का ज्ञान होना भी नितांत आवश्यक है । और जैसे मनोरंजन तथा उच्च भाव का प्रदर्शन उपन्यास-लेखक का कर्त्तव्य है उसी प्रकार संसार के व्यक्तियों का चरित्र-चित्रण तथा देश-काल के अनुसार उसमें हेर-फेर दिखलाना भी उसका परम धर्म है । किस अवस्था में पड़कर कौन मनुष्य कैसा होगा, किस व्यक्ति से कितनी आशा करनी चाहिए इसका ज्ञान केवल अनुभवी लेखक अपने पाठकों को करा सकते हैं । अतएव ऐसे उपन्यासों का लिखना कुछ सहज नहीं है । कभी कभी ऐसे उपन्यासों से पाठकों को असंतोष भी होता है, क्योंकि सांसारिक सभी घटनाएँ अपनी इच्छा के अनुकूल नहीं होतीं । न तो पुण्य की सदा जय होती और न पाप की सदा हार ही होती है । सभी प्रेमियों में संयोग ही नहीं होता । परंतु इस प्रकार के उपन्यासों में कल्पना कम और वास्तविकता अधिक होती है । अस्तु, इस उपन्यास में चरित्र का चित्रण ही प्रधान रखा गया है । किस अवस्था में पड़कर स्वामिभक्त लालचीन स्वामिद्रोही बन जाता है और किस प्रकार रक्त की प्यासी अपनी स्त्री की उत्तेजना में पड़कर वह अपने स्वामी का सर्वनाश करने पर उद्यत होता है, फिर उसकी स्त्री लोभ में पड़कर कोमलांगिनी होने पर भी कैसी कठोरहृदया हो जाती है और किन भावों के सदय होने पर लुत्फुन्निसा सिंहासनारूढ़ शम्स का तिरस्कार

करती है और फिर राज्यच्युत होने पर उसी को अपनाती है इत्यादि, यह सब इसमें चित्रित किया गया है। इस कथा की रचना एक ऐतिहासिक घटना पर की गई है जिसे हुए आज लगभग ७०० वर्ष हुए। परंतु विस्तार करने में कहीं कहीं आधुनिक पदार्थों का उल्लेख आ गया है। यद्यपि यह साहित्य में एक प्रकार का दोष (Anachronism) समझा जाता है तथापि इस प्रकार का दोष शेक्सपियर प्रभृति अनेकानेक विद्वानों ने किया है, अतएव यह क्षंतव्य है। इस कथा का निर्माण राजनैतिक दृष्टि से नहीं हुआ है। परंतु इससे एक गूढ़ राजनीति का उपदेश मिलता है कि किसी देश में युगांतर उपस्थित करने से उस देश का कुछ लाभ नहीं होता। क्योंकि, यद्यपि थोड़े समय के लिये युगांतर सफल भी हो तथापि वह सफलता चिरस्थायिनी नहीं हो सकती। फिर भी प्राचीन ही प्रथा आकर उसे जकड़ लेती है। अतएव जो कोई अपने देश का सच्चा हितैषी हो वह केवल क्रमशील परिवर्तन (Evolution) का प्रयत्न करे, युगांतर (Revolution) का कदापि उपाय न सोचे। इस उपन्यास की एक और विशेषता है। इसमें लेखक ने अपनी उक्ति की भरमार से उन्नत भावों और विचारों को पाठकों के प्रति जताने का यत्न नहीं किया है। ग्रंथकर्ता ने पात्रों के चरित्र तथा कथन ही द्वारा उपदेश देने की चेष्टा की है। इस दृष्टि से यह उपन्यास एक गद्यमय नाटक सा हो गया है।

इस पुस्तक के लेखक हिंदी-साहित्य-संसार में अपना उचित स्थान प्राप्त कर चुके हैं और मुझे विश्वास है कि यह ग्रंथ उनके पद को गौरव ही देगा और हिंदी-संसार में भी आदर का भाजन होगा ।

आरा	{	अवधविहारीशरण, एम० ए०,
ता० ३०—५—१६		बी० एल०, वकील

सूचो

प्रथम खंड

विषय			पृष्ठ
पहला परिच्छेद	...	...	१—६
दूसरा परिच्छेद	...	...	१०—१५
तीसरा परिच्छेद	...	...	१६—२५
चौथा परिच्छेद	...	...	२६—३१
पाँचवाँ परिच्छेद	...	...	३२—३७
छठा परिच्छेद	...	...	३८—५०
सातवाँ परिच्छेद	...	...	५१—५६
आठवाँ परिच्छेद	...	...	६०—६७
नवाँ परिच्छेद	...	...	६८—७४
दसवाँ परिच्छेद	...	..	७५—८३
ग्यारहवाँ परिच्छेद	...	...	८४—८९
बारहवाँ परिच्छेद	...	...	९२—१०१
तेरहवाँ परिच्छेद	...	...	१०२—११३
चौदहवाँ परिच्छेद	...	...	११४—१२२

द्वितीय खंड

पहला परिच्छेद	...	...	१२३—१३६
दूसरा परिच्छेद	...	...	१४०—१४८

विषय			पृष्ठ
तीसरा परिच्छेद	...	...	१४६-१५८
चौथा परिच्छेद	...	...	१५६-१७०
पाँचवाँ परिच्छेद	...	...	१७१-१८०
छठा परिच्छेद	...	...	१८१-१९०
सातवाँ परिच्छेद	...	...	१९१-१९७
आठवाँ परिच्छेद	...	...	१९८-२१२
नवाँ परिच्छेद	...	...	२१३-२१६
दसवाँ परिच्छेद	...	...	२२०-२२८
ग्यारहवाँ परिच्छेद	...	...	२२९-२४३
बारहवाँ परिच्छेद	...	...	२४४-२५३
तेरहवाँ परिच्छेद	...	...	२५४-२५८
चौदहवाँ परिच्छेद	...	...	२५९-२६४
पंद्रहवाँ परिच्छेद	...	...	२६५-२७६
सोलहवाँ परिच्छेद	...	...	२७७-२८७
सत्रहवाँ परिच्छेद	...	...	२८८-२९२
परिशिष्ट ...	...	...	२९३

लालचीन

प्रथम खंड

पहला परिच्छेद

सुंदर सुरम्य दीवान-खास में गयासउद्दीन एक रत्नजटित सिंहासन पर बैठा है। कारचोबी के काम किए हुए एक हरे मखमली मसनद के सहारे बैठा वह मुश्की तंबाकू पी रहा है। बहुमूल्य मुद्रिकाओं से विभूषित अँगुलियाँ फूतहों का मुँह से संयोग करा रही हैं। सोने का मुँहनाल बार बार उसके तांबूल-रंजित सुंदर पतले ओष्ठ को चूम रहा है। ज़रदोज़ कपड़ा उसके सुंदर अंग को और भी सुंदर बना रहा है। प्रफुल्ल आनन की कांति, पुष्ट देह की गठन, चिंतारेखा-रहित उन्नत ललाट की चमक देखकर ज्ञात होता है कि संसार में सुख ही भोगने के लिये इसकी सृष्टि हुई है।

जिस जगह यह बैठा था वहाँ की सजावट देखकर आँखें तलमिल जाती थीं। धन द्वारा जितनी सुख की सामग्री संग्रह की जा सकती है सब वहाँ प्रस्तुत थी। जहाँ देखो वहीं स्वर्ण,

रजत, जिस ओर दृष्टि जाती उसी ओर प्रवाल, रत्न, मुक्ता । यहाँ की तैयारी देखकर जान पड़ता था कि यहाँ के स्वामी की चित्तरंजिनी शक्ति का पूरा अनुशीलन हुआ है ।

गयासउद्दीन के पीछे खड़ा एक दास चँवर डुला रहा था । बगल में खड़ा एक गुलाम सुगंध द्रव्य बार बार सिंहासन के चारों ओर छिड़क रहा था । ज्ञात होता था मानों कोई चतुर माली सावधानतापूर्वक किसी सुंदर कोमल विटप को सींच रहा हो । एक ओर पान-ख़वास सोने की तश्तरी में पान लिए विनीत भाव से खड़ा था । आसाबरदार चौबदार अपनी अपनी जगह पर पुतले से खड़े थे, अर्थात् शाही सामान सब ठीक था । गयासउद्दीन की नस नस में नया उत्साह भरा था ।

कुछ दिनों हुए, अपने पिता के स्वर्गवास हो जाने के कारण यह दक्षिण भारत में (जिसे आजकल डेकन कहते हैं) सिंहासना-रूढ़ हुआ था । इतने ही दिनों में इसके सुप्रबंध से प्रजा बहुत संतुष्ट थी । देश में कला कृषि को बढ़ाने, प्रजा पर लगे हुए कर को घटाने और उनके सुख से अपने को सुखी मानने का यह सदा यत्न करता था । अपने पिता के समय के पुराने कर्म-चारियों की इसने पदवृद्धि की थी । आशा होती थी कि आगे चलकर यह एक उत्तम प्रजावत्सल राजा होगा । अपनी उदारता, स्नेह, सुव्यवहार से इसकी चेष्टा सब के मन को वश करने की रहती थी ।

इतना होने पर भी तुर्क गुलामों के सरदार लालचीन को यह संतुष्ट न कर सका। लालचीन इस परिवार का पुराना दास था। गयास के पिता की इस पर विशेष कृपा रहती थी। इसे पूर्ण आशा थी कि एक न एक दिन वह मुझे अवश्य दासत्व से मुक्त कर देगा। किंतु इसकी यह आशा दुराशा मात्र रह गई। इसी बीच इसका स्वामी असार संसार से चल बसा। कुछ दिन तो शोक विलाप में कट गए। कुछ दिन राज्याभिषेक के उत्सव ही में गए। कितने कर्मचारियों को पुरस्कार, खिलअत, दान-मान बाँटे गए। कितनों की पदवृद्धि की गई। यह सब देख सुनकर इसकी आशा-लता भी पुनः लहलहाने लगी। इसे विश्वास होने लगा कि मेरे मुक्त होने का दिन निकट आ रहा है।

दिन पर दिन बीतने लगे। किंतु लालचीन जहाँ का तहाँ रह गया। उसकी अवस्था में कुछ भी परिवर्तन न हुआ। आशा को निर्बल होते देखकर निराशा ने ताक भाँक लगाई। बैरी को प्रबल देखकर अंत में आशा को अपनी राह लेनी पड़ी और लालचीन के हृदयागार में निराशा का अकंटक राज्य हो गया। परंतु बहुत दिनों तक वह अकेली न रह सकी और क्रमशः उसने अपने सहायकों का आवाहन कर लिया। फिर क्या था; ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध आदि एक एक कर लालचीन के हृदय में अपना प्रभुत्व जमाने लगे, और अपने परिवार की वृद्धि देख लोभ ने भी अपनी मर्यादा का

धल्लंघन किया। इसका परिणाम यह हुआ कि दिन दिन लालचीन अधिक दुखी होने लगा। गयास के पिता का पुराना दास होने के कारण यह गयास से निस्संकोच भाव से बातें कर सकता था। अतएव कई बार अवसर पाकर इसने गयास से कहा भी था कि आप क्यों मुझ पर कृपा नहीं करते। किंतु अभी तक इस कहा-सुनी और प्रार्थना का कुछ भी प्रभाव गयास पर न पड़ा। वह बराबर यही कहता था कि नीच को ऊँचा बनाना अच्छा नहीं है। जो जहाँ है उसे वहाँ रहना उचित है। धूल का पैर के नीचे ही रहना अच्छा है। यदि चेष्टा कर उसे ऊपर लाया जाय तो वह ठहर नहीं सकती। ऊपर जाते जाते फिर अपने पूर्व स्थान में चली आती है। यदि अपर किसी बात का तुम्हें कष्ट हो तो उसे दूर करने का मैं यत्न कर सकता हूँ। किंतु गुलामी से तुम्हें विमुक्त करना युक्तियुक्त नहीं है। इस प्रकार उत्तर सुनते सुनते लालचीन का असंतोष अधिक बढ़ता गया।

अब इसमें इतनी शक्ति न रही कि यह अपने को सीमा के भीतर रख सके, अपने मनोगत भावों को छिपा सके। आज इसने दृढ़ संकल्प किया था कि गयास से अपना काम जिस प्रकार होगा करा ही लूँगा। जब वासना-नदी पूर्ण वेग से अपने अभिमत स्थल की ओर परिधावित होती है और उसमें उमंग की बाढ़ आ जाती है तब धैर्य के करारे को तोड़कर वह अपनी मर्यादा छोड़ देती है। स्वार्थ के

वशीभूत हा जाने पर परिणाम का विचार मनुष्य के हृदय में कभी नहीं आता । यह मनुष्य को आपे से बाहर कर देता है ।

सुगंध द्रव्य छिड़कते छिड़कते लालचीन ने असंतोषपूर्ण दृष्टि से अपने स्वामी की ओर देखा । इसी समय गयास की आँखें उसकी ओर फिरीं । झूँक कर लालचीन से गयास ने कहा—लालचीन, इस प्रकार तुम क्यों असंतुष्ट दीखते हो ? जब से मैं सिंहासनारूढ़ हुआ मेरे व्यवहार से सभी संतुष्ट हैं, एक तुम क्यों मुझसे रुष्ट रहते हो ?

लालचीन—दास के असंतुष्ट होने का कुछ विशेष कारण नहीं हो सकता । दासत्व स्वयं ही एक महा यंत्रणा है । सेवा में मुझसे कभी त्रुटि नहीं हो सकती । किंतु जब स्वामि-भक्त दास उचित पुरस्कार नहीं पाता, उसका जी टूट जाता है और उसमें असंतोष की मात्रा अवश्य ही बढ़ जाती है ।

गयास—किंतु जब तक स्वामी अन्याय नहीं करता, दास के रुष्ट होने का कोई कारण नहीं है । न्याय के सम्मुख सब को शीश झुकाना उचित है । दासों के साथ राजकुमारों सी बर्त्ताव नहीं किया जा सकता । दोनों एक कक्षा में नहीं रखे जा सकते ।

लालचीन—किंतु उनके साथ मनुष्य जैसा व्यवहार करना तो उचित है । हित अनहित के विचारने की शक्ति दासों में भी है । दुःख सुख का वे भी अनुभव करते हैं । वे भी मर्म रखते हैं । उन्हें भी वेदना होती है । उनका भी हृदय न्याय

और अत्याचार अनुभव करता है, हर्ष विषाद प्रकट करता है।
उनका भी मन उच्च अभिलाषा से भरा रहता है।

गयास—किंतु मैं समझता हूँ कि स्वतंत्र मनुष्यों की श्रेणी में गुलाम को बिठाना न्याययुक्त नहीं है। जब प्रारब्ध ने दासों को दासत्व की बेड़ी में जकड़ दिया है तब उन्हें उचित है कि वे अपनी अवस्था का यथार्थ ज्ञान रख हर्षपूर्वक अपनी जीवनयात्रा निर्वाह करें। छटपट करने से दुःख छोड़कर सुख कदापि नहीं हो सकता। पिंजड़े में चिड़िया जितनी छटपटाती है उतना ही अधिक कष्ट पाती है। अपनी वर्तमान अवस्था से असंतुष्ट रहना मनुष्य को उचित नहीं है। मैं नहीं चाहता कि गुलाम प्रतिष्ठित पद पर बैठाया जाय और वह संसार में स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करे।

लालचीन—ज्ञात होता है कि शाहंशाह को यह बात विस्मरण हो गई है कि आदि में राजमाता भी उसी नीच श्रेणी की थीं जिसकी पदवृद्धि करना जहाँपनाह अनुचित समझते हैं और जिसकी ओर सुलतान ऐसी घृणा की दृष्टि से देखते हैं।

गयास—पूज्य पिता ने (उनकी पवित्र आत्मा को स्वर्ग प्राप्त हो!) तुम्हें बहुत शोख बना डाला है। तुम्हारी अवस्था की ओर देखकर तुम्हें उचित शिक्षा देते नहीं बनता, नहीं तो तुम्हारी यह लत छूट जाती और तुमको मुँह सम्हालकर बोलने का अभ्यास आ जाता, और तुम सीख लेते कि सुलतानों के साथ किस अदब से बातें की जाती हैं। परंतु इस विषय

में कुछ कहना ही व्यर्थ है। सुनो जो तुमने राजमाता के संबंध में कहा वह तुम्हारी भूल है। नीच कुल में जन्म धारण करने के कारण स्त्रियाँ नीच एवं च्युत नहीं समझी जा सकतीं क्योंकि विधाता ने उन्हें मानव जाति की वृद्धि के लिये एक यंत्र बनाया है। माता होने का सौभाग्य प्राप्त होने के कारण कोई स्त्री नीच नहीं है। पुत्र अपनी माता के द्वारा कोई पद वा प्रतिष्ठा नहीं पाता और न उसकी नीचता के कारण नीच ही होता है। अतएव माता दासी हो चाहे शाहज़ादी, उसकी संतान को कुछ हानि वा लाभ नहीं हो सकता।

लालचीन—जहाँपनाह का तर्क एक विज्ञ तार्किक जैसा हुआ है। मुझमें सामर्थ्य कहाँ कि उसके खंडन में मुँह खोलूँ। मैं समझता हूँ कि एक नीच दास के लिये यह असंभव है कि वह शाही तर्क का खंडन कर सके।

ग़्यास—तुम्हारा व्यंग्य मैं समझता हूँ। ज्ञात होता है कि तुम मुझसे सहमत नहीं हो और न मेरी बातों को तुम प्रामाणिक मानते हो। परंतु किसी दूसरे समय मैं सिद्ध कर दूँगा कि मेरा कथन अखंडनीय है। जो हो, मैं स्पष्ट शब्दों में तुम्हें कहता हूँ और विश्वास दिलाता हूँ कि मेरे शासन की यह नीति है कि नीच को उच्च पद पर न पहुँचाया जाय। अतएव जो जहाँ है उसे वहीं संतुष्ट रहना उचित है। वासना के आवर्त्त में व्यर्थ पड़कर अपने जीवन को दुःखमय बनाना कदापि उचित नहीं है। तुम इस समय यहाँ से जाओ।

तुम्हारी चेष्टा से ज्ञात होता है कि मेरी बातें तुम्हें रुचिकर नहीं हैं ।

मुँह नीचा किए लालचीन वहाँ से चला गया । किंतु क्रोधानल उसके हृदय को दग्ध कर रहा था । चेष्टा करने पर भी वह अपने को सम्हाल न सका और उसने गयास के सर्वनाश का दृढ़ संकल्प किया ।

ईर्ष्याग्नि जब एक बार मनुष्य के हृदय में प्रज्वलित हो जाती है तब उसका बुझाना वा सीमा के भीतर रखना कठिन ही नहीं वरन् असंभव हो जाता है । यही दशा लालचीन की हुई । ज्वालामुखी सा गंभीर मुँह बनाए वह दरबार से बाहर चला गया ।

लालचीन के चले जाने पर गयास के आनन पर भी विषाद की रेखा प्रदर्शित होने लगी । उसके हृदय में लालचीन का कटु वाक्य छूरी सा चुभ गया । कई बार मारे क्रोध के वह आपे से बाहर हुआ चाहता था । किंतु किसी प्रकार कठिन चेष्टा से वह अपने को सम्हाल सका । यदि वह चाहता तो लालचीन को कठिन दंड देता, कोई उसका हाथ रोकनेवाला नहीं था । किंतु विवेक से काम लेकर उसने अपने को रोका ।

लालचीन उसके पिता के समय का एक विश्वासी सेवक था । उसके पिता का इस पर अधिक स्नेह रहता था । अपने पिता का गयास के मन में बड़ा आदर था । वह कोई काम

ऐसा करना नहीं चाहता था कि जिससे उसके मृत पिता की आत्मा को स्वर्ग में दुःख पहुँचे। इसी कारण उसने इस समय सेवक की बातों को दम साधकर सह लिया। भूतपूर्व भूपाल के समय असंकुचित भाव से लालचीन अपने मनोगत भावों को प्रकटित किया करता था। वे भी इसकी बातों की ओर ध्यान नहीं देते थे। इसी कारण इसमें कुछ अधिक धृष्टता आ गई थी। इसके अतिरिक्त इसमें बुद्धि की मात्रा अधिक थी और साधारण चाकरोँ से बढ़कर इसने शिक्षा भी पाई थी। जो काम इसे सौंपा जाता था उसे यह बहुत उत्तमता एवं सावधानी से करता था। ये ही कारण थे कि साधारण चाकर होने पर भी आज गयास को मुँह पर यह इतना बोल गया।

एक ओर पूज्य पिता की पवित्र स्मृति और दूसरी ओर सेवक की धृष्टता, बस गयासउद्दीन के प्राण बड़े संकट में पड़े। करे तो क्या ?

दूसरा परिच्छेद

एक उहंड बलवान् बर्बर जाति के वंश में लालचीन ने जन्म धारण किया था। यह जाति मानव-गौरव-गगन में स्वतंत्रता को ध्रुवतारा मानती थी। प्राणपण से इस जाति की यही चेष्टा रहती थी कि धन जन मान मर्यादा सब जाय तो जाय किंतु स्वतंत्रता न जाय। स्वतंत्रता रखकर यह जाति भित्ति माँगना पसंद करती थी किंतु परतंत्र हो राज्य-सुख भोगना नहीं चाहती थी। इस जाति का सिद्धांत था कि जब स्वाधीनता ही न रही तो जान रखकर क्या होगा। अतएव दासत्व की कठिन बेड़ी की झनझनाहट लालचीन के मर्म पर आघात पहुँचाती थी। पिंजरबद्ध सिंह सा वह सदा छटपटाया करता था। जिस प्रकार अथाह जल में डूबता हुआ मनुष्य किंचित् हवा के लिये व्याकुल हो हाथ पैर फेंकता है और सदा जल के ऊपर आने की चेष्टा करता है, किंतु इस पर भी वह उसी जल के भीतर चला जाता है जिसके कारण हवा उसके होठों से दूर रहती है, उसी प्रकार स्वाधीनता के लिये व्याकुल रहने पर भी लालचीन दासत्व की अनल-तरंगों में डूबता चला जाता था। जिस प्रकार डूबने-वाला किसी साधारण सहारे से भी अपनी रक्षा की आशा

करता है उसी प्रकार लालचीन भूतपूर्व बादशाह से स्वतंत्र होने की आशा रखता था । किंतु आज गयासउद्दीन के कोरे जवाब से वह एकदम हताश हो गया, और घृणा तथा क्रोध के प्रबल आवेग ने उसके हृदय को डाँवाँडोल कर दिया । उसके वुर्दै संकल्प ने सुप्त कुवासनाओं को उसके हृदय-मंदिर में जगा दिया और घर जाकर लालचीन अपने स्वामी के सर्वनाश का उपाय सोचने लगा । दरबार से आकर लालचीन अपने कमरे में मलिन-वदन बैठा था; चिंता के प्रगाढ़ हो जाने के कारण किसी काम में इसका जी नहीं लगता था । दास होने पर भी धन-धान्य में किसी नरेश से लालचीन कम नहीं था । अतएव इसके घर में सब शाही सामान ठीक थे ।

इसे चुपचाप बैठा देख एक दासी ने फ़तहपेंच लाकर सामने रख दिया । दासी की ओर बिना देखे लालचीन ने कहा—अरी बाँदी ! अपनी मालकिन को तो ज़रा भेजना । “जो हुकुम” कहती हुई दासी वहाँ से चली गई ।

अपने को अकेला पा ठंडी सैँस लेकर लालचीन ने मन ही मन कहा—हाय ! इस प्रकार कब तक चलेगा ? दूसरे का मुँह जोहने से तो मर ही जाना अच्छा है । भला किसी बादशाह से कम मैं क्या हूँ ? धन दौलत, विद्याबुद्धि, बल रूप सब कुछ रखकर भी मैं गुलाम क्यों बना रहूँ ? यह छोकड़ा मुझे अब धता बता रहा है । अब तक तो मैं सोचता था कि एक न एक दिन दासत्व से मुक्ति पाकर सुख से संसार में अपना

जीवन बिताऊंगा। किंतु अब तो वह आशा जाती रही। देखता हूँ कि सीधी राह से मेरा काम चल नहीं सकता। जब तक गयास से बदला न लूँगा, काम नहीं चलेगा। मेरे सुख के पथ का यही कंटक है। जब तक यह हटाया नहीं जायगा तब तक मुझे सुख नहीं मिल सकता। क्या करूँ ? यदि यह जानता तो लड़कपन ही में किसी उपाय से इसे कहीं खपा देता। जो हो, अब तो कोई यत्न करना ही पड़ेगा। यदि ईश्वर की कृपा हुई तो तुरंत गयास को अपनी करनी का उचित दंड मिलेगा। ज़रा इसमें अपनी गृहिणी से तो परामर्श कर लूँ। उपाय तो सूझ गया।

इस बीच लालचीन की गृहिणी कुलसुम वहाँ आ पहुँची। स्वर्ण-रत्नमुक्ता से उसका सिर से पैर तक ढका था। उसकी उमर प्रायः पैंतीस वर्ष की होगी। उसे देखकर ज्ञात होता था कि यौवनावस्था में उसमें रूप की मात्रा बहुत अधिक थी। आज भी उसके अंग अंग पर सुंदरता तथा लावण्य की रेखा पूर्ण थी। हाव भाव से भरी कुलसुम अपने स्वामी के सम्मुख आते ही और उसकी ओर देखते ही व्याकुल हो बोल उठी—
“क्यों, क्या है ? चेहरा इतना उदास क्यों ? कुशल तो है ? मिज़ाज कैसा है ? तबीयत कैसी है ? दरबार में कोई बात नई तो नहीं हुई ? वहाँ से आते ही ऐसे क्यों हो गए ? मेरा जी घबड़ा रहा है। मेरे सर की कसम, ज़रा ज़बान खोलिए और मेरे कलेजे को ठंडा कीजिए।”

लालचीन—यही कहने के लिये तो तुम्हें बुलाया है ।
आओ बैठो तो सब कहता हूँ ।

स्वामी की आज्ञा पा कुलसुम उसके समीप बैठ गई और फतहपेंच का मुँहनाल उसके हाथ में देकर बोली कि आपकी दशा देखकर मेरा कलेजा चूर चूर हुआ जाता है ।

तंबाकू पीते पीते लालचीन ने कहा—देखो, आज तुमसे एक भेद की बात कहता हूँ । अपनी वर्तमान अवस्था से अब मैं घबड़ा गया हूँ । गुलामी अब मुझसे सही नहीं जाती । दूसरे का मुँह जोहते जोहते आँखें फूट गईं । अभी तक आशा थी कि बादशाह मुझे विमुक्त कर देंगे । किंतु अब देखता हूँ यह मेरी आशा पूरी न होगी । गयासउद्दीन के कोरे उत्तर को सुनकर आज मेरी आशा पर पानी फिर गया । उसने साफ़ शब्दों में आज कह दिया कि जहाँ हूँ वहीं मुझे रहना पड़ेगा । दासत्व से मेरी कभी मुक्ति न होगी ।

कुलसुम—जब तुम्हारी इच्छा ही नहीं है तब भला इस जंजाल से तुम्हें छुटकारा क्योंकर मिल सकता है ? तुममें उत्साह नहीं है, हौसला नहीं है, जोश नहीं है । इसी से तुम्हारी यह दशा हो रही है । ईश्वर ने तो तुम्हें इतनी बुद्धि दी है कि तुम वज़ीर आज़म हो सकते हो । किंतु जब तक तुम स्वयं इच्छा न करोगे तब तक कौन तुम्हारी सहायता कर सकता है ? सत्य तथा धर्म के मार्ग पर चलकर तुम अपने शीघ्र पद पर कदापि नहीं पहुँच सकते हो । सीधे का कहीं

गुज़र नहीं है। दुनिया को बुद्धि से चलाना होता है। धम्म की गठरी ढाने से गुलामी छोड़ कुछ हाथ नहीं आवेगा। कौशल से काम लो। अपने लक्ष्य को ऊँचा करो। दिल को पोढ़ा करो। तब देखो क्या होता है। अपने जी की बातें तुमसे क्या कहूँ। मन का मनोरथ मन ही में रह जाता है। यदि तुम्हारी मर्ज़ी पाऊँ तो कर दिखाऊँ कि मुझसे क्या क्या हो सकता है।

लालचीन—अच्छा, अब तुम जो कहोगी वही करूँगा। किसी प्रकार इस आफ़त से बचना ही होगा।

कुलसुम—अच्छा, वे सब बातें तुम मेरे हाथ छोड़ दो। तुम चिंता को अपने मन में अब स्थान न दो। दुनिया पर प्रकट न होने दो कि तुम्हारे मन में क्या है। बुलबुल की तरह चहका करो। गुल सा अपने चेहरे को प्रफुल्लित रखो जिसमें कोई लख न सके कि फूलों के बीच सर्प बैठा है। चुटकी बजाकर मैं तुम्हें दासत्व से मुक्त करती हूँ। तुम्हें वज़ीर आज़म बना देती हूँ। सुलतान को तुम्हारे हाथ का पुतला बनाती हूँ। दक्षिण भारत में तुम्हारे नाम का डंका बजवाती हूँ। “ किंतु वचन दो कि तुम मुझसे छेड़छाड़ न कर जो कहूँगी वही करोगे।

लालचीन—तुम्हारी बुद्धि पर मुझे पूरा भरोसा है। तुम्हारी चातुरी मुझसे छिपी नहीं है। तम पर विश्वास कर यह काम मैं तुम्हारे हाथ में छोड़ सकता हूँ। मैं इस विषय में तुमसे कुछ न बोलूँगा, जो तुम कहोगी वही करूँगा।

कुलसुम—अच्छा, तुम अपने मन को पहले बदल डालो । तुम्हारा चेहरा एक पुस्तक हो रहा है जिसमें तुम्हारे मनोगत भाव स्पष्ट अक्षरों में अंकित हैं । इन्हें छिपाने का यत्न करो । दुनिया को छलावा देने के लिये दुनिया के अनुकूल दीखना चाहिए । सुलतान से प्रेमभाव से मिलो । देखो जिसमें तुम्हारे वर्त्ताव से कोई जान न सके कि तुम्हारे मन में कोई दूसरा भाव है । फिर सब काम ठीक हो जाता है ।

लालचीन—अच्छा, ऐसा ही होगा ।

कुलसुम—अब रात अधिक बीत गई, घर में चलो । दो-चार दिन में मैं सब ठीक कर दूँगी ।

इसके बाद दोनों वहाँ से उठकर अपने अंतःपुर में चले गए । रात रास रंग में कटी । लालचीन के हृदय से चिन्ता दूर हुई । उसकी आशालता फिर लहलहा उठी । कुवासना, जो उसके हृदय में काली नागिन सी सोई पड़ी थी, फुफकार छोड़ती हुई उठ पड़ी । लोभ का भ्रंभावात उसके हृदय में उठा और उसकी आत्मा डौवाँडोल होने लगी । किंतु आत्मा की सुननेवाला वहाँ कौन था ! वहाँ तो नए उत्साह के साथ नए प्रबंध सोचे जाने लगे । नई उमंग की उत्तेजना से गयास के सर्वनाश के नए उपाय सूझने लगे । दंपति में नाना प्रकार की कुमंग्रणा होने लगी । कुलसुम ने लालचीन को पूर्ण रूप से उत्तेजित कर पैशाचिक कर्म और विचारों में उसकी पूरी प्रवृत्ति कर दी ।

तीसरा परिच्छेद

प्रातःकालीन वासंती बयार बह रही थी। दुर्ग की वाटिका में नाना वर्ण के पुष्प मुकुलित तथा विकसित थे। मधुमत्त मलिंद मकरंद के लोभ से भाँति भाँति के सुमनों का मुँह स्वच्छंद चूम रहे थे। रसाल की मंजरी पर युत्थ की युत्थ मधुमत्तिकाएँ लदी थीं। एक विटप से दूसरे विटप पर तितिलियाँ सानंद उड़ रही थीं। प्रकृति अपनी अलौकिक छटा उस उद्यान में दिखा रही थी। पत्ती कानों में सुधा-वर्षण कर रहे थे।

इसी उद्यान में गयास अपने छोटे भाई शम्सुद्दीन के साथ प्रभात समीर का सेवन कर रहा था। दोनों कभी-पुष्पों की छटा देखते, कभी विटपों के कोमल पत्तों को स्पर्श करते, कभी निकुंजों का आनंद लेते और कभी ध्यानपूर्वक कोकिला तथा पपीहे की मीठी बोली सुनते थे।

योंही टहलते-फिरते दोनों उस सुंदर बावली की ओर निकल पड़े जो उस वाटिका के बीच संगमरमर के सोपान से सुशोभित थी। इसका जल निर्मल तथा स्वच्छ था। इसमें रंग रंग की मछलियाँ विहार कर रही थीं, जलकुक्कुट तथा हंस सानंद जलक्रीड़ा कर रहे थे। सोपान पर बैठकर

देनों प्रकृति की अलौकिक शोभा चारों ओर देख रहे थे । इसी बीच गयास की दृष्टि बावली के दूसरे किनारे पर गई । वहाँ उसने देखा कि एक अतीव सुंदर रमणी, एक हाथ से आम की एक डाली धरे, खड़ी खड़ी बाटिका की शोभा देख रही है ।

यह असाधारण दृश्य था । गयास के मन पर इसका प्रभाव बहुत पड़ा । उसे देखते ही चकित हो और शम्सुद्दीन का ध्यान उस ओर आकर्षित कर वह बोला—शम्स ! वहाँ वह कौन खड़ी है ?

अजब गुल चमन में खिला देखता हूँ ।

मैं आँखों से अपने यह क्या देखता हूँ ।

वह कोई हूर तो नहीं है ? हरम की रहनेवाली तो यह कभी नहीं है । देखो, किस नाज़ व अदा से खड़ी है । जाकर तुम पता लो, वह कौन है ? क्यों वहाँ आई है ? अभी तक उसने हम लोगों को नहीं देखा है ।

शम्स—मैं उसे नहीं जानता । मैं तो आज इसे पहली बार देखता हूँ । किंतु इसे देखकर मनुष्य सहज में इस पर मुग्ध हो सकता है । मैं अभी जाकर पता लगाता हूँ । जान पड़ता है, यह इस लोक की नहीं है ।

गयास—शीघ्र जाओ । यह कोई परिचित रमणी नहीं है और कोई अपरिचित इस राजोद्यान में क्योंकर आई । यह तो सर्वसाधारण के आने का स्थान नहीं है । इसका परिचय

लेना नितांत आवश्यक है। देखो, वह हटना चाहती है। जान पड़ता है, उसने हम लोगों को देख लिया। अब वह अपने को छिपाना चाहती है। यह रमणी अपनी गति से हंस को लजाती उस निकुंज की ओर जा रही है। जल्दी जाकर उसकी राह रोको, मैं भी अभी आ रहा हूँ। उसे ठहराकर कहां कि सुलतान उससे कुछ पूछना चाहते हैं। एक बार जब वह यहाँ आ गई तब हम लोगों का पूर्ण अधिकार है कि उसका परिचय लें।

शम्स—इसमें क्या संदेह ! मैं अभी जाता हूँ। वह कभी यहाँ से भाग नहीं सकती।

इतना कह शम्सुद्दीन उस निकुंज की ओर बढ़ा जिसकी आंठ में वह रमणी छिप गई थी। शम्स तेजी से आगे बढ़ने लगा क्योंकि उसी ओर से इस बाटिका से बाहर जाने की एक गुप्त राह थी। उसे संदेह हो रहा था कि उसी पथ से यह अपूर्व रमणी-रत्न कहीं बाहर न निकल जाय। फिर तो इसका पता पाना कठिन ही नहीं वरन् असंभव हो जायगा।

गुप्त द्वार के निकट पहुँचते पहुँचते शम्स उसके पास पहुँचकर कड़क उठा कि तुम चाहे कोई क्यों न हो अब आगे न बढ़ो। तुम्हारा परिचय पाए बिना मैं तुम्हें यहाँ से जाने न दूँगा। यही राजाज्ञा है। तुम निश्चय जानती हो कि यह राजोद्यान है और कोई अपरिचित व्यक्ति बिना

आज्ञा के 'यहाँ आ नहीं सकता । तुम ठहरो, सुलतान तुमसे स्वयं इसका उत्तर लेने आ रहे हैं ।

रमणी ठहर गई और शम्स की ओर फिरकर उसने एक ऐसा रूप दिखाया कि दृष्टि पड़ते न पड़ते शम्स उस पर मुग्ध हो गया । रूप तथा यौवन के संयोग का जो प्रभाव मानव-हृदय पर पड़ता है इस अलौकिक सौंदर्य का वही प्रभाव शम्स के हृदय पर पड़ा किंतु इसमें कुवासना का लेश-मात्र नहीं था । यह बात ठीक है कि शम्स इसे देखकर मंत्रमुग्ध हो गया और मन ही मन उसने अपूर्व मूर्ति के रचयिता को अनंत धन्यवाद दिया । वह सुंदरी कुछ न बोली और चुपचाप इसके निकट खड़ी होकर एक गुलाब पुष्प की कोमल पखड़ियों को तोड़ने लगी । इस अलौकिक दृश्य तथा भाव को देखकर शम्स भी अवाकू खड़ा रह गया ।

इसी बीच गयास भी वहाँ आ पहुँचा । इस सुंदरी को देखकर उसका भी मन चंचल हो गया । किंतु इसके भाव में वह निश्छल स्वच्छता न थी जो शम्स के भाव में पाई जाती थी । कुवासना की पूर्ण दृष्टि से इसने उस सुंदरी की ओर देखा । विकार का ऐसा प्रबल वेग इसके हृदय में उठा कि, बिना विचारे कि यह कौन है, इसने अपने मन में निश्चय कर लिया कि जिस प्रकार हो मैं इसे अपनाऊँगा । ऐसा विचार आते और संकल्प दृढ़ होते कुछ देर न लगी । उसे नखशिख निरीक्षण करते हुए गयासउद्दीन ने पूछा—अपने सामने मैं

किसी हूर को देखता हूँ । यह क्या बहिशती नूर है ? देखता हूँ आज मेरे नसीब का सितारा सचमुच चमक उठा । किंतु यह जानना ज़रूरी है कि यह चाँद का टुकड़ा कहाँ से टूट पड़ा ।

रमणी—मैं सुलतान को अभिवादन करती हूँ । मेरे अपराध क्षमा हों । बिना जाने सुने मुझसे यह काम हो गया ! मैं सुलतान की बाँदी हूँ । मेरा पिता लालचीन इस दरबार का गुलाम है ।

गयास—क्या तुम्हारा ही नाम लुत्फ़ुन्निसा है ? तुम्हारा रूप देखने का मुझे सौभाग्य तो नहीं प्राप्त हुआ था, किंतु तुम्हारे रूप तथा गुण की प्रशंसा मेरे कानों तक बहुत पहले ही पहुँच चुकी थी । जो सुना था उससे बढ़कर देखने में आया । बात ठीक है । वाणी में यह सामर्थ्य कदापि नहीं कि नयनों के अनुभव को दूसरों पर प्रकट कर सके ।

गयास की बेली में विह्वलता भरी थी । लुत्फ़ुन्निसा पर इसका प्रभाव अच्छा नहीं पड़ा । सुलतान को देखकर पहले तो वह भयभीत हो गई थी किंतु उसकी बातें सुन वह लज्जित हो गई । उसका चेहरा लाल हो गया । उसकी आँखों की ओर देखने से ज्ञात हुआ कि उसके हृदय में क्रोध का भी संचार हो आया है ।

दोनों भाई रूप रंग में प्रायः समान थे । दोनों की वयस में भी थोड़ा ही अंतर था । किंतु शम्स को देखकर लुत्फ़ुन्निसा

के हृदय में जिन भावों का उदय हुआ था उनके विपरीत भावों का संचार उसके मन में गयास को देखकर हुआ ।

मन की यथार्थ अवस्था मन ही समझ सकता है । दोनों को देखते ही लुत्फुन्निसा को विश्वास हो गया कि शम्स उसे प्रेम भरी आँखों से देखता है और गयास कुवासना-जनित दृष्टि से । एक के भाव में स्वार्थ का लेश नहीं है और दूसरे का स्वार्थ से सना है । दोनों में आकाश पाताल का अंतर है । किंतु अपनी ओर सुलतान को आँख गड़ाए देख लुत्फुन्निसा नीचा मुँह कर पृथिवी की ओर देखती हुई बोली—मैं भली भाँति जानती हूँ कि मुझसे आज एक घोरतर अपराध हो गया । मेरे पिता यदि मेरी आज की करनी सुन लेंगे तो वह कभी मुझे क्षमा नहीं करेंगे । किंतु अब तो जो होना था सो हो चुका । अब मेरी यही विनीत प्रार्थना है कि मुझे यहाँ से जाने की राजाज्ञा मिले । सुलतान के न्याय की प्रशंसा घर घर व्याप रही है, मैं आज उसी की दुहाई देकर कहती हूँ वरन् भिक्षा माँगती हूँ कि मुझे यहाँ से निकल जाने का आदेश हो ।

गयास—जी तो नहीं चाहता कि तुम्हें यहाँ से जाने दूँ । मेरी इच्छा होती है कि यह उद्यान ही नहीं वरन् राजमहल भी तुम्हारे पादपद्म पर समर्पण कर दूँ । किंतु यह समय नहीं है । मैं इस विषय में तुम्हारे पिता से परामर्श करूँगा । तुम इस समय जा सकती हो । किंतु मेरी विनती यही है कि मुझे भूल न जाना ।

लुत्फुन्निसा धीरे धीरे वहाँ से चली गई। जब तक वह सामने दीख पड़ती थी, शम्स उसकी ओर देखता रहा। जब तक गयास उससे बातें कर रहा था, वह चुप खड़ा था। गयास की बातें उसे अच्छी नहीं लगती थीं। उसके जी में आता था कि संभव हो तो जान देकर भी उसे संतुष्ट करूँ। यदि शम्स किसी सिंहासन का स्वामी होता तो निस्संकोच भाव से वह उसे उसका साझी बनाता। संसार में कुछ नहीं था जिसे शम्स उसके लिये न छोड़ सकता हो। किंतु मन के भावों को उसने मन ही में छिपा लिया, किसी प्रकार उन्हें प्रकट होने न दिया। जब लुत्फुन्निसा अदृश्य हो गई, शम्स के मुँह से एक धीमी आह निकली। किंतु सौभाग्यवश गयास के कानों तक उसकी आवाज़ न पहुँची।

सुलतान और शाहज़ादे को यह जानने में कुछ कसर न रही कि लुत्फुन्निसा कौन है। यह लालचीन की एक मात्र कन्या थी। लोगों की धारणा थी कि इससे अधिक सुंदरी ललना दक्षिण भारत में दूसरी नहीं है। गुलाम की लड्डकी होने पर भी इसे उच्च शिक्षा दी गई थी। नाचने गाने, पढ़ने लिखने, सीने पिरोने में इसके समान कोई बिरला ही था। नाना प्रकार के खाद्य पदार्थों को यह अपने हाथों तैयार करती थी। अपनी भाषा में यह कविता भी करती थी। इसकी उक्तियाँ सुनकर दरबार के शायर भी कभी कभी अचंभे में आ जाते थे। हरम से लेकर बाज़ार तक इसके रूप गुण की प्रशंसा फैल गई

थी । कितने शाहजादे इससे संबंध जोड़ने को लालायित थे । एक यह भी कारण था कि लालचीन गुलामी के बंधन से विमुक्त होने के लिये इतना व्याकुल था । वह समझता था कि यदि मैं गुलामी से छूट जाऊँ तो अपनी संपत्ति द्वारा थोड़े ही दिनों में मैं अपने को एक बड़ा आदमी बना ले सकता हूँ और तब बड़े से बड़े शाहजादे और उमरा मेरी कन्या से निःसंकोच भाव से विवाह कर सकते हैं ।

आज गयास के दृष्टिपथ पर लुत्फुन्निसा पहले पहल पड़ी थी । इसके विषय में गयास ने इसके पूर्व ही सुना था । किंतु वह यह नहीं समझता था कि यह ऐसे अलौकिक रूप, अनिर्वचनीय लावण्य और अपूर्व सौंदर्य की स्वामिनी है । आज इसे देखकर वह एकदम विह्वल हो गया । आज उसका दृढ़ संकल्प हुआ कि किसी प्रकार वह इस रमणी-रत्न को अपनावे । किंतु वह पाणिग्रहण करने का इच्छुक न था ।

गयास का सर्वनाश करने ही के अभिप्राय से आज लुत्फुन्निसा राजबाटिका में भेजी गई थी । किंतु इस बात को लुत्फुन्निसा नहीं जानती थी । अपनी पत्नी से परामर्श कर लालचीन ने इसे यहाँ भेजा था । यह अपनी माँ की भेजी हुई यहाँ आई थी । लालचीन जानता था कि सुलतान अपने भाई के साथ प्रति दिन प्रभात समय बाटिका में भ्रमण करने आता है । गयास को अपने फंदे में लाने का यही उपाय लालचीन ने सोचा था और इसमें उसे सफलता प्राप्त हुई ।

दुनिया की चाल निराली है। कार्य एवं कारण का पारस्परिक संबंध विचित्र है। कौन जानता है कि क्या करने से क्या होता है, किस कार्य का क्या परिणाम होता है। मनुष्य तो सदा इसी चेष्टा में रहता है कि सुख से संसार में अपना जीवन बितावे। किंतु परिणाम को देखकर जाना जाता है कि सुख की खोज में इसे अधिकतर दुःख ही भेलना पड़ता है। यथार्थ सुख अपनी इंद्रियों के दमन करने ही में, अपनी वासना को रोकने ही में है। अनुभव से यही ज्ञात होता है, किंतु मनुष्य ऐसा कहाँ करता है। यहाँ तो हाय हाय करते करते हम लोग अपना अमूल्य समय व्यर्थ गँवाते हैं और अंत में हाथ मलकर रह जाते हैं।

गयास और शम्स के बीच आज एक रमणी आ खड़ी हुई। विमल भ्रातृस्नेह में आज एक कालिमा दिखाई देने लगी। अभी तक दोनों भाइयों का स्वार्थ एक था। किंतु आज से दोनों के लक्ष्य अलग हो गए। दोनों के स्वार्थ दो ओर परिधावित हुए। अभी तक एक की बात दूसरे से छिपी नहीं रहती थी। किंतु आज दोनों अपने मनोरथ की सिद्धि के भिन्न भिन्न उपाय सोचने लगे। दोनों अपना अपना मनमोदक अलग अलग तैयार करने लगे।

गयास ने अपने मन में स्थिर किया कि लालचीन को बुलाकर उस पर अपने मनोगत भावों को प्रकट कर और उसे विमुक्त करने का लालच देकर उसकी दुहिता को

अपने हरम में लावे । शम्स ने स्थिर किया कि लालचीन के घर जाकर उसकी कन्या से विवाह करने का प्रस्ताव करे ।

देनों भाई अपने अपने ध्यान में लीन थे, अपने अपने विचार में मग्न थे । आपस में फिर कोई बातचीत न हुई और न अधिक देर तक कोई बाटिका में ठहर सका ।

चौथा परिच्छेद

लुत्फुन्निसा के सौंदर्य का प्रभाव शम्सउद्दीन के चित्त पर इतना पड़ा कि वह आपे में न रहा। उसे विदित हुआ कि जगत्कर्त्ता ने अपनी कारीगरी का नमूना दिखाने के लिये उसे निर्माण किया है। अतएव, उसका सिद्धांत हुआ कि संसार में सब से उच्च पद पर इसे प्रतिष्ठित करना उचित है। सुंदरता के आगे जातिगौरव, आत्मगौरव, राज्यगौरव, सब के सब शम्स के मन से हट गए। उसने सोचा कि यदि मैं बाधा नहीं दूँगा, यदि अपनी सामर्थ्य के अनुसार मैं इस कार्य में हस्तक्षेप नहीं करूँगा तो गयास इसे अपना कुवासना का खिलौना बना लेगा और संभव है कि अपनी पदवृद्धि की आशा में लालचीन भी इसमें सहायता दे।

शम्स ने निश्चय जाना कि यह अलौकिक रूप आदर के लिये, यह सौंदर्य पूजा के लिये और यह लावण्य मस्तक झुकाने के लिये है। नित्य के व्यवहार में ये कदापि नहीं लाए जा सकते।

ऐसी भावना मन में आते ही शम्स ने लालचीन से भेंट करना निश्चय किया। अपनी ओर न देखकर, अपनी मर्यादा

की ओर न ध्यान देकर, अपने वंश का गौरव छोड़ वह अपने गुलाम के घर जाने पर तैयार हुआ। प्रेम की महिमा विचित्र है। इसके सामने किसी की दाल नहीं गलती। किसी में शक्ति नहीं कि इसके प्रबल प्रवाह को रोक सके और इसके मार्ग में कोई रुकावट डाल सके। इसने बड़े बड़े संयमियों का व्रत भंग किया, कठिन से कठिन योधाओं के पाषाणवत् हृदय को इसने मोम कर छोड़ा।

लालचीन के घर जाकर शम्स की आँख चकमका गई। स्वप्न में भी उसने नहीं सोचा था कि लालचीन ऐसे ऐश्वर्य सुख संपत्ति का स्वामी है। उसे ज्ञात हुआ कि वह किसी उमराव के घर आ पहुँचा है। शम्स को अपने यहाँ देखकर लालचीन अत्यंत प्रसन्न हुआ। लालचीन उसे बड़े आदर और सम्मान से एक उचित आसन देकर नाना प्रकार से सादर सत्कार कर बोला—स्वामी का तो धर्म ही है कि दास पर कृपा करें। स्वामी की कृपा से दास का सौभाग्यसूर्य सदा देदीप्यमान रहता ही है। किंतु शाहज़ादे की इस विशेष कृपा का कोई विशेष कारण है क्या? मेरा अपराध क्षमा हो, हर प्रकार सेवा करने को मैं बद्ध-परिकर हूँ। क्योंकि सेवा करना मेरा धर्म ही है और अपने धर्म से यथासाध्य मैं विमुख नहीं हो सकता।

शम्स—तुम्हारा कहना ठीक है। किंतु जिस काम के लिये आज मैं तुम्हारे निकट आया हूँ उसमें तुम्हें गुलामों की

श्रेणी में रखकर मैं अग्रसर नहीं हो सकता । मैं तुमसे निकट, अति निकट का संबंध जोड़ना चाहता हूँ । मैं तुम्हें शाह-जादों की श्रेणी में लाना चाहता हूँ । मैं तुम्हें अपना कहकर संबोधन करना चाहता हूँ ।

चकित हो शम्स की ओर देखता हुआ लालचीन बोला— किंतु मैं श्रीमान् की बातें समझ नहीं सका । क्या बात है, मैं अनुमान भी करने में असमर्थ हूँ । यदि कृपा कर अपने मनोगत भावों को और भी स्पष्ट रूप से प्रकट करने की कृपा करते तो यथासंभव मैं श्रीमान् की रुचि रखने में संकीर्णता नहीं करता ।

शम्स—बात छिपाने से क्या ? मैं सब खोलकर कहता हूँ और वही कहने आया भी हूँ । आज तुम्हारी रूप गुण की खान दुहिता को अपने उद्यान में मैंने देखा है । उसे देखकर मुझे ज्ञात हुआ कि मैं किसी स्वर्गीय अप्सरा को देख रहा हूँ । मेरी इच्छा है कि धर्मरूप से मैं उसे ग्रहण करूँ । यदि पूज्यपाद पिता वर्तमान रहते तो इस प्रस्ताव को मैं उन्हीं के द्वारा करता । किंतु आज वे नहीं हैं । मैं जानता हूँ कि कई कारणों से भाई साहब इस कार्य में मेरी सहायता नहीं करेंगे । इसी लिये लज्जा को जलाजलि देकर मुझे आपके निकट आना पड़ा और मुँह खोलकर यह प्रस्ताव करना पड़ा । आप कोई दूसरा भाव न रखिए । मैं धर्म छोड़कर अधर्म की राह पर पाँव नहीं दूँगा । आप यदि मेरे प्रस्ताव को अस्वीकार कीजिएगा

तो मैं दुखी तो अवश्य होऊँगा किंतु छल बल से अपना काम निकालने की चेष्टा नहीं करूँगा । स्पष्ट रूप से निश्छल भाव से आपसे प्रार्थना करता हूँ और आशा करता हूँ कि आप मेरे अनुरोध को मानेंगे ।

लालचीन—किंतु श्रीमान् के इस प्रस्ताव के साथ सुलतान सहमत होंगे ? क्या वे कभी पसंद करेंगे कि आप एक गुलाम के वंश में संबंध करें ? उनका कथन है कि गुलाम को सदा गुलामी की बेड़ी में पड़ा रहना चाहिए । दास का अधिकार नहीं है कि स्वप्न में स्वतंत्र होने की लालसा करे । मेरी धारणा है कि वे कभी नहीं चाहेंगे कि आप मुझसे किसी प्रकार का संबंध रखें ।

शम्स—मेरा पूर्ण अधिकार है कि जिसके साथ चाहूँ अपना विवाह करूँ । इसमें मैं सब प्रकार स्वतंत्र हूँ । उनका कोई अधिकार नहीं है कि इस काम में हस्तक्षेप करें । वे किसी प्रकार मेरे हाथ को रोक नहीं सकते । अपने पारिवारिक प्रबंध का मैं स्वतंत्र स्वामी हूँ । अपने सुख दुःख का प्रबंधकर्त्ता मैं आप ही हूँ । इसमें कोई कुछ बोल नहीं सकता । जैसे उनके राजकाज में मैं कुछ बाधा नहीं दे सकता उसी प्रकार मेरे निज के कामों में वे कोई बाधा नहीं दे सकते । मैंने अपने जी में ठान लिया है कि मैं तुम्हारी दुहिता का पाणिग्रहण करूँगा । इस काम से मुझे कोई रोक नहीं सकता । मैं केवल तुम्हारी अनुमति की प्रतीक्षा कर रहा हूँ ।

लालचीन—यह मेरे सौभाग्य का चिह्न है कि आप मुझे अपनाना चाहते हैं। स्वार्थ के वशीभूत होकर मुझे यह पूछने की आवश्यकता नहीं थी कि आपके भ्राता इसमें अपनी सम्मति देंगे वा नहीं। किंतु अपने हित के लिये मैं आपको धर्म से विमुख करना, आपके घर में कलह का बीज आरोपण करना नहीं चाहता। आपके वंश का मैं पुराना चाकर हूँ, स्वप्न में भी मेरी यह इच्छा नहीं हो सकती कि मेरे अथवा मेरे घरवालों के कारण आपको अथवा आपके घर में किसी को कुछ कष्ट हो। आपकी आज्ञा मुझे शिरोधार्य है। किंतु हानि लाभ आप स्वयं विचार लीजिए। उतावला होकर सहसा कोई काम कर देने से पीछे पड़ताना पड़ता है। अभी कुछ बिगड़ा नहीं है; मन स्थिर कर, सब बातों पर पूरा ध्यान देकर, आप परिणाम को सोच लीजिए और फिर जैसा कहिएगा वैसा किया जायगा। इसी बीच मैं अपने घर में भी इसका परामर्श कर लूँगा। इन सब कामों में जल्दी नहीं करनी चाहिए।

शम्स—आप जैसा कहते हैं वैसा ही होगा। किंतु क्या सुलतान मेरे अनुरोध से आपको मुक्त नहीं कर देंगे ? क्या बे भाई की एक ज़री सी बात नहीं मानेंगे ? पहले मैं आपको दासत्व की बेड़ी से छुड़ाऊँगा, फिर आपसे संबंध जोड़ूँगा।

लालचीन—मैं इस विषय में कुछ नहीं कह सकता। किंतु आप जितना सहज यह काम समझते हैं उतना सहज नहीं है। मुझे यही बोध होता है।

शम्स—देखा जायगा । किंतु आप अपनी ओर से भी यथासाध्य चेष्टा कीजिएगा । मैं इस समय जाना चाहता हूँ ।

लालचीन—यह दास क्या कह सकता है ? मेरा घर आज पवित्र हुआ । मैं आज अपने को धन्य मानता हूँ ।

पाँचवाँ परिच्छेद

अंकुरित होते ही मनुष्य बिरवे का सहज में विनाश कर सकता है, किंतु जब वह समय का सहारा पाकर शाखा प्रशाखा से परिपूर्ण विशाल विटप हो जाता है तब उसको गिराना कठिन ही नहीं बरन् असंभव हो जाता है। अग्निकण प्रारंभ में सहज ही दो बूँद जल से बुझ जाता है, किंतु पवन का सहारा पा जब वह भीषण रूप धारण कर लेता है तब जो सामने पाता है उसे दग्ध तथा भस्म करने लगता है; तब उसकी ज्वाला दूर करने की सामर्थ्य कूप, ताल, नदी में भी नहीं रह जाती। इसी प्रकार मनुष्य, आदि में, यत्न करने पर लोभ को संवरण कर सकता है; किंतु कुवासना तथा कुविचारों का सहारा पाकर जब वह प्रबल हो जाता है तब उसके हटाने की शक्ति मनुष्य में नहीं रह जाती। यही दशा आज लालचीन की है। इस समय उसका मन असमंजस में पड़ गया है। बहुत चेष्टा करने पर भी वह अपना आंगे का कर्तव्य ठीक नहीं कर सकता है। इसी से वह अकेला अपनी वाटिका में मन बहलाने आया। यहाँ की सायंकालीन शोभा अनिर्वचनीय थी। किंतु इसका प्रभाव उस पर नहीं पड़ा। उसका चित्त चंचल ही रहा। चिंता ने उसका पीछा यहाँ भी नहीं छोड़ा। मन का उद्वेग बढ़ता ही गया। कुछ देर तक इधर उधर घूमने फिरने

के पश्चात् वह सुंदर बावली के किनारे एक सुचिक्कण शिला-खंड पर बैठ गया और मन ही मन सोचने लगा कि क्या करूँ । किस प्रकार गयास से पलटा लूँ ? जितना किया उसमें तो आशातीत सफलता प्राप्त हुई । किंतु आगे क्योंकर इस काम को पूरा करूँ ? हाय हाय ! प्राण संकट में पड़ गए हैं, बुद्धि चक्कर में पड़ गई, समझ में नहीं आता, क्या करूँ । एक ओर मान-मर्यादा, धन-संपत्ति, प्रतिष्ठा, प्रभुत्व-स्वतंत्रता को देखता हूँ और दूसरी ओर सत्य को । एक ओर लोभ खींच रहा है और दूसरी ओर धर्म । दिल तो एक है, दो नहीं । मन में एक समय एक ही वस्तु को स्थान दिया जा सकता है, दो को नहीं । तब क्या करूँ ? गयास के वंश का मैं पुराना दास हूँ । उसके विरुद्ध कोई काम करना मुझे उचित नहीं है । उसकी हानि करने से मेरा कभी भला नहीं होगा । जिसके अन्न से इतने दिनों तक देह पली, जिसके नमक का खून आज भी मेरी नस नस में दौड़ रहा है, उसका अनिष्ट करना क्या मेरे लिये उचित है ? तब क्या शम्स इस खानदान का नहीं है ? जिस बाप की गोद में गयास पला है उसी बाप की गोद में शम्स भी तो पला है । जिस माँ ने गयास को दूध पिलाया उसी ने तो शम्स को भी पयपान कराया । क्या एक इस वंश का है और दूसरा नहीं ? क्या दो चार दिन पहले इस धरातल पर पदार्पण करने के कारण एक सदा के लिये दूसरे का मुँह जोहा करेगा ? दूसरे के आसरे अपना जीवन निर्वाह करेगा ? एक

को पिता ने सिंहासन दिया, इससे क्या दूसरा सतत उसका दास बना रहेगा ? किसी पर किसी के राज्य करने का क्या अधिकार है ? शम्स को मैं जब राज्यपद दे सकता हूँ तब क्यों नहीं देता ? किंतु इन दोनों भाइयों का भगड़ा मैं अपने माथे क्यों लेता हूँ ? क्या शम्स की भलाई के लिये ? नहीं, नहीं, अपने लाभ के लिये । शम्स यदि राजा होगा तो मैं स्वतंत्र हो जाऊँगा और मेरी दुहिता रानी हो जायगी । स्वतंत्रता की वेदी पर मैं सब कुछ बलि दे सकता हूँ । किसी को अधिकार नहीं है कि तर्क द्वारा किसी को गुलाम बनावे । मनुष्य स्वभावतः स्वतंत्र और स्वाधीन है और मैं इस नियम का कुछ अपवाद नहीं हूँ । दयामय परमात्मा ने मनुष्य मात्र को स्वतंत्र बनाया है । तब कोई मनुष्य मुझे बंधन में क्यों रखेगा ? मैं समझता हूँ कि गयास में यह सामर्थ्य नहीं है कि ईश्वरीय नियम का उल्लंघन कर मुझे अपने बंधन में रखे और सदा के लिये मुझे गुलाम बनावे । गयास जो समझे किंतु मेरी धारणा है कि स्वतंत्रता से मनुष्य कभी नहीं बिगड़ सकता । यदि गयास सीधी राह से मुझे स्वतंत्रता नहीं देता है तो मैं अपनी बुद्धि को काम में क्यों न लाऊँगा ? अपने बल का प्रयोग क्यों नहीं करूँगा ? अपनी शक्तियों का मैं हनन न करूँगा । इसमें गयास की कुछ हानि हो तो हो, किंतु मुझे क्या अधिकार है कि राजनैतिक विषयों में हस्तक्षेप करूँ ? क्यों! ? यह तो सभी मानते हैं कि मनुष्य स्वभावतः राजनैतिक जीव है । यदि

मनुष्य का राजनीति से संपर्क न रहे तो समाज और साम्राज्य का संगठन असंभव हो जाय । जब मनुष्यों ने आदिकाल में एकमत होकर शासन का भार एक वा अनेक मनुष्यों को समर्पित किया तभी से उन्होंने राजनीति के प्रांगण में पदार्पण किया । जब तक समाज है, राष्ट्र है, शासनपद्धति है, राजा और प्रजा का भेद है तब तक जन्म से मरणकाल-पर्यंत राजनीति मनुष्य के साथ उसके प्रत्येक कार्य में, बात में, चेष्टा में वर्तमान है और रहेगी । राजनीति का बीज मनुष्य के हृदय में जन्म ही से आरोपित रहता है अतएव मनुष्य को राजनीति से अलग रखने की चेष्टा करना वैसा ही है जैसा मीन को नीर से । तब मैं राजनीति की बातें क्यों न विचारूँ ? जब तक इस ओर मेरा ध्यान नहीं गया था, सुषुप्त सिंह सा मैं निश्चित पड़ा था । किंतु एक बार मुझे लात मारकर जब गयासउद्दीन ने जगा दिया तब तो उसे अवश्य ही मेरा सामना करना पड़ेगा । अपने किए का फल उसे अवश्य भोगना पड़ेगा । उसे उचित था कि वह अलौकिक बुद्धि का आदर करता किंतु जब उसने ऐसा न किया तब मैं अपनी उस बुद्धि को उसके प्रतिकूल व्यवहार में क्यों न लाऊँ । जिसके द्वारा उसे लाभ होता उसी के द्वारा अब उसे हानि उठानी पड़ेगी । आज तक जिस प्रकार मैं उसकी सहायता तथा सेवा करता था उसी प्रकार मैं उसके विध्वंस का उपाय सोचूँगा । अब देखना है कि कै दिन वह सुख से राज करता है । यदि उसका

राज्यसिंहासन जड़ से हिला न दिया तो मेरा नाम लालचीन नहीं । लोग कहते हैं कि गयासउद्दीन का राज्य सुराज्य है । किंतु मुझे उससे क्या लाभ हुआ ? यदि शासन करनेवाला अपने अधीन व्यक्ति को सब प्रकार उसके योग्यतानुसार सभ्यता में ऊँचा चढ़ाने का उद्योग न करे तो वह अपने कर्त्तव्य से च्युत होता है । किंतु मेरे साथ गयास का इसके विपरीत आचरण हुआ, इससे उसे तो अब दुःख भोगना ही पड़ेगा । गयास को मुझे सिखलाना है कि शासकों में ईमानदारी एवं दया हेतु ही से शासितों में राजभक्ति, शांति तथा आदर उत्पन्न होते हैं । लोगों के देखते देखते गयास को सिंहासन से गिराकर शम्स को मैं सिंहासनारूढ़ करूँगा । क्योंकि शम्स का राज्य मेरे लिये स्वराज्य सा होगा, और सुराज्य स्वराज्य के समान कभी नहीं हो सकता । किंतु मैं हूँ क्या ? क्यों नहीं ? आज तो मैं असीम संपत्ति का अधिकारी, अनंत बुद्धि, प्रचुर विद्या तथा यथेष्ट बल का स्वामी हूँ । उन सबका प्रयोग गयास के अनिष्ट-साधन के लिये करूँगा । आज तो मैं वह असहाय, दीन, मलिन, दरिद्र गुलाम नहीं हूँ जो गयास के पिता के शासनकाल में दक्षिण प्रदेश में आया था । दयासागर परमात्मा की असीम अनुकंपा से अब तो सब दुःख दूर हो गए । रही एक स्वाधीनता, उसे जिस प्रकार हो प्राप्त ही करना होगा । स्वाधीनता के बिना मन, बुद्धि तथा हृदय का विकास हो ही नहीं सकता । स्वाधीनता बिना मेरा अभ्युदय कदापि नहीं

होगा । संसार का यह नियम नहीं है कि जो जहाँ है वहीं रह जाय । यदि आगे बढ़ने में मैं यत्नशील न होऊँगा तो अवश्य ही मुझे पीछे हटना पड़ेगा । जाल तो फैला दिया, एक चिड़िया फँस भी गई । अब दूसरी को फँसाना है । संभव है कि इसका प्रभाव गयास पर न पड़ा हो । देखें वह क्या कहता है । यदि मेरा अनुमान ठीक निकला तो एक ही बार में दोनों को गिरा दूँगा । इसके पूर्व कि वह अपने को सम्हाल सके, अपनी यथार्थ अवस्था का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर सके, उसे आस्मान देखना पड़ेगा । शम्स तो अब मेरी मुट्ठी से बाहर नहीं निकल सकता । जो कहूँगा वही करेगा । किंतु बहुत सोच विचार-कर बहुत सावधानी से उससे काम लेना होगा । उसी के द्वारा गयास को भी शासित करना है । यदि भगवान् की ऐसी ही दया बनी रही तो बिना परिश्रम के ही मेरी मनोकामना सिद्ध हो जायगी । अब आगे का उपाय सोचना चाहिए । घरवाली की भी बुद्धि धन्य है । अहा ! उसने कैसा सहज उपाय निकाला । पूरी आशा है कि आगे की सब बातें उसने ठीक कर ली हैं । आगा पीछा करना अब व्यर्थ है । अब तो जो होना था, हो चुका । पासा एक बार डाल चुके तब हार-जीत की चिंता व्यर्थ है ।

छठा परिच्छेद

श्वेत-मर्मर-पाषाण-निर्मित सुंदर बारहदरी में गयास अकेला बैठा है। कुछ दूर पर एक खोजा खड़ा है और कहीं कोई नहीं है। गयास कभी स्तंभ में बने गुल्म लता फूल फल तथा चिड़ियों को देखता, कभी छत के चित्रित विविध रंगों से रंजित प्राचीन ऐतिहासिक विचित्र चित्रों को देखता, कभी अपने पैरों के नीचे पत्थर के फर्श को निहारता, कभी सामने के फौआरे पर दृष्टि डालता, कभी पुष्प-विटपों की सुंदरता का निरीक्षण करता था। किंतु यथार्थ में एक मुहूर्त भी उसका ध्यान स्थिर नहीं रहता था। किसी प्रकार उसके मन का उद्वेग शांत नहीं होता था। रह रहकर लालचीन की सुंदर तनया उसके स्मृतिपथ पर आ जाती थी। भुलाने से भी उसकी सलोनी सूरत भूलती न थी। वह कामताप से पीड़ित होने के कारण यहाँ अकेले में आ बैठा था। किंतु यहाँ आने से उसकी चिंता और अधिक बढ़ गई थी। इस समय वह लालचीन की बाट जोह रहा था।

मन के विशेष चंचल होने के कारण उसे अपनी अवस्था की निःसारता पर ध्यान आया। मन ही मन उसने सोचा कि मैं क्या हूँ। बाहरी लोग समझते हैं कि मैं बहुत सुखी हूँ। धन-संपत्ति से संपन्न होने के कारण मुझे किसी बात की चिंता

नहीं है। शाहंशाह होने के कारण मुझे संसार में कोई दुःख नहीं है। फिरदौस का नक़्शा मेरे सामने है। स्वर्ग का सुख मुझे यहीं प्राप्त है। सुख की कोई सामग्री नहीं है जो मुझे सहज में हस्तगत न हो सके। अतएव लोग जानते हैं कि दक्षिण देश में मुझसे बढ़कर सुखी कोई नहीं हैं। किंतु अपनी यथार्थ अवस्था का ध्यान आने से मुझे कितना दुःख होता है। दिन रात दूसरे के लिये चिंता में निमग्न रहना, दूसरे की रुचि के अनुसार अपनी वेष-भूषा रखना, वस्त्राभरण पहनना। साधारण रीति से इस समय भी मेरे शरीर पर जो वस्त्र हैं यदि वे बेच दिए जायँ तो अकाल-पीड़ित सहस्र परिवार एक वर्ष तक यथेष्ट भोजन पा सकें। लोगों की धारणा है कि अपने इच्छानुसार मैं अपने पर इतना व्यय करता हूँ। किंतु यदि लोग मेरे हृदय को खोलकर देखते तो उन्हें ज्ञात होता कि इनसे मुझे तनिक भी सुख नहीं मिलता। मुझे सदा ये भार ही से प्रतीत होते हैं। यदि ये सब मेरे निकट न होते तो मैं कहीं सुखी रहता। मुझे अपनी प्रजा को संतुष्ट करने के लिये इनका संग्रह करना पड़ता है, कुछ अपनी तृप्ति के लिये नहीं। यथार्थ में प्रजा के हाथों में मैं एक बँधुआ हूँ। वे जैसा चाहते हैं मुझे चलाते हैं, जो इच्छा करते हैं वही कराते हैं, जो नाच चाहते हैं वही नचाते हैं। मुझे उन सबों ने सिंहासन की जंजीर में बाँध रक्खा है। अपने आनंद के लिये, अपनी तृप्ति के लिये वे मुझे नाना प्रकार के वस्त्राभूषणों से सुसज्जित कर दरबार में, नगर में,

देशी-विदेशियों के समस्त पुतला जैसा दिखाते हैं। किसके सुख के लिये, मेरे या अपने ?—कभी कभी पीड़ा से जब माथा फटा करता है तब भी अपनी प्रजा की तृप्ति के लिये मुकुट का भार मुझे वहन करना ही पड़ता है। भूख न रहने पर भी दूसरों के आज्ञानुसार अनेकानेक भोजन करने पड़ते हैं। नोंद न आने पर भी सोना पड़ता और मन के दुःखित, चिंतित तथा खिन्न रहने पर भी दूसरों के लिये मुझे आमोद-प्रमोद रास-रंग में सम्मिलित होना पड़ता है। हाय ! नरेशों का यह दुःख कौन जानता है ? हम लोगों को निज का सुख दुःख कुछ नहीं है। हम लोगों को अपनी रुचि अरुचि कुछ नहीं है। अपने मान अपमान की ओर हम लोगों को ध्यान देने का अवसर नहीं मिलता। मनुष्य होने पर भी हम लोग काठ के पुतले हैं। मानव-शरीर रखकर भी हम लोग पाषाण-खंड हैं। हम लोग जब चाहें तब बोल नहीं सकते, जहाँ चाहें वहाँ जा नहीं सकते, जो चाहें कर नहीं सकते। हम लोगों के नाम पर राज्य में हज़ारों अन्याय हुआ करते हैं, लाखों निर्दोषी पीड़ित किए जाते हैं, सहस्रों दुष्ट स्वच्छंदता के साथ दूसरों को दुःख पहुँचाया करते हैं। किंतु हम लोगों को उसके जानने का कोई उपाय नहीं है और न हम लोग उसके हटाने में समर्थ ही हैं। तब राज करने से क्या लाभ ? राजा होने में क्या सुख ? संभव नहीं कि अपने किसी प्रबंध से हम लोग सबको सुख पहुँचा सकें और सबको संतुष्ट

कर सकें। सदा कितने षड्यंत्र राजा के विरुद्ध रचे जाते हैं। पग पग पर हम लोगों को भय ही रहता है। किंतु हम लोगों को इसका पता नहीं रहता। संसार में हम लोगों का कोई हित मित्र भी नहीं होता। सब के सब अपने स्वार्थ के लिये हम लोगों से नाता जोड़ा करते हैं। दिल खेलकर निश्छल भाव से कोई हम लोगों से यथार्थ बात नहीं करता। सबकी चेष्टा हम लोगों की आँखों में धूल ही भोंकने की रहती है। मिथ्या प्रशंसा से हम लोगों का मन कलुषित, बुद्धि मंद और हृदय दुर्बल कर दिया जाता है। सारा जीवन हम लोगों का भ्रम एवं भ्रांति ही में बीत जाता है। सत्य-मिथ्या में कभी हम लोगों को भेद नहीं जान पड़ता। भला ऐसा जीवन किस प्रकार सुखमय हो सकता है ? ऐसे जीवन को प्रकृत जीवन कैसे कह सकते हैं ? ऐसे अस्वाभाविक जीवन का भार वहन कर मनुष्य क्योंकर सुखी हो सकता है ? मेरी एक दरिद्र प्रजा भी इस समय मुझसे कहीं सुखी है। किंतु अपने मन के भ्रुव को मैं किस पर प्रकट करूँ ? ऐसा कौन है जो मेरी बातों को सुनकर मुझसे अकपट सहानुभूति दिखावेगा ? जिससे कुछ भेद की बात कहूँगा वही अपना मतलब गाँठने लगेगा। कल से मुझे कितनी मानसिक वेदना हो रही है, कोई क्या इसके जानने की इच्छा करता है ? क्या किसी को इसकी परवाह है ? परंतु जो हो ! अब तो किसी प्रकार छल-बल से लालचीन की पुत्री को अपनाना ही होगा। उसके

बिना तो अब किसी प्रकार चैन नहीं मिल सकता । यह जीवन भार सा बोध होता है । अहा ! उसकी कैसी भोली सी सूरत है । अंग अंग से सौंदर्य टपकता है, मानों मूर्त्तिमान् रूप है । उसकी नस नस में लावण्य भरा है । रोम रोम में माधुर्य दीख पड़ता है । उसका एक एक कटाक्ष बलात् मन को अपनी ओर खींच लेता है । एक बार देखने पर संभव नहीं कि उसकी मनोहर मूर्त्ति आँखों में न बस जाय । जहाँ तक सुनने में आया है, इस दक्षिण भारत में उसकी समता करने-वाली एक भी सुंदरी नहीं है । जिसके हाथ वह लग जाय उसे यहाँ स्वर्ग का सुख प्राप्त हो । हूर की बात किताबों ही में मिलती है, किंतु हूर भी इससे अधिक सुंदर न होती होगी । जान पड़ता है कि जगत्कर्त्ता ने त्रिभुवन-विजय करने ही के लिये इसकी सृष्टि की है । किंतु यह अमूल्य रत्न गुलाम के घर कैसे ? गड़ही में कमलिनी क्योंकर खिली ? कीच में मुक्ता क्योंकर गिरा ? लालचीन के घर यह ज्योति कहाँ से प्रकट हुई ? जो शाहंशाहीं को शोभा देती वह एक क्षुद्र गुलाम की क्योंकर हुई ? जिसके पैरों पर आज सारा दक्षिण भारत अपना सिर झुका रहा है उसे क्या इस स्वर्गीय रत्न के लिये एक गुलाम के सामने हाथ पसारना पड़ेगा ? जिसे कल ही इतना नीचा दिखाया उसके सामने क्या आज ही नीचा होना पड़ेगा ? किंतु उपाय ? इसका उपाय ही क्या है ? इधर उसके बिना चैन मिलना कठिन ही नहीं वरन्

असंभव है, उधर लालचीन के सामने मुँह खोले—हाथ पसारे—बिना काम चलने ही का नहीं। क्या करूँ ? परंतु लालचीन के आने में इतनी देर क्यों हो रही है ? जो उसे बुलाने गया अभी तक लौटकर क्यों नहीं आया ? क्या किसी दूसरे को भेजूँ ? भला वह सामने से कौन आ रहा है ? दो आदमी साथ हैं। हो सकता है कि लालचीन ही हो। किंतु इन्हें सामने देखकर मेरी बाईं आँख क्यों फड़कने लगी ? यह तो अशुभ लक्षण है। तब क्या मेरी वासना पूरी न होगी ? यह अप्सरा-विनिंदक रमणी मेरे हाथ न आवेगी ? या खुदा, इस काम में तू मेरी मदद कर। जान जाय तो जाय किंतु उसे अपना तो अवश्य होगा।

गयास आगे कुछ सोच न सका क्योंकि लालचीन अभिवादन करता हुआ सामने पहुँच गया। उसके आनन से पूरी गंभीरता झलक रही थी। उसका मुखमंडल अतल सागर जैसा शांत था। गयास के सामने घुटनों के बल बैठ, हाथ जोड़कर, सादर नम्र भाव से उसने कहा—असमय दास की क्यों पुकार हुई ? क्या कोई विशेष कार्य है ? जो आज्ञा हो उसे पालन करने का उपाय किया जाय।

गयास—लालचीन, तुम्हारी कारगुजारी की ओर हम लोगों का पूरा ध्यान है। कल जो कुछ तुमसे कहा गया था, जान पड़ता है कि, उसका प्रभाव तुम पर अच्छा नहीं पड़ा। सच तो यह है कि हम लोग बहुत दिनों से सोच रहे हैं कि

तुम्हारे पद की वृद्धि की जाय। वैसे तुम चाहे जो समझो, किंतु हम लोग किसी प्रकार तुम्हारा जी दुखाना नहीं चाहते।

लाल—प्रभु का धर्म ही है कि दास पर सदा दया करें। किंतु इस अपार कृपा का विशेष कारण क्या यह गुलाम सुन सकता है ? इन्हीं कई घंटों के बीच बादशाह सलामत के विचारों में इस प्रकार का परिवर्तन क्यों हो आया, यह बात मेरी समझ के बाहर है।

गयास—मैं चाहता हूँ कि तुम्हारी बुद्धि के अनुसार तुम्हारे पद की वृद्धि करूँ।

लाल—आप जो कहें वह सब शिरोधार्य है और आपकी यह उदारता अत्यंत प्रशंसनीय है क्योंकि उदार नीति ही शासन की सच्ची नीति है। आपकी इस असीम दया के लिये मैं आपको हार्दिक धन्यवाद भी देता हूँ क्योंकि विज्ञ लोगों का कथन है कि नरेश में दया एक असाधारण गुण है। दया से प्रजा में प्रगाढ़ प्रेम, न्याय से शासन की स्थिरता और उदारता से राजभक्ति की मात्रा निस्सीम वृद्धि पाती है, और इसके विपरीत कठोरता से अशांति, बल-प्रयोग से राज्यक्रांति तथा दमन-नीति से अराजकता फैलती है। अतएव आपका यह दयापूर्ण और उदार बर्ताव आपके सुशासन का परिचय देता है। किंतु यह जानने के लिये मेरे प्राण व्याकुल हो रहे हैं कि आपके विचार में अकस्मात् ऐसा परिवर्तन क्योंकर हो गया।

गयास—मैं जो तुम्हारे लिये नहीं कर सका वह तुम्हारी दुहिता के लिये करने को तैयार हूँ। गुलामी की बेड़ी हटाकर आज से मैं तुम्हें अपने दरबार में स्वतंत्र देखा चाहता हूँ।

लाल—स्वाधीनता से बढ़कर तो संसार में कोई न्यामत नहीं है, क्योंकि पराधीनता पतन की सूचना है और स्वाधीनता अभ्युदय की। और यह भी एक अटल ही सिद्धांत है कि दुनिया में किसी को किसी की स्वतंत्रता हरण करने का अधिकार कदापि नहीं है और विशेषतः इस भारतवर्ष में तो (जहाँ तक इतिहास के देखने से ज्ञात होता है) कोई परतंत्र होता ही नहीं था, क्योंकि यूनानी यात्री मेगस्थनीज़ ने साफ़ शब्दों में लिखा है कि—“भारत में गुलाम नहीं पाए जाते, किसी की स्वतंत्रता को हरण करना महापाप समझा जाता है। और न किसी का अधिकार है कि दूसरे को अपने बस में रखकर नीचा बनावे। बंधन से छूटने का दूसरा नाम इनके यहाँ मोक्ष वा मुक्ति है।” अतएव यहाँ पर आकर तो हम लोगों को गुलामी की बात ही भूल जानी चाहिए। खैर, जो आज भी इतने दिनों के बाद श्रीमान् का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ और इस दीन के सुख का सामान सोचा गया यह भी मेरे कम सौभाग्य का चिह्न नहीं है, क्योंकि जो काम जब हो जाय तभी अच्छा है। अस्तु, आप निश्चय जानिए कि देर होने पर भी इस पुरस्कार के लिये मैं कुछ

कम कृतज्ञ नहीं हूँ। किंतु मेरी समझ में एक बात नहीं आई कि इस संबंध में श्रीमुख से मेरी पुत्री का नाम क्यों निकला।

गयास सहज में इस प्रश्न का उत्तर न दे सका। वह बड़े असमंजस में पड़ गया। उसे आशा न थी कि छूटते ही लालचीन उससे ऐसा प्रश्न पूछ बैठेगा।

अब लालचीन से कोई बात छिपी न रही। वह सब कुछ समझ गया। परंतु गयास की यथार्थ अवस्था और अभिरुचि का पता लगाने के लिये उसका ऐसा प्रश्न हुआ था। अतएव गयास को बहुत देर तक चुप देखकर लालचीन ने फिर कहा—नाथ ! इस दास से कुछ अपराध हुआ क्या ? प्रश्न के उत्तर से लालचीन वंचित क्यों रक्खा जाता है ?

गयास—तुमसे साफ़ कहना होगा क्या ? तो सुनो, संसार में सब चीजों का दाम होता है। अतएव तुम्हें मुक्त करने के विनिमय में भी तुमसे कुछ माँगना चाहता हूँ।

लाल—गुलाम की सब चीजें इसी दरबार की हैं। जो आज्ञा हो सामने धर दूँ। इसमें माँगने और न माँगने की कौन सी बात है ?

गयास—तुम्हारी अनंत संपत्ति में से मैं केवल एक रत्न लेना चाहता हूँ।

लाल—जो आज्ञा हो।

गयास—तुम्हारी दुहिता जो रूप-गुण की खान है।

लाल—समझ गया। पर वह तो गुलाम की लड़की है।
बादशाह के योग्य कदापि नहीं हो सकती।

गयास—तुम भूलते हो।

लाल—क्या दरबार के अमीर उमरा इस बात को पसंद करेंगे ?

गयास—मैं उससे विवाह न करूँगा। इसमें उन्हें क्या आपत्ति है !

लालचीन सहम उठा। उसका कलेजा मुँह को आ गया।
मारे क्रोध के उसका हृदय धधकने लगा। मुँह लाल हो आया
किंतु अपने को सन्हालकर वह चुप रह गया।

गयास ने मुस्कुराकर पूछा—लालचीन, क्या सोच रहे
हो ? तुम्हारी कन्या को गयासउद्दीन अपने हरम में क्या
आश्रय नहीं दे सकता ?

लाल—निश्चय दे सकते हैं। उससे बढ़कर हजारों सुंदरियाँ
आपके पैरों पर लोट रही हैं। परंतु मुझे भय होता है कि
इस गुलाम की लड़की इस सौभाग्य एवं सुख को पसंद न
करेगी। और हो सकता है कि यह गुलाम ...

गयास—समझ गया, तुम अपनी कन्या को समर्पण
करना नहीं चाहते। लालचीन, तुम जानते हो कि किसके
सामने तुम बातें कर रहे हो ?

लाल—खूब जानता हूँ। दीन-दुनिया के मालिक सुल-
तान गयासउद्दीन के सामने। विस्तृत दक्षिण भारत के

बादशाह के सामने । इस विशाल साम्राज्य की असंख्य प्रजा के विधाता के सामने ।

गयास—मेरे स्वभाव को तुम जानते हो । एक बार जब अपनी इच्छा मैं प्रकाश कर चुका तब किसी प्रकार उसे कार्य में परिणत ही करना होगा । सावधान हो जाओ ।

लाल—इस दास के प्रति यह निग्रह क्यों ? इस गुलाम का सुख-स्वप्न हुआ, जूर एक निःश्वास में शेष कर सकते हैं । किंतु प्राणाधिक कन्या इस हतभाग्य की जीवन-यात्रा का ध्रुवतारा है । मैं लुत्फुन्निसा को एक सामान्य क्रीड़ा के उपयुक्त नहीं समझता । हो सकता है कि यह मेरी भूल हो । जहाँपनाह ! अपराध क्षमा हो, आप सबसे श्रेष्ठ हैं । आपको अधिकार है कि गुलाम को जहाँ तक चाहें नीचा दिखावें । किंतु मैं इसमें किसी प्रकार आपकी सहायता नहीं कर सकता ।

गयास—अच्छा । तब यही होगा । मैं लुत्फुन्निसा को चाहता हूँ । वह परम सुंदरी है । जिस प्रकार होगा, मैं उसे अपनाऊँगा । देखें, तुम कैसे बाधा दे सकते हो ?

लाल—ऐसा न करके श्रीमान् यह भी तो कर सकते हैं कि अपने दरबारियों को राज़ी कर धर्मपूर्वक उससे संबंध करें ।

गयास—हो सकता है । किंतु लोग क्या कहेंगे ? लुत्फुन्निसा को मैं दिल से चाहता हूँ सही, परंतु उसके लिये अपने प्रजा-समूह को असंतुष्ट करने पर मैं प्रस्तुत नहीं हूँ ।

लाल—तब ?

गयास—तब क्या ? मन को दृढ़ करो । यह काम किसी प्रकार करना ही होगा । तुम्हारे ऐसे अपदार्थ का गयास भय नहीं करता । अभी बलपूर्वक मैं लुत्फुन्निसा को अपने हरम में खींच ला सकता हूँ । किंतु मैं ऐसा करना नहीं चाहता । तुमसे माँगकर लुत्फुन्निसा को लेने में जो आनंद है, उसका मैं उपभोग करना चाहता हूँ ।

लाल—इस दरबार का सबसे प्रतिष्ठित उमरा धर्मरूप से उसका पाणिग्रहण करना चाहता है ।

गयास—किंतु वह दक्षिण भारत का बादशाह तो नहीं है ?

लाल—किंतु धर्म-विरुद्ध आचरण अच्छा नहीं है ।

गयास—सुख के सामने धर्म और अधर्म क्या ?

लाल—जो हो, इस समय इस प्रस्ताव के विषय में मैं अधिक कहने पर प्रस्तुत नहीं हूँ । मुझे समय मिले । अपने घर जाकर दूसरों से इस विषय में परामर्श करूँ । और जो निश्चय हो उसका संवाद यथासमय श्रीचरणों में निवेदन करूँ ।

गयास—अच्छा, इस समय तुम जा सकते हो । किंतु याद रहे कि मेरे प्रस्ताव के स्वीकार करने ही में मेरा और तुम्हारा दोनों का कल्याण है ।

लाल—यह तो देखता हूँ । किंतु जहाँपनाह भी पुनः विचार करेंगे ।

गयास—मेरा संकल्प दृढ़ है ।

बिना कुछ उत्तर दिए, विनोत भाव से अभिवादन कर, लालचीन ने वहाँ से प्रस्थान किया । किंतु इस अपमान को वह सह न सका ।

सातवाँ परिच्छेद

चोट खाकर भुजंग जैसे दुःख एवं क्रोध से विह्वल हो जाता है, पूँछ दबने पर जिस प्रकार मृगराज अधीर हो जाता है, शिकार छूटने पर जिस प्रकार गरुड़ आपे से बाहर हो जाता है, उसी प्रकार लालचीन दुःख, क्रोध, चंचलता एवं चिंता का खिलौना बनकर अकेला अपने शयनागार में बिछौने पर पड़ गया। उसने किसी से कुछ नहीं कहा। किंतु उसे देखकर उसके दास-दासियों को ऐसा अनुमान हुआ कि आज कोई विशेष कारण अवश्य है, नहीं तो स्वामी के मुख-मंडल पर विषाद की रेखा क्यों दीख पड़ती है। बात यह थी कि चेष्टा करने पर भी लालचीन अपने मनोगत भाव को छिपा न सका। जो अपमान-सूचक प्रस्ताव उसने गयास-उद्दीन से सुना था उसे धीरतापूर्वक सहने की शक्ति उसमें नहीं थी। अतएव उसके हृदय के विविध भाव उसके आनन पर प्रदर्शित होने लगे। किसी ने लालचीन से कुछ पूछने का साहस नहीं किया। किंतु एक दासी ने जाकर अंतःपुर में उसकी पत्नी को संवाद दिया कि लालचीन पीड़ित सा दीखता है। यह बात सुनकर उसी के साथ, भीतर ही भीतर, उसकी भार्या उसके पास पहुँच गई। अपने स्वामी की यह विचित्र दशा देखकर उसने दासी को वहाँ से हटा दिया और

उसके निकट पहुँचकर पूछा—आज क्या कोई विशेष कारण है ? कहाँ से आते हैं ? आपकी कांति ऐसी मलिन क्यों हो रही है ? मुँह पीला क्यों पड़ गया है ? आप इस प्रकार चिंताग्रस्त क्यों दीखते हैं ?

लालचीन—गयास ने आज जो बातें कहीं वे मेरे हृदय में तीर सी छिद गईं । उन्हें सुनकर मेरे कलेजे पर नागिन लोट गई ।

कुलसुम—क्यों ? क्या कोई नई बात हुई है ?

लाल—लुत्फुन्निसा को गयास ने अपने उद्यान में देखा है । उसे वह अपनाना चाहता है किंतु धर्मभाव से नहीं, अधर्म भाव से । मैं नहीं कह सकता कि लुत्फुन्निसा को वहाँ आज भेजना अच्छा हुआ या नहीं ।

कुलसुम—उसने क्या कहा है ?

लाल—वह कहता है कि यदि मैं लुत्फुन्निसा को उसके हाथों में समर्पण कर दूँ तो वह मुझे गुलामी के बंधन से विमुक्त कर दे ।

कुलसुम—मुक्ति का दाम बड़ा कड़ा है । खैर, तुमने कहा क्या ? कहीं एकदम अस्वीकार तो नहीं किया ?

लाल—उसका प्रस्ताव सुनकर मेरी देह में आग लग गई । जी में आया कि उसका मुँह नोच लूँ, उसके मुँह पर थूक दूँ । उसे पददलित कर वहाँ से चला आऊँ । किंतु किसी प्रकार अपने को रोककर शांत भाव से मैंने कहा कि घर में परामर्श करने के बाद इसका उत्तर दूँगा ।

कुलसुम—खूब किया । जल्दी करने से काम सदा बिगड़ता है । खीस में आकर कोई काम करना अच्छा नहीं है । यदि अमृत देने से कोई मरे तो विष देने का क्या काम ? शिकार जाल में फँस गया है, अब उसकी गर्दन पर छुरी फेरनी बाकी है । ज़रा सी बात में आप इतना घबड़ा क्यों जाते हैं ? मैंने कई बार आपसे कहा कि धैर्य पर भरोसा रखकर सब काम कीजिए । उतावले का काम बिगड़ता है । धीरे के पीछे सफलता आप दौड़ती है । जिस प्रकार चारा देकर मीन को फँसाया जाता है और खेल खेलाकर उसे मारा जाता है उसी प्रकार आप गयास को फाँसिए ।

लाल—किंतु जब उसका जघन्य प्रस्ताव स्मरण आता है तो मेरा रुधिर खौल उठता है । जी चाहता है कि अभी जाकर उसका गला घोट दूँ ।

कुलसुम—शांत होओ । क्यों व्यर्थ अपने मन को दुःखी कर रहे हो । देखते नहीं, हर ओर तुम्हें विजय ही विजय दीख पड़ती है । आपसे आप तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हो जायगा । ऐसे अधीर क्यों हो रहे हो ? अपने में साहस की मात्रा पूर्ण रखो । मन से दुर्बलता को हटाओ । मैं जो कहती हूँ वह करो । जान बूझकर तुम अपने को ऐसा क्यों बना देते हो कि तुम्हारे मुखड़े की ओर देखकर लोग सहज ही में समझ लेते हैं कि तुम्हारे मन में कोई विचित्र भाव उद्भूत हुआ है ।

लाल—तब तुम क्या कहती हो ?

कुलसुम—उसे आशा दो कि तुम उसके प्रस्ताव को स्वीकार करोगे । उसके साथ मेल का बर्ताव करो । समय पाकर उसे अपने यहाँ एक बार निमंत्रण दो । जब वह हाथ में आ जाय तब जो उचित समझो, करो ।

लाल—सच तो यह है कि इस समय मेरी बुद्धि ठिकाने नहीं है । जितनी बातें तुम कह रही हो वे मेरी समझ में नहीं आती । किंतु इतना अवश्य करूँगा कि एकाएक उसके साथ कोई बुरा व्यवहार न कर बैठूँगा ।

कुलसुम—इतना ही करने से काम नहीं चलेगा । पहले भी तुमसे कह चुकी हूँ और आज भी कहती हूँ कि साहस का मात्रा बढ़ानी पड़ेगी । जिस मार्ग में चलना है वह कंटकपूर्ण है, सम्हल सम्हलकर पाँव रखना पड़ेगा । सबसे पहले अपने आनन की कांति तुम्हें सदा सानंद रखनी पड़ेगी । रह रहकर तुम्हारा मुखमंडल ऐसा हो जाता है कि सहज में तुम्हारे मनोगत भावों को संसार समझ जा सकता है । मुखड़े को गुलाब सा प्रफुल्लित रखो, हृदय में काँटों का ढेर रहे तो रहे । जिस प्रकार गुलाब में नागिन छिपी रहती है उसी प्रकार आनंदपूर्ण मुखड़े के भीतर अपने कुविचारों को छिपाकर रखो । मैं पहले ही से जानती थी कि वहाँ जाने से गयास तथा शम्स दोनों की आँख उस पर पड़ेगी और जो परिणाम मैंने सोचा था ठीक वही हुआ । अब आगे भी जो मैंने सोचा

रक्खा है वही होगा । किंतु भय मुझे तुम्हारा ही है । यदि तुम अपने को ठोक रक्खो तब तुम यहीं स्वर्ग का सुख अनुभव करोगे ।

लाल—यदि लुत्फुन्निसा को अपने हरम में मँगाने के लिये गयास बलप्रयोग करे तो क्या किया जायगा ?

कुलसुम—इसकी चिंता न करो । यदि सावधानतापूर्वक तुम काम करोगे तो ऐसा नहीं होने पावेगा । शम्स तो तुम्हारी मुट्ठी में है । जब अपना उद्योग विफल होता दीख पड़ेगा तब शम्स से सहायता ली जायगी । आरंभ ही में ऐसे अधीर होने से काम नहीं चलेगा । हृदय को प्रौढ़ कर काम करो ।

लाल—अच्छा, ऐसा ही होगा । तुम सब प्रबंध ठीक करो, जिस प्रकार होगा, मैं गयास को यहाँ एक दिन लाऊँगा ।

“मेरी चिंता तुम न करो । मेरी ओर से कदापि त्रुटि न होगी । अभी जाकर मैं सबको यथोचित आज्ञा दूँगी, सब प्रबंध ठीक हो जायगा । जिस दिन आप चाहेंगे, उन लोगों के खाने-पीने की सामग्री प्रस्तुत पावेंगे ।” इतना कहकर कुलसुम वहाँ से चली गई । किंतु लालचीन को अकेला पाकर धर्म एवं लोभ में द्वंद्व आरंभ हो गया । धर्म ने कहा कि जिसके नमक से पले हो, जिसकी कृपा से अनंत संपत्ति के स्वामी बन अनंत सुख भोग रहे हो उसके विरुद्ध कोई काम करना तुम्हारे लिये उचित नहीं है ।

उसकी बात काटकर लोभ ने कहा कि जो स्वयं धर्मच्युत है उसके साथ धर्म का क्यों प्रयोग किया जाय । लालचीन इतने दिनों से सस्नेह गयास की सेवा कर रहा है उसके पलटे में उसने इसे क्या दिया ? अपमान, गालियाँ और गुलामी !

धर्म—मान लिया जाय कि जान बूझकर वह लालचीन को गुलामी के बंधन से निकालना नहीं चाहता तो इससे क्या हुआ । आज जिस अवस्था में लालचीन है वह क्योंकर प्राप्त हुई ? किसकी कृपा के कारण आज उसे इतनी संपत्ति मिली है, जो इतने सुख को वह भोग रहा है ?

लोभ—जब स्वतंत्रता न मिली तो भोग किस काम का ? गुलाम को सुख कहाँ मिल सकता है ? बात बात में जिसे दूसरे का मुँह जोहना पड़ता है उसका जीवन सुखमय क्योंकर हो सकता है ? पूर्ण ज्ञान एवं मनुष्यत्व की प्राप्ति के लिये स्वतंत्रता की नितांत आवश्यकता है । यदि किसी आरण्य-जंतु का बहुत दूर तक पीछा किया जातु है और उसे अपनी रक्षा का कोई उपाय दीख नहीं पड़ता तो अंत में वह भी निश्चय अपने पीछा करनेवाले पर आक्रमण कर देता है, उसी प्रकार जब लालचीन इस प्रकार अपमानित किया गया तब वह क्यों उस पर आक्रमण नहीं करेगा । किस लालच से वह उसे प्यार की दृष्टि से देखेगा ? इसमें क्या आश्चर्य है कि उसके क्रूर व्यवहार को उसी के मुँह पर वह

फेके ! क्योंकि मनुष्य मात्र को अपनी रक्षा करने का पूर्ण अधिकार है । ऐसा किए बिना मनुष्य का जातीय ज्ञान और राजनैतिक बल कदापि नहीं बढ़ सकता ।

धर्म—क्यों व्यर्थ की बातें बकते हो, मिथ्या आशा देकर क्यों इसके जीवन को कंटकमय करना चाहते हो ? सुख में है सुख में रहने दो, क्यों वृथा इसके जीवन को दुःखमय बनाने की चेष्टा करते हो ?

लोभ—यदि आज यह स्वाधीन रहता, यदि गुलामी की जंजीर इसके पैरों में न पड़ी रहती तो क्या स्वावलंब और स्वाभिमान का गौरव इसके हृदय से ऐसा हट जाता कि गयास इसके मुँह पर इसकी स्नेहमयी दुहिता के विषय में ऐसी अनुचित बात कहता और यह दम साधकर चुप रह जाता ? किंतु मेरा ऐसा कहना तो व्यर्थ ही है; क्योंकि जिसमें उत्साह नहीं, जिसमें ममता नहीं, उससे क्या हो सकता है ? जिसमें आत्म-गौरव नहीं वह क्या कर सकता है ? पशु पक्षी भी बंधन में रहकर नहीं चाहते तब मनुष्य को पराधीन रहना क्योंकर रुचिकर होगा ?

धर्म—किंतु दूसरे का सर्वनाश कर अपनी पदवृद्धि करना क्या अच्छा है ? परोपकार ही मनुष्य का परमसुंदर अलंकार है । पर-पीड़न से घोरतर अपराध दूसरा कुछ नहीं है । तुम चाहते हो कि गयास को पीड़ित कर यह उच्च पद पर पहुँचें । परिणाम बुरे का बुरा ही होता है । जो वस्तु कुकर्म द्वारा

प्राप्त होती है वह कभी चिर-काल तक अपने हाथ में नहीं रहती। रुधिर की नदी को संतरण कर तुम जिस पद पर पहुँचोगे वहाँ तुम स्थिर नहीं रह सकते। प्रकृति का यह नियम नहीं है कि दूसरे को दुखी कर कोई सुखी रहे। उचित है कि अपनी नीच प्रकृति को हटाने की चेष्टा करो। मैं जो राह दिखलाता हूँ उस पर चलने से लज्जा, भय, संताप, चिंता के आवर्त में तुम्हें नहीं पड़ना पड़ेगा। क्या दुहिता को बाटिका में भेजते समय मैंने तुम्हें मना नहीं किया था ? एक भूल जो तुमने की, उसके फल-स्वरूप आज तुम्हें अपमानित होना पड़ा। किंतु आगे के लिये भी तो चेत करो। जो हो चुका वह तो हो ही चुका, अब ऐसा न करो कि क्षणिक सुख के लिये आजन्म दुःख भोगना पड़े। लोग कहते हैं कि आगे क्या होगा, यह विधाता के भविष्य विज्ञान में विलुप्त है; किंतु हृदयस्थ ज्ञान तथा धर्म-बुद्धि सदा इसी चेष्टा में रहती है कि मनुष्य को उसके कर्मों का परिणाम, आभास-स्वरूप से, अवश्य ज्ञात हो जाय। देखो, मैं आज भी तुम्हें सचेत कर देता हूँ कि इस मार्ग में तुम पाँव न रक्खो, अपने को सम्हालो और कुवास-नाओं के दमन करने का यत्न करो।

लोभ—अपना ज्ञान तुम अलग रक्खो। जो जैसा करे उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना उचित है। विज्ञों का कथन है कि पुष्प के साथ पुष्प और काँटे के साथ काँटे बने। संसार में उसे सफलता कभी प्राप्त नहीं होती। जो

दूसरों से याचना किया करता है। जो चेष्टा करता है, अपने स्वत्व के लिये लड़ता है, कठिनाइयों से डरता नहीं वही सफलमनोरथ होता है। यदि तुम्हारी बातें सुने तो लालचीन एकदम कायर तथा दुर्बल हो जाय और फिर उसका कहीं ठिकाना न रहे। क्योंकि संसार दुर्बल के लिये नहीं है। दुर्बलता महापाप है। जो दूसरे को भीरु बनाने की चेष्टा करता है वह नीचातिनीच है। मैं जानता हूँ, तुम सदा तिल का ताड़ किया करते हो। गोपद जैसी विपत्ति को तुम पहाड़ बना देते हो, किन्तु लालचीन ऐसे दुर्बल हृदय का नहीं है कि तुम्हारे छलावे में आ जाय।

धर्म—मैं तुमसे पार नहीं पा सकता। कितने के जीवन को तुमने दुःखमय कर छोड़ा है। आज तुम इसी यत्न में हो कि जिसमें इस लालचीन का भी जीवन कंटकमय हो जाय। मैं जान गया कि इसे अब तुम सुख की नींद सोने नहीं देगे।

अंत में लोभ की जीत हुई। धर्म के सदुपदेश को लालचीन ने न सुना। वह गयास के सर्वनाश का उपाय सोचने लगा, और इसी चिंता में उसकी आँखें लग गईं। स्वप्न-राज्य में वह आशा-प्रदर्शित अद्भुत दृश्यों को देखने लगा और उसका, वर्तमान तथा भविष्य का, ज्ञान विलुप्त हो गया।

आठवाँ परिच्छेद

उत्तम भूपाल होने पर भी गयास सर्वप्रिय नहीं था। उसके राज्य में यथेष्ट सुख-संपत्ति रहने पर भी सबके सब उससे संतुष्ट नहीं थे। क्योंकि प्रकृति का यह नियम है, संसार की यह नीति है कि वुरे अच्छे को बुरा कहते हैं, महात्मा को दुष्ट दुष्ट ही जानते हैं। अतएव संसार में हम लोग कोई ऐसा काम नहीं कर सकते हैं कि सबको रुचिकर हो और न कोई ऐसा मनुष्य ही पा सकते हैं कि जिसे सब लोग अच्छा समझते हों। गयास इस नियम का अपवाद नहीं था। उसके राज्य में जिनकी पदवृद्धि नहीं हुई थी, जो क्रूर स्वभाव के कारण अच्छे को देख नहीं सकते थे, जिन्हें दूसरे की भलाई ही दुःखकर थी, वे मन ही मन गयास से असंतुष्ट रहते थे। किंतु राज्य के प्रधान कार्यकर्त्ता गयास के पक्ष में थे। अतएव उनकी कुछ दाल नहीं गलती थी और अपने मनोगत भावों को वे यथासाध्य छिपाकर रखते थे।

लालचीन ने तो प्रत्यक्ष में गयास को अपनी मुट्ठी में कर लिया था। क्योंकि उसने गयास को यह आशा दी थी कि वह कुछ दिनों के बाद अपनी कन्या उसके हाथों में समर्पण कर देगा; किंतु भीतर ही भीतर वह शम्स को उत्तेजित कर रहा था। शम्स दुर्बल प्रकृति का मनुष्य था,

लुत्फुन्निसा पर आसक्त था, दुर्दमनीय काम-रिपु की चपेट में पड़ जाने के कारण अपने ऊपर उसका पूरा प्रभुत्व भी नहीं रहा। इधर समयानुसार इधर उधर की बातें बना, देश-काल सुभाकर, लालचीन क्रमशः उसका मन गयास से फेरता गया। किंतु लालचीन यह भली भाँति जानता था कि अपनी कायरता के कारण कार्यक्षेत्र में वह दृढ़ नहीं रह सकता। अतएव अपने कुविचारों को लालचीन ने शम्स पर प्रकट नहीं किया।

अच्छी बातें छिप जायँ तो छिप जायँ किंतु बुरी बातें प्रायः नहीं छिपतीं। तिस पर लालचीन स्वयं ही इस चेष्टा में था कि जो लोग गयास के विरुद्ध हैं उनसे एक मत करके उसका सर्वनाश करे। अतएव देखते देखते लालचीन और ऐसे ऐसे कर्मचारी तथा अर्मार उमरा, जो गयास से असंतुष्ट थे, एक साथ जा मिले। फिर क्या था, गयास के राज्य का मूल विच्छेद करने का षड्यंत्र रचा जाने लगा।

आधी रात का समय है। चारों ओर निःस्तब्धता छा रही है। ऐसे समय में एक भग्न अट्टालिका में प्रायः दस मनुष्य बैठे हैं। यह अट्टालिका नगर से बाहर एक सामान्य जंगल में है। इसमें पुराने ढंग का एक दालान बना था जिसमें पत्थर की कड़ी, शहतीर तथा पटरी लगी हुई थी। देखने से जान पड़ा था कि यहाँ प्रायः कोई आता जाता नहीं।

जो लोग यहाँ एकत्र थे उन्हें देखकर ज्ञात होता था कि ये लोग ऊँचे दर्जे के उमरा हैं। ये लोग आपस में कुछ

बात-चीत कर रहे थे। उसी बीच में दो आदमी और वहाँ पहुँच गए। इन्हें देखकर सब चुप हो गए। आगंतुक को देखकर एक ने पूछा—हैदर अली, आपके साथ यह नए आदमी कौन हैं ?

हैदर—ये मेरे एक मित्र हैं।

कुर्बान—आप तो जानते हैं कि हम लोग यहाँ किस उद्देश्य से इकट्ठे हुए हैं ? और यहाँ का नियम भी आप पर विदित है। तब आप इन्हें यहाँ क्यों ले आए ?

हैदर—आप इन्हें अपरिचित क्यों कहते हैं ? यहाँ कौन है जो लालचीन को नहीं पहचानता हो ? और लाने का कारण तो आप साफ़ समझ सकते हैं कि—

“कुनद हमजिन्स बा हमजिन्स परवाज़।

कबूतर बा कबूतर बाज़ बा बाज़।”

जल जल से मिलता है।

कुर्बान—तब क्या हम लोगों को समझना पड़ेगा कि इनकी हम लोगों के उद्देश्य के साथ पूर्ण सहानुभूति है ? किंतु यह तो बादशाह के आजकल विशेष कृपापात्र हो रहे हैं। हाल ही में इन्हें गुलामी के बंधन से मुक्ति मिली है। इनकी पदवृद्धि हुई है और सुनने में आता है कि इनके गृह-कुंज का एक विशेष पुष्प शाही हरम को शीघ्र सुशोभित कर अपने असमान सौरभ से उसे भरनेवाला है।

हैदर—सब ठीक है; किंतु गुलाब के कोमल दल में यदि कीट दिखाई न दे, कोमल दूब के गलीचे में छिपा काला नाग दृष्टिगोचर न हो तो क्या मानना पड़ेगा कि वे वहाँ नहीं हैं ? पुआल के नीचे की आग दीख नहीं पड़ती ।

कुर्बान—असंतोष का कारण ?

हैदर—क्या यह भी कहना पड़ेगा ? चाकरी की उचित मज़दूरी नहीं मिलने से किसका दिल टूट नहीं जाता ? इस मुस्तैदी, इस ईमानदारी से काम करने पर भी आज तक इनकी पदवृद्धि नहीं हुई और जो आप लोग देख रहे हैं वह तो घोर नीचता का एक नमूना है । कहते लज्जा आती है, भला अब क्या किसी की यहाँ इज्जत रह सकती है ? किसी की बहू-बेटी कहीं आ जा सकती हैं ? आज तक सब लोग यही समझते थे कि सुलतान अपनी प्रजा का पोषक पालक माँ बाप है, सारे राज्य का रक्षक है, अपनी जान माल इज्जत को निस्संकोच भाव से इनके हाथों में दे प्रजा निश्चित सेा सकती है । किंतु जो बर्त्ताव इस बेचारे के साथ किया गया है उसे देखकर तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं ।

सब के सब एक साथ बोल उठे—क्या है ? बात क्या है ? क्या हम लोग उसे सुन नहीं सकते ?

हैदर—इनके सामने वह बात मैं नहीं कह सकता, किंतु इतना अवश्य कहूँगा कि इस अपराध के लिये यदि लालचीन सुलतान के गले पर छुरी भी फेर दें तो अनुचित नहीं होगा ।

सब—हम लोगों की पूरी सहानुभूति इनके साथ है और इनके लिए हम लोग कुछ उठा भी नहीं रखेंगे ।

इन लोगों की बात पूरी न होने पाई थी कि बीच ही में बात काटकर कुर्बान बोल उठा—किंतु इसके पहले कि हम लोग इन पर विश्वास करें, हम लोगों के नियमानुसार इन्हें एक प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करना पड़ेगा और यह दृढ़ संकल्प करना होगा कि यदि हम लोगों के नियम मानने में इन्हें कुछ आपत्ति हो तो चुपचाप यहाँ से चले जायँगे और फिर कहीं पर किसी के सामने ये जो यहाँ देखते सुनते हैं उसके विषय में अपना मुँह नहीं खोलेंगे ।

हैदर—इसका उत्तर मैं क्योंकर दूँ ? यह सुन ही रहे हैं । जैसा उचित समझें, कहें ।

लालचीन—आप लोग जो कह रहे हैं वह सब मैं पहले ही से जानता हूँ । श्रीमान् हैदरअली महोदय ने यहाँ आने के पूर्व ही सब कुछ कह रक्खा है ।

कुर्बान—तब तो आप भी सुन चुके होंगे कि आज से बराबर हम लोगों का एक गुप्त चर आपके पीछे रहेगा । यदि आप कभी किसी अवस्था में अपनी प्रतिज्ञा भंग कीजिएगा तो वह आपको प्राणदंड देगा । जब तक हम लोगों का पूरा विश्वास आप पर नहीं हो जायगा, आपका इसी प्रकार पीछा किया जायगा ।

लाल—मुझ पर अविश्वास करने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि मैं स्वयं सब बातें सोच समझकर यहाँ आया हूँ। किसी ने बहकाकर वा धोखा देकर मुझे अपने फंदे में नहीं फँसाया है। किंतु इसका यह मतलब नहीं है कि मैं आप लोगों के नियम को नहीं पालूँगा। मरता क्या न करता की मसल मेरे साथ है। जो कुव्यवहार मेरे साथ किया गया है उसका पलटा मैं जान देकर भी लूँगा। मैं भली भाँति जानता हूँ कि जो अपनी सहायता आप नहीं करता उसकी सहायता परमेश्वर भी नहीं करता। मैं ठीक समझ गया कि भिखमंगी से अब काम नहीं चलेगा। जो होगा वह अपने बाहुबल से। किंतु संसार में कोई काम एक के किए नहीं होता, इसी से मैं आप लोगों के साथ आ मिला हूँ। अब आप लोग जैसी प्रतिज्ञा मुझसे चाहिए करा लीजिए। फिर मैं अपने भेद को आप लोगों पर प्रकट करूँगा।

सब—अच्छा।

कुर्बान अली—अपनी तलवार पर हाथ रखकर आप शपथ कीजिए कि जीवन मरण में, सुख दुःख में, संपत्ति विपत्ति में आप हम लोगों का साथ नहीं छोड़ेंगे। प्रतिज्ञा कीजिए कि प्राण जायँ तो जायँ, आप हम लोगों का भेद कभी किसी पर प्रकट न कीजिएगा।

लाल—ऐसा ही होगा। मैं धर्म के नाम पर प्रतिज्ञा करता हूँ कि मन वच कर्म से कभी इसके प्रतिकूल कोई कार्य नहीं

करूँगा । यदि इसके प्रतिकूल मेरा कोई आचरण हो तो नरक की यंत्रणा मैं भोग करूँ ।

इसके बाद एक पत्रखंड लालचीन के सामने रक्खा गया और उससे कहा गया कि बाएँ हाथ की कनिष्ठ अंगुली से रुधिर लेकर वह उस कागज़ पर अपना हस्ताक्षर कर दे । लालचीन ने ऐसा ही किया । तब एक एक कर सबके हाथ पर हाथ रखकर लालचीन ने कहा कि आज से मेरा और आप लोगों का उद्देश्य एक हुआ । जब तक यह सब काम होता रहा, उस जनशून्य स्थान में एकदम सन्नाटा छा रहा था । सबके मुखड़े पर गंभीरता राज्य कर रही थी । कोई किसी से कुछ बोलता नहीं था ।

इसके बाद सबके सब अपने आसन पर पूर्ववत् बैठ गए । कुर्बान अली ने एक बोतल से रक्तवर्ण का शर्बत प्याले में ढाला और सबके हाथ में एक एक प्याला देकर कहा कि यह बैरियों का मानो रुधिर है, इसे आप लोग पीजिए और दृढ़ संकल्प कीजिए कि जब तक आप लोग अपने विपत्तियों का रुधिर इस प्रकार पान न कीजिएगा, आप लोगों की प्यास न बुझेगी और दिल को चैन नहीं आवेगा । शर्बत पीकर सबके सब घुटनों के बल बैठ गए और परमेश्वर से अपनी विजय-कामना तथा प्रार्थना करने लगे और गयासउद्दीन के सर्वनाश का उपाय सोचने लगे ।

उधर गयास इस समय अपने रंगमहल में सुख-शय्या पर पड़ा पड़ा सुखस्वप्न देख रहा था ।

भविष्य को मानव बुद्धि एवं दृष्टि के परे रखकर भगवान् ने जीवमात्र पर कितनी कृपा की है, इसका अनुमान करना कठिन है । यदि भविष्य का ज्ञाता मनुष्य रहता तो इस संसार में वह सुखी कदापि नहीं होता, क्योंकि संसार का काम आशा ही पर चलता है । मनुष्य कभी सुखी नहीं रहने पर भी सुखी होने की आशा सदा किया करता है । वर्तमान दुःख को भविष्य सुख की आशा पर हम लोग सह लेते हैं ।

इधर गयास के सर्वनाश का प्रबंध हो रहा है, उधर वह इस आशा में है कि दो चार दिनों में लुत्फुन्निसा को अपने हरम में लाकर वह सुख से अपनी जीवनयात्रा निर्वाह करेगा । बस संसार की यही गति है ।

नवाँ परिच्छेद

आज प्रभात समय से लालचीन के घर में धूम है। दौड़ धूप हो रही है। स्थान स्थान से अनेक प्रकार की खाद्य वस्तुएँ मँगाई जा रही हैं। पाकशाला में नाना प्रकार के भोजन बन रहे हैं। कहीं बिछौना बिछ रहा है, कहीं शीशे लटकाए जा रहे हैं। कहीं कोई अपनी पेटो तलवार साफ़ कर रहा है। कहीं ध्वजा पताका तथा माला लटकाई जा रही है। राशि राशि रत्नजटित अलंकार बाहर किए जा रहे हैं, सोने चाँदी के तश्त, परातें, कटोरे, गिलास, रिकाबियाँ आदि पोछी जा रही हैं और कहीं मणि मुक्ता की कटोरियाँ साफ़ हो रही हैं। चारों ओर हलचल मची हुई है। सदर द्वार पर शहनाई बज रही है। लालचीन अत्यंत व्यस्त है, कभी इधर कभी उधर दौड़ धूप कर रहा है। कभी किसी को कुछ आज्ञा देता और कभी किसी के काम का निरीक्षण कर समालोचना कर रहा है। भीतर से बाहर तक कहीं किसी को विश्राम नहीं है। सबके सब अपने अपने काम में लगे हैं। कोई किसी की सुनता नहीं।

• नगर में भी हर ओर सबके मुँह से लालचीन ही का नाम सुना जा रहा है। जहाँ दो चार नागरिक मिल बैठते हैं

वहीं लालचीन की चर्चा । कहीं कोई स्तुति करता है, कोई निंदा । कहीं कोई विस्मय प्रकाश करता है, कोई ईर्ष्या एवं द्वेष की आग में दहक उठता है । कहीं कोई उसके भाग्य को सराहता है, कोई उसे दोष लगाता है । निदान आज सारा नगर लालचीनमय हो रहा है ।

लालचीन का चक्र काम कर गया । उसने गयास को वशीभूत कर लिया । सुलतान उसके धोखे में आ गया । आज लालचीन के यहाँ गयास का निमंत्रण है । उसके प्रधान उमरा भी उसके साथ जायेंगे । तय पा चुका है कि आज गयास लुत्फुन्निसा को अपनावेगा । दोनों में प्रथम समागम होगा । सब ठीक है । इसी से आज लालचीन के घर इतने समारोह से तैयारी हो रही है ।

गयास समझता था कि दो एक लालचीन सरीखे लालची नीच प्रकृतिवालों को छोड़कर सभी उसे चाहते हैं, सब उससे संतुष्ट रहते हैं, उसकी पूरी भक्ति करते हैं । किंतु बात ऐसी नहीं थी । प्रकट में संतुष्ट रहने पर भी बहुतेरे भीतर ही भीतर गयास से असंतुष्ट थे, क्योंकि ऐसे लोगों के दमन करने का गयास ने कभी कोई यत्न नहीं किया था । अतएव इनकी संख्या दिनों दिन बढ़ती गई । बात यह है कि नरेशों का सच्चा मित्र कोई नहीं होता । कुछ लोग ऐसे होते हैं जो सिंहासन से संबंध रखते हैं । वे नहीं विचारते कि उसका वर्तमान अधिकारी कौन है । जो उस पर आरुढ़

रहता है उसी के वे सच्चे दास बने रहते हैं। किसी व्यक्ति विशेष से उनकी शत्रुता या मैत्री नहीं रहती। ऐसे लोगों की संख्या देश में अधिक रहती है। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अधिकार की पूजा करते हैं। जब तक भूपाल विशेष के हाथ में राजदंड रहता है तब तक वे उसके आज्ञाकारी बने रहते हैं, किंतु दैवात् जो किसी प्रकार उसके हाथ से राजदंड खिसका तो वे लोग उसे पददलित करने में कोई कसर नहीं करते। ऐसे लोग समय के मीत हैं, किसी व्यक्ति विशेष के नहीं। और तीसरी श्रेणी के लोग ऐसे होते हैं जो सुलतानों से मन में सदा वैर भाव रखते हैं, किंतु उन्हें इतना साहस नहीं रहता कि उसे किसी प्रकार प्रकट करें। अपने मनोगत भावों को वे सदा छिपाए रहते हैं। किंतु घात पाकर बिना घात किए नहीं छोड़ते। बस इसी से कहा जाता है कि राजा का कोई मित्र नहीं होता। सब अपने मतलब के यार होते हैं।

देखते देखते दिन बीत गया। संध्या हुई। प्रकृति ने काली चादर से पृथिवी के अंग को ढक दिया। सुलतान के आने का समय पहुँच गया। हर ओर आलोक प्रज्वलित किए गए। लालचीन के घर में निशा को प्रवेश करते कठिनाई हुई। किसी प्रकार महल के कोनों तथा गुप्त स्थानों में आज रजनी को स्थान मिला। लालचीन का सारा मकान जगमगा उठा। एक एक कर अमीर उमरा राजकर्मचारी साँझ ही से

उसके दीवान ख़ास में आ आकर बैठने लगे । थोड़ी ही देर में दीवानख़ाना भर गया और गयास की भी सवारी आ पहुँची । अब किसका साहस था कि लालचीन को गुलाम कहे ? कौन था कि उसे नीचा दिखावे ? जिसके घर दक्षिण भारत के सम्राट् आज स्वयं विराजमान हैं उसके भाग्य की बड़ाई कौन कर सकता है ?

दीवानख़ाने में एक अति सुंदर स्वर्णतार-खचित चँदवे के नाचे बादशाह के लिये रत्नजटित सिंहासन बिछा हुआ था । नाना प्रकार के चित्र दीवार से लटक रहे थे । चित्रित छत से बहुमूल्य शीशे लटक रहे थे । लालचीन के भृत्यों के वस्त्राभूषण देखकर बुद्धि चकरा जाती थी । गान वाद्य की भी कमी न थी । पुष्पाधार में सुगंधित पुष्प सजे थे । विविध रंगों के सुमनों के गुच्छे दीवार से, दरवाज़े से, छत से लटक रहे थे । सुगंध-द्रव्य से भरे कृत्रिम फ़ौआरे मृदु मंद शब्द के साथ उद्धसित होकर चारों ओर सुगंध फैला रहे थे । सुषमामयी नर्तकियों के कलकंठ-निःसृत संगीत के काकलीमय उच्छ्वास से कत्त गूँज रहा था । सारांश यह है कि हुलास विलास, आमोद प्रमोद, रास रंग, आनंद विनोद का स्रोत इसी दीवानख़ाने में फूट चला था ।

लालचीन एक एक कर सब अमीर उमरा तथा दर्बारियों से मिलता और सब का स्वागत करता था । कभी किसी को पान कभी इलायची देता, कभी किसी के वस्त्र

पर इतर गुलाब छिड़कता, किसी से कुशल-संवाद पूछता, किसी का अभिवादन करता, किसी के गले में हार डालता और किसी से मृदुल संभाषण करता था। इस पर गयास की विशेष कृपा देख आज लोग चकित थे। गुलाम समझकर इससे वार्त्तालाप करने में जो अपना अपमान समझते थे वे आज बार बार इससे मिलकर दो बातें करने का अवसर ढूँढ़ते थे। सब लोग आपस में भी इसी के विषय में बातचीत कर रहे थे। कोई इसके भाग्य को सराहता, कोई लालची और नीच कहकर इसकी निंदा तथा उपहास करता, कोई कहता कि बादशाह कामांध होकर गुलाम के साथ संबंध करते हैं। कितने नर्तकियों के हाव भाव पर मुग्ध होकर उन्हीं की ओर निहारते थे।

जब सारी मंडली आमोद प्रमोद में निमग्न हो गई, अवसर पाकर लालचीन वहाँ से हट गया।

हाय ! भविष्य के कुहरे में मनुष्य कैसा घिरा हुआ है। क्षण भर में क्या होगा, यह नहीं जानने के कारण वह क्षणिक सुख में कैसा निमग्न हो जाता है। यहाँ जो लोग विलास के स्रोत में डूब रहे थे, क्या जानते थे कि इसके बाद उनके साथ क्या बीतेगी ?

लालचीन के प्रबंध को देखकर अपने निकटवर्ती उमरा से गयास ने कहा कि हम लोग लालचीन को गुलाम ही गुलाम समझते थे। किंतु इसका विभव एवं ऐश्वर्य देख

बड़े बड़े उमरा की बुद्धि चकरा जायगी । अहा ! इसका अतिथि-सत्कार भी सराहनीय है । देखो हम लोगों के स्वागत के लिये इसने कैसा सुप्रबंध किया है ।

उमरा—अन्नदाता का कहना यथार्थ है । हम लोग तो बहुत दिनों से जानते थे कि लालचीन अतुल विभव का स्वामी है । श्रीमान् के पूज्य पिता के समय से इसने अत्यंत धन संचय किया था । आज इसका सब परिश्रम सुफल हुआ । इसका धन आज सार्थक हुआ । इसका गृह पवित्र हुआ और इसका भाग्यचक्र सौभाग्यरवि की ओर फिरा ।

गयास—अभी तक जो इसका उचित आदर नहीं किया गया था, इसी की हमको बहुत ग्लानि है ।

उमरा—इस राज्य में कोई नहीं है जो सुखी न हो और जिसकी अभिलाषा पूरी न होती हो । कहकर क्या होगा । थोड़े दिनों में हम लोग दुःख का नाम ही भूल जायेंगे । प्रजावर्ग पर श्रीमान् की ऐसी कृपा है कि सबके सब पूर्ण रूप से संतुष्ट हैं ।

गयास—हम अकेले क्या कर सकते हैं ? यदि आप लोग अपने कार्य को भली भाँति संपन्न नहीं करते तो कुछ नहीं हो सकता था । हमको खुशी इस बात की है कि आप लोग एक मन चित्त हो राज्य का ऐसा उत्तम प्रबंध कर रहे हैं ।

उमरा—आप सरीखे शुभचिंतक को राजसिंहासन पर पाकर प्रजा क्यों न सुखी हो ? किंतु लालचीन को आज के उत्सव के उपलक्ष में कुछ खिलअत भी मिलनी नितांत आवश्यक है ।

गयास—ऐसा ही होगा ।

इसी समय नर्तकी ने एक गीत ऐसे हाव भाव, नाज़ और अदा से गाया कि सबका ध्यान उसी ओर आकर्षित हो गया ।

दसवाँ परिच्छेद

एक सुंदर सूनसान कोठरी में लालचीन अकेला खड़ा है । इस स्थान में आमोद-प्रमोद की ध्वनि नहीं आती । यहाँ जनरव नहीं है । कोलाहल नहीं है । जनस्रोत से बाहर निकलकर लालचीन यहाँ क्यों आया है ? आमोद-प्रमोद से अलग होकर लालचीन यहाँ क्यों आया है ? इसका मुखमंडल कातिरहित क्यों हो रहा है ? यहाँ एकांत में अकेला खड़ा यह क्या कर रहा है ?

परमात्मा ने मनुष्य को आत्मा देकर अपनी अनंत कृपा का असीम परिचय दिया है । आत्मा मन पर पूरा अंकुश रखती है । जब तक बलपूर्वक बार बार कुकर्म करके हम लोग इसे मृतकवत् नहीं बना देते तब तक हम लोगों को कुमार्ग पर जाने से यह अवश्य रोकती है । बुरे काम करने के लिये पैर उठाते ही कलेजा धड़कने लगता है, शरीर थरथराने लगता है, कानों में आत्मा की स्पष्ट पुकार आने लगती है । किंतु जब आत्मा की चेतावनी सुनकर भी हम उसे अनसुनी कर देते हैं, बार बार बुरा काम करने के कारण जब हम लोगों का हृदय पाषाणवत् कठोर हो जाता है, कानों की भिक्षी मोटी पड़ जाती है और उसमें आत्मा की मधुर ध्वनि सुनने की शक्ति नहीं रह जाती तब वह भी चुप हो जाती है । किंतु बुरे

कामों को देखकर इतना होने पर भी कभी कभी वह जाग उठती है और वृश्चिकदंशन की यातना देने लगती है । इसी को विज्ञ लोग अनुताप कहते हैं ।

कुवासना की सफलता होते न होते लालचीन के मन में खलबली मच गई । आत्मा की कठोर यातना सहने की इसमें अब शक्ति न रह गई । आतिथ्यसत्कार का भाण करते अब न बना । सुषुप्त करुणा इसके हृदय में जाग उठी । धर्म ने अपनी ओर इसे एक बार और खींचा । यह पुनः आत्मा की पुकार सुनने लगा । अनुताप के ताप से व्याकुल होकर यह गयास के सामने ठहर नहीं सका । सब की आँखें बचा अपनी लज्जा छिपाने के लिये, अपने मनोगत भावों पर परदा डालने के लिये, यह यहाँ आया ।

मन स्थिर न रहने के कारण इसके चित्त में, विकृति सी हो आई थी । इस समय इसके विचार शृंखलाबद्ध नहीं होते थे । इसके हृदय-सरोवर में मानों भावों की बाढ़ आ गई थी और भावों की तरंग पर तरंग उठने लगी थी ।

लालचीन बहुत देर तक सुंदर दालान में इधर उधर घूमता हुआ कुछ आप ही आप कह रहा था । अधिक देर तक जब अपने को सम्हाल न सका तो वह उच्च स्वर से बोल उठा “नहीं ! नहीं ! यह काम मुझसे नहीं होगा । यदि काम करते ही वह समाप्त हो जाता तो जहाँ तक शीघ्र होता उसे कर ही देना उत्तम था । यदि क्रिया के साथ उसके फल तथा

परिणाम की इतिश्री हो जाती तो क्या भय था । यदि कार्य की सफलता के परिणाम का भी विनाश हो जाता तो सब ठीक था । किंतु ऐसा होता तो नहीं । यदि इस लोक में कुछ बखेड़ा नहीं बढ़ता तो परलोक में मैं देख लेता । किंतु ऐसे कामों का न्याय यहाँ भी तो होता है । कुकर्म का फल यहाँ भी तो भोगना पड़ता है । जिस छुरे से हम लोग दूसरे का गला काटते हैं यदि वह हम लोगों की गर्दन पर नहीं उछल पड़ता तो विशेष हानि नहीं थी । इस कठिन व्रत का यदि उत्थान ही में उद्यापन होता तो इसका शीघ्र समाधान हो जाना अच्छा था । हत्या की सफलता यदि परिणाम को निवारण करती, अस्त्राघात यदि फलाफल का मूलोच्छेद करता, इस कार्य को करके भवसागर के इस कूल पर यदि मैं निर्भय खड़ा हो सकता तो परलोक को छलावा दे देता । किंतु संशय होता है कि इस महापाप का दंड मुझे यहाँ भोगना पड़ेगा । विधाता का यह विषम नियम है कि जो हलाहल बोलता है उसी के मुँह में वह पड़ता है । जो साँप पालता है वह सर्प-दंशन से ही मरता है । यदि मैं धोखा दूँ तो मुझे महा विश्वासघात का पाप होगा । पहले तो मैं गयासउद्दीन का दास हूँ, दूसरे उसकी प्रजा हूँ । दोनों संबंध इस कार्य के प्रबल रोधक हैं । तिस पर भी मेरा आश्रित आज यह मेरा पूज्य अतिथि है । मेरा धर्म है कि इसके घातक के प्रति अपने द्वार को बंद करूँ और प्राणपण से इसकी रक्षा करूँ । ऐसा

न कर इसे पीड़ित करने के लिये मैं स्वयं अस्त्रधारण करना चाहता हूँ—यह कैसा नीच कर्म है। इससे बढ़कर दूसरा कौन पाप होगा ? इसके अतिरिक्त यह बादशाह बड़ा न्यायी है। सभी इसकी प्रतिष्ठा करते हैं, इससे संतुष्ट रहते हैं, इससे स्नेह रखते हैं। प्रजा इसे प्राणी से अधिक चाहती है। इसकी प्रशंसा सर्वत्र फैल रही है। धर्म की भेरी बजाकर, इसके अतुलित गुण जानकर, इस दयाहीन पाप-कहानी को करुणापूर्ण स्वर से ये सबसे कहेंगे। दया से उत्तेजित हो जनरव इस हत्याकांड का समाचार देश देश घर घर में पहुँचावेगा। सुनकर लोगों का मन उसी प्रकार द्रवीभूत होगा जिस प्रकार नवजात शिशु को निराश्रय देखकर होता है। देवदूत पवनाकार अदेह अश्व-पृष्ठ पर आरोहण कर संसार में भ्रमण करेंगे और चारों ओर विलाप का प्रबल तूफान उठेगा। यह संवाद लोगों की आँखों में बालुकण सा पड़ेगा—जो जहाँ सुनेगा वहीं बेचैन हो जायगा। नेत्रों से निबिड़ नीरद की धारावत् अश्रु बहेंगे तब देवक्रोध शांत होगा। इस कार्य के करने के लिये मुझे क्या उत्तेजना है ? केवल उच्चाभिलाषा ने मुझे मतवाला बना दिया है। उच्चाशा से उत्तेजित होकर मेरे प्राण उच्चासन तक कूदना चाहते हैं। किंतु संभव है कि उतने ऊँचे न जा सकें, लक्ष्यभ्रष्ट होकर कहीं बीच ही में जा गिरें। हाय ! मैंने क्यों इस काम में हाथ डाला, क्यों बैठे बैठाए इस विपत्ति को अपने माथे लिया ! उस दिन लुत्फुन्निसा को राजोद्यान में

भेजना अच्छा नहीं हुआ । किंतु अब उपाय क्या है ? गयास से पीछा क्योंकर छोड़ाऊँ ? इसमें उसका दोष ही क्या है ? सब अनिष्ट का मूल तो मैं ही हूँ । क्या मुझे ज्ञात नहीं था कि सौंदर्य अपना प्रभाव डालेगा, लुत्फुन्निसा को देखकर गयास प्रेमांध हो जायगा । देखता हूँ कि अब मेरा निस्तार नहीं है । उभय भाँति मेरा मरण हुआ ।

लालचीन इसी विचार में था कि कुलसुम वहाँ आ पहुँची । लालचीन को अकेला देखकर वह बोल उठी—हैं ! आप यहाँ अकेले क्या कर रहे हैं ?

लाल—हैं ! हैं ! क्या संवाद है ? क्या है ?

कुलसुम—उन लोगों को छोड़कर आप यहाँ क्यों चले आए ?

लाल—मुझे वे लोग खोज रहे हैं क्या ?

कुलसुम—क्यों न खोजेंगे ?

लाल—अब मुझसे यह काम नहीं होगा । इस पथ पर मैं अब अग्रसर नहीं होऊँगा । इस दरबार से मुझे असीम सम्मान मिला है, इस वंश से मुझे असीम संपत्ति मिली है । मैं कृतघ्न होना नहीं चाहता । सारा राज्य गयास का सुयश गान कर रहा है । ऐसे सम्मान-भूषण नरपति का अनिष्ट करना मैं नहीं चाहता । युक्तियुक्त नहीं दीखता कि मैं विश्वासघात करूँ ।

कुल—क्या उन्मादिनी आशा ने तुमको उत्तेजित किया था ? किस आशा ने तुमको यह पथ प्रदर्शित किया था ?

क्या इतने दिनों तक तुम्हारा यह ज्ञान घोर निद्रा के वशीभूत होकर बेसुध पड़ा था और अब अचानक जाग उठा ? तुम्हारी आशा ऐसी भययुक्त तथा सशंकित क्यों दीख पड़ती है ? उसका पहला बल क्या हुआ ? इस समय तुम छाया से क्यों डरते हो ? अपने कार्य की ओर सचकित क्यों देख रहे हो ? तुमने पहले जो कुछ किया था क्या उन्मादग्रस्त होकर किया था ? तुम्हारे प्रेम का पता मुझे लग गया । दुहिता के प्रति स्नेह की थाह मुझे मिल गई । अपनी वासना को पूरा करने में तुम इतने भयभीत क्यों हो ? पुरुषार्थ द्वारा अपनी अभीष्ट वस्तु को पाने का उद्योग क्यों नहीं करते ? अपनी कार्यकारिणी शक्ति एवं पुरुषार्थ को अपनी वासना जैसा ऊँचा क्यों नहीं करते ? दोनों जब तक एक पद तक नहीं पहुँचेंगे, कुछ बन नहीं आवेगा । मन में उच्च अभिलाषा रखकर भी तुम साहस से काम लेना नहीं चाहते । अपने अंतर से भय को हटाओ, फिर देखो यह कठिन काम किस सुगमता से हो जाता है ।

लाल—स्थिर हो । शांत हो । इस प्रकार मुझे न कोसो । भर्त्सना न करो । मनुष्योचित काम करते मैं कदापि नहीं डरता । वह नीचातिनीच है जो अनुचित काम में हाथ डालता है । उसे मैं नर कभी नहीं कह सकता ।

कुल—तब किस पशु ने मेरे सामने कठिन से कठिन कार्य को भी करने का प्रण किया था ? क्यों तुमने मेरे निकट

इस विषय का उत्थापन किया ? जिस समय मेरे सामने आपने इस उच्च व्रत के पालन करने की प्रतिज्ञा की थी, उसी समय आप मानव नाम के योग्य थे । उच्चतर पद को जो प्राप्त करता है उसमें अधिक मनुष्यत्व एवं पुरुषार्थ अवश्य रहते हैं । समय, सुयोग तथा स्थान का जब अभाव था तब तो तुमने प्रण किया था कि बरबस तुम सुयोग बना लोगे । अब सुयोग पाकर भी तुम साहस छोड़ रहे हो । जो सुयोग से काम नहीं लेता, जो अवसर को हाथ से जाने देता है वह पुरुषार्थहीन गिना जाता है, कायर समझा जाता है । देखो, “मैंने शिशु को पय पान कराया है और मैं जानती हूँ कि माता का शिशु पर स्नेह कैसा प्रबल होता है, तथापि स्तनपान करते समय जब बालक मेरी गोद को सुशोभित करता हुआ मेरे मुँह की ओर देखकर हँस रहा है उस समय भी उसके दंतहीन मुख से कुच को खींचकर और प्रस्तर-खंड पर उसे पटककर मैं उसके भेजा को बाहर कर सकती हूँ, यदि मैं कभी ऐसी प्रतिज्ञा करूँ, जैसी तुमने मेरे सम्मुख गयासुद्दीन के सर्वनाश करने की की थी* ।” पुरुष होकर पुरुषार्थ दिखाओ । कायर क्यों बनते हो ?

लाल—कार्य यदि विफल हो ?

* I have given suck, and know
How tender 'tisto love the babe that milks me;
I would, while it was smiling in my face,

कुल—विफल ! साहस की तंत्री दृढ़ करो, कभी विफल न होओगे । जाकर सबको खूब खिलाओ पिलाओ । आमोद प्रमोद के आवर्त में सबको निमग्न कर दो । फिर मद्य पिलाकर सबको ऐसा उन्मत्त करो कि उनकी बुद्धि की प्रहरी स्मृति धूमाकार धूम में परिणत हो जाय, और हिताहित-ज्ञान का आधार मस्तिष्क सबका तप्त धूम-पात्र जैसा होकर शक्तिहीन हो जाय, तब मदमत्त शूकर जैसे वे आप ही मृतप्राय हो जायेंगे । उस समय कौन सा काम असाध्य होगा ? भला तुम्हीं कहो ? मैं कहती हूँ कि ऐसी दशा में तुम उनके साथ जैसा बताव चाहो, कर सकते हो ।

लाल—तुम धन्य हो । मेरा प्रण स्थिर हुआ । मेरे हृदय से दुर्बलता जाती रही । यह भीषण कार्य साधन करने के लिये मेरे अंग प्रत्यंग गुणबद्ध धनुष जैसे दृढ़ हो गए ।

कुल—सौजन्य दिखाकर समय को छलावा दे । हृदय के यथार्थ भाव को छिपाने के लिये सहास्य बदन पर चतुरता का आवरण दे । फिर जाँ चाहो कर सकते हो ।

लाल—ऐसा ही होगा ।

Have pluck'd my nipple from his boneless gums
And dash'd the brains out, had I so sworn as you
Have done to this.

—Macbeth.

इसी समय एक दासी ने आकर कहा—बाहर लोग स्वामी की राह देख रहे हैं, भोजन का सब प्रबंध हो गया ।

लालचीन बाहर गया । उसने अपनी अनुपस्थिति के लिये गयासउद्दीन से विनीत भाव से क्षमा माँगी ।

फिर भोजन की ठनी । एक सजे हुए दालान में दस्तर-खान बिछा । उस पर नाना प्रकार के सुरस स्वादिष्ठ भोजन चुने गए । सोने चाँदी की रिकाबियाँ लाकर रक्खी गईं । तश्त एवं कटोरियों का बाज़ार सा लग गया ।

सुलतान के साथ सब लोग खाने पीने लगे और देखते देखते मंडली में मदपूर्ण मुस्कराते हुए प्याले नृत्य करने लगे । सोने की सुराहियाँ कहकहा लगाने लगीं ।

फिर क्या था, सारी मंडलां मदिरा देवी की कृपा से चेतनारहित होने लगी ।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

भोजन समाप्त होने पर गयासउद्दीन अपनी मंडली के साथ पुनः उस स्थान पर आया जहाँ नाच हो रहा था। यहाँ नाना प्रकार के हास्य विलास होने लगे। सबको दीन दुनिया की सुधि जाती रही। सुयोग देखकर लालचीन ने सादर गयास से कहा—कृपया आप दूसरे कमरे में चलिए।

बात किसी से छिपी न रही। लोगों ने समझा कि गयास लुत्फुन्निसा से मिलने जा रहा है, क्योंकि लालचीन के घर इसी उद्देश्य से उनका निमंत्रण था। यही सबकी धारणा थी।

गयास के हृदय में लुत्फुन्निसा से मिलने की प्रबल उत्कंठा थी। गयास समझता था कि उसे पाकर वह स्वर्ग-सुख लाभ करेगा। अब उसके दर्शन की आशा से गयास विह्वल हो उठा। मद्यपान से उसकी बुद्धि स्थिर न थी, अतएव चलते समय वह डगमगाने लगा।

हाय, लालचीन ! क्या तुम्हारा यही अतिथि-सत्कार है ? दास का कर्तव्य क्या इसी प्रकार पालन किया जाता है ? इस प्रकार तुम धर्मच्युत क्यों होते हो ? कुलसुम के कहने से इस पैशाचिक कर्म में क्यों हाथ डालते हो ? पाप का परिणाम दुःख ही होता है। समय है, अब भी चेत जाओ।

यह क्या ? लालचीन तो गयास को लेकर एक निर्जन स्थान में पहुँच गया और उसे एक छोटे से कमरे में बैठाकर यह कहता हुआ बाहर निकल आया कि वह अभी आती है ।

पाठक ! लुत्फुन्निसा आज यहाँ नहीं है । कुलसुम ने उसे इसलिये अन्यत्र भेज दिया था जिसमें उसको इस रहस्य का पता न लगे; क्योंकि कुलसुम जानती थी कि उसका कोमल कलेजा यहाँ की दुर्घटनाओं को सहन नहीं कर सकेगा ।

थोड़ी देर में लालचीन दो खोजों के साथ आया । एक के हाथ में अँगीठी थी । उसमें कोयले धधक रहे थे । दूसरे के हाथ में नोकीले सींकचे थे । इन्हें देखते ही गयास के होश उड़ गए और साथ ही साथ उसका नशा भी उतर गया । घबड़ाकर वह उठ खड़ा हुआ और चिल्ला उठा—लालचीन, यह क्या ?

गंभीर भाव से लालचीन बोला—कुछ नहीं । अपनी करनी का फल मनुष्य को भोगना पड़ता है । जिन आँखों से आपने मेरी लुत्फुन्निसा को देखा है वे अब अपने स्थान पर नहीं रह सकतीं ।

गयासउद्दीन सिहर उठा और विह्वल होकर बोला—क्या तुम मेरी आँखें फोड़ने आए हो ? तुम्हारे साथ जो कुछ उपकार किया है, उसका प्रतिफल क्या यही देने आए हो ?

लाल—“उपकार का नाम मत लीजिए । अब सम्हल जाइए ।” दासों से उसने कहा—“तुम लोग अपना काम करो ।”

वे दोनों सींकचीं को तप्त करने लगे । यह दृश्य देखकर गयास सहम गया और कातर भाव से कहने लगा—लालचीन, तुम अब मेरी रक्षा करो । जो चाहोगे, वही दूँगा । जो कहोगे वही करूँगा ।

लाल—अब आपसे मुझे कुछ कहना और चाहना नहीं है । अंतिम बार अब आप आलोक देख लीजिए, नहीं तो सदा के लिये अंधकार ही अंधकार देखेंगे ।

गयास—यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं बादशाह हुआ, तुम्हारा स्वामी हुआ, दक्षिण भारत का भूपाल हुआ । हाय ! यदि मैं एक साधारण मनुष्य रहता तो मुझे आज इस संकट में न पड़ना पड़ता ।

लाल—विलाप का क्या फल है ? जो जैसा करता है वैसा फल पाता है ।

गयास—यह सिद्धांत क्या तुम्हारे लिये नहीं है ? तब मुझे क्यों सताने आए हो ?

लालचीन ने मन ही मन सोचा कि यदि मैं इसके साथ अधिक तर्क वितर्क करूँगा तो यह मेरे हृदय में मृतप्राय पड़ी हुई करुणा को जीवित कर देगा । सोई हुई दया जाग उठेगी । अतएव इस कार्य को शीघ्र ही संपन्न कर देना उचित है । अस्तु, गयास की बातों पर ध्यान न देकर उसने खोजे से कहा—
क्यों रे, तू देर क्यों कर रहा है ?

गयास—“लालचीन, अब भी दया करो । कहो तो राज्य छोड़कर मैं कहीं चला जाऊँ । आँख के लिये मैं राज्य सहज ही में परित्याग कर सकता हूँ । आज से तुम्हारी दुहिता का नाम तक न लूँगा । उसे जो मैंने देखा इसमें मेरा क्या दोष है ? मैं उसे ढूँढ़ने तो नहीं गया । मेरे दृष्टिपथ पर वह आपसे आप आ पड़ी ।” मन ही मन लालचीन ने कहा—“ओह ! इसकी बातें मेरे हृदय पर अधिकार कर रही हैं । उनका प्रभाव मुझ पर पड़ रहा है । देर करने से हो सकता है कि मेरा साहस घट जाय । अभी बहुत कुछ करना है ।” उसने खोजे से कहा—निकम्मे, क्या कर रहा है ? ला, जल्दी ला ।

गयास—लालचीन ! क्या तप्त सींकचे से तू मेरी आँखें निकालेगा ?

लाल—मैंने प्रतिज्ञा की है । निकालनी ही पड़ेंगी । मैंने शपथ की है । अब इससे टल नहीं सकता । लाल सींकचों से मैं आपकी आँखें निकालूँगा । अवश्य निकालूँगा ।

गयास—सींकचे यद्यपि अंगारे से लाल हैं, किंतु इन आँखों के समीप पहुँचते ही आप से आप मेरे आँसू को पीकर अपनी क्रोधाग्नि शांत कर लेंगे और शीतल हो जायेंगे, क्योंकि वह लोहा भी जानता है कि मेरा कोई अपराध नहीं है, मैं सर्वथा निर्दोष हूँ । इतना ही नहीं, वरन् इसके पश्चात् इनके दिल पर मुर्चा पड़ जायगा, क्योंकि मेरे जैसे निर्दोष को सताने के लिये इन्होंने अपने अंग पर अग्नि धारण की

है। तुम क्या लोहे से भी कठोर हो ? इतने दिनों तक तुमने मेरा नमक खाया। लालचीन, यदि देवदूत भी आकर मुझसे कहता कि तुम मेरा अनिष्ट करना चाहते हो तो भी मैं विश्वास न करता। तुम्हारी छोड़ दूसरी कोई जिह्वा मुझे यह विश्वास नहीं दिला सकती कि तुम मेरी आँखें निकालोगे।

लाल—तब आप नहीं मानेंगे। क्यों, कोई है ?

साथ ही साथ एक विकटाकार चांडाल लाल लाल आँखें दिखाता कमरे में पहुँच गया।

उसकी काली डरावनी सूरत देखकर गयास भयभीत हो गया और उसकी ओर से मुँह फेरकर उसने कहा—जो चाहो सो करो किंतु यहाँ इसे न ठहरने दो।

लाल—अच्छा तू जा सकता है।

“ऐसे कामों से दूर ही रहना अच्छा है।”—कहता हुआ चांडाल वहाँ से चला गया।

गयास—देखता हूँ कि मैंने अपने एक हितैषी को यहाँ से हटा दिया। चेहरा डरावना होने पर भी इसका हृदय कोमल है। इसे भीतर बुला लो। इसके संसर्ग से तुम्हारे हृदय में भी दया का संचार हो सकता है।

लाल—अब आप तैयार हो जाइए। खुदा को याद कीजिए कि वह आपको साहस दे।

गयास—खुदा का नाम क्यों लेते हो ? लालचीन, क्या अब कोई उपाय नहीं है ?

लाल—नहीं। किसी उपाय से अब आप अपनी आँखों की रक्षा नहीं कर सकते।

गयास—इस समय तुम्हारी आँखों में यदि एक कण, एक कंकड़ी, एक फतिगी अथवा केश का टुकड़ा पड़ जाय तो तुम्हें ज्ञात होगा कि इस अमूल्य इंद्रिय को कैसा और कितना कष्ट होता है। उस दुःख को अनुभव किए बिना तुम्हें ज्ञात नहीं हो सकता कि तुम्हारा संकल्प कैसा भयंकर है।

लाल—अब आप चुप रहिए। मैं आपसे तर्क नहीं करना चाहता।

गयास—नेत्रों के लिये जिह्वा जितनी प्रार्थना करे, थोड़ी है। तुम मुझे चुप रहने को न कहो। लालचीन ! मैं चुप नहीं रह सकता। यदि चाहो

“गलें पर डाल दो खंजर

सुनो, मैं कुछ न बोलूँगा।

जुबाँ को काट लेना, गर

मेरे मुँह से फुगाँ निकले ॥

किंतु जान रहते अंधा होना नहीं बन पड़ेगा। जिस प्रकार हो, मेरे नेत्रों की रक्षा करो। देखो सोंकचे सर्द हो गए, लाली जाती रही।

लाल—मैं उन्हें फिर तप्त कर लूँ। इन अभागों से कुछ नहीं हो सकता।

गयास—नहीं। सच कहता हूँ, देखो मारे शोक के अग्नि भी मृतक सी हो गई, संताप के कारण उसका ताप जाता रहा, क्योंकि संसार को सुख एवं सहायता प्रदान करने के लिये ही इसकी सृष्टि हुई थी। तुम स्वयं देख लो, इस धधकते हुए कोयले में द्वेष नहीं है। स्वर्गीय साँस ने इसके कुसंस्कार को दूर कर दिया और पश्चात्ताप रूपी भस्म इसके शीश पर छोट दी।

लाल—किंतु फूँककर मैं इसे अभी सजीव कर दूँगा। मेरी साँस की सहायता पाकर यह चैतन्य हो जायगी।

गयास—यदि तुम ऐसा करोगे तो तुम्हारी करनी पर यह लज्जित होकर लाल भँभीरा हो जायगी। इतना ही नहीं, लालचीन ! हो सकता है कि चिनगी उड़कर तुम्हारी आँखों में पड़े और जिस प्रकार मृगया के लिये अधिक पीड़ित किए जाने पर कभी कभी श्वान अपने स्वामी ही पर (जो उसे उत्तेजित करता है) आक्रमण करता है, तुम्हारे ही नेत्रों को यह फोड़ दे। जिन वस्तुओं को तुम मुझे दुःख देने के लिये काम में लाना चाहते हो, वे अपने गुण स्वभाव को परित्याग कर, अपने कर्त्तव्य के पालन में असमर्थ हैं। केवल तुम उस करुणा से वंचित हो जो अग्नि तथा लोहा मुझ पर दिखा रहे हैं। शोक का विषय है कि करुणा के लिये विख्यात होने पर भी मनुष्य करुणा न दिखावे। मानव नाम को क्यों कलंकित करते हो ?

लाल—चुप रहो। तुम्हारा विलाप कुछ काम न आवेगा।

लालचीन की आज्ञा पाकर उसके दासों ने गयास को पकड़कर बाँध दिया और लालचीन ने तप्त सीकचों को गयास की दोनों आँखों में अपने हाथों से गड़ा दिया। फिर क्या था, गयास चीख मारकर बेसुध गिर पड़ा। उसको उसी अवस्था में छोड़कर अपने दासों के साथ बाहर निकलकर लालचीन ने द्वार पर ताला दे दिया।

हाय ! जो गयासउद्दीन एक क्षण पहले दक्षिण भारत का सम्राट् था, इस समय लालचीन का कैदी हो गया। गयास, जो परम सुंदरी लुत्फुन्निसा को देखकर अपनी आँखें तृप्त करने आया था, अपने नेत्रों को गँवाकर अंधा हो बैठा। लालचीन, जो क्षण भर पहले गुलाम था, इस समय स्वाधीन हो उमराओं में अग्रगण्य हो गया। यही संसार की रीति है। यही सृष्टि का नियम है।

बारहवाँ परिच्छेद

गयासउद्दीन से निश्चित होकर लालचीन उस स्थान पर पहुँचा जहाँ दरबारी तथा अमीर उमरा रासरंग में निमग्न हो रहे थे ।

लालचीन को देखकर लोगों ने पूछा—बादशाह सलामत कहाँ हैं ?

लालचीन ने लापरवाही से कहा—आप लोग उनकी चिंता न कीजिए । रात अधिक बीत गई है । वे आराम करने गए । उन्हें अधिक जागना पसंद नहीं है । आप लोग जब तक चाहें, तमाशा देख सकते हैं ।

उमरा—जब सुलतान चले गए तब तो हम लोगों को भी जाना उचित है ।

लाल—सो क्यों ?

उमरा—अब यहाँ पर रहकर ही क्या होगा ? हाँ, आपने जो हम लोगों की मेहमानदारी की उसके लिये हम लोग बहुत बाधित हैं ।

लाल—भला इसकी क्या आवश्यकता है ! मैं तो आप लोगों का एक क्षुद्र सेवक ठहरा, आप लोगों का उचित सत्कार करने की मुझमें सामर्थ्य ही कहाँ है !

उमरा—यह आपकी नम्रता का परिचय देता है। किंतु आपकी उदारता प्रशंसनीय है।

लाल—सब आप लोगों की दया है, और क्या कहूँ।

उमरा—अच्छा, तब हम लोगों को आज्ञा हो।

लाल—सबका जाना तो ठीक न होगा। आप लोगों में से उनका यहाँ रहना तो नितांत आवश्यक है, जिन्हें सुलतान खोज सकते हैं। सुलतान की रुचि कौन जान सकता है ? अतएव भला बादशाह को अकेला छोड़कर आप लोग सब के सब कैसे चले जायँगे !

उमरा—बात तो ठीक है। तब हम लोग बीस पचीस आदमी यहाँ रह जायँ और बाकी लोग अपने अपने घर जायँ।

लाल—आप लोग कोई चिंता न करें। आप लोगों के आराम का सब सामान ठीक कर दिया जायगा।

उमरा—अच्छा ऐसा ही होगा।

फिर क्या था, मंडली भंग हुई। हाथी घोड़े पालकी एक एक कर लालचीन के द्वार से प्रस्थान करने लगे। थोड़ी देर में लालचीन का सदन, जो जनारण्य हो रहा था, जनशून्य हो गया। एक सुरक्षित स्थान में राज्य के प्रधान कर्मचारी लोग रक्खे गए। किंतु उन लोगों को लालचीन पर तनिक भी संदेह नहीं हुआ।

इधर सबके निश्चित हो जाने पर एक एकांत स्थान में हैदर, कुर्बान आदि अपने साथियों को लेकर लालचीन गुप्त परामर्श करने लगा।

इतने दिनों में इसके साथियों पर यह बात प्रकट हो गई थी कि लालचीन असाधारण बल-विक्रम तथा बुद्धि का मनुष्य है। उसमें उत्साह तथा साहस की भी मात्रा कम नहीं है। लोगों ने देखा कि लालचीन के पास धन भी यथेष्ट है और उसे वह गयास के सर्वनाश के लिये व्यय करने पर तैयार भी है।

गयास दिल का बहुत मज़बूत था। अपने ऊपर उसे पूर्ण भरोसा था। इसी से अपने मन की बात वह किसी से कहता नहीं था। जिससे जिस बात का संबंध रहता था उससे वह वही बात कहता था। असीम साहस के कारण उसमें आत्म-गौरव की मात्रा बहुत थी। किंतु उसके विपत्ती समझते थे कि घमंड के कारण गयास ऐसा करता है। इसका परिणाम यह हुआ कि उसके निष्कपट मित्रों की संख्या बहुत कम हो गई। एक तो ऐसे ही भूपालों के सच्चे हितैषी एवं मित्र कम होते हैं, तिस पर भी अपने आप में लीन रहने के कारण उनकी संख्या और भी कम हो जाती है।

लालचीन के षड्यंत्र संगठित करने के कारण गयासउद्दीन से वैरभाव तथा वैमनस्य रखनेवालों की संख्या अकारण ही बहुत बढ़ गई थी और अपनी चातुरी से वह इस मंडली का नेता बन गया था।

अपने चक्र की पूरी सूचना तो लालचीन ने अपने साथियों को भी नहीं दी थी। किंतु इतना सब जानते थे कि वह आज रात में बादशाह को किसी प्रकार पराजित करेगा।

इस मंडली में बहुत देर तक इधर उधर की बातें होती रहीं, क्योंकि लोग चाहते थे कि लालचीन बिना पूछें कुछ भेद कहे । किंतु जब काम की बात उसने एक न कही तब कुर्बान ने पूछा—आपने गयासउद्दीन के दर्प को चूर्ण करने का क्या प्रबंध किया ?

लाल—सब ठीक हो गया । सिंह इस समय पिंजरबद्ध है । कहिए, आगे क्या किया जाय ।

सब—परमात्मा को अनंत धन्यवाद है । यह सुनकर हम लोग बहुत प्रसन्न हुए कि इस दुष्ट का अहंकार धूल में मिल गया । कहिए तो आपने किया क्या, और वह है कहाँ ।

लाल—अभी तो मैंने उसे यहीं रक्खा है, अब जहाँ निश्चय हो भेजा जाय ।

कुर्बान—सिंह को कैद ही करने से काम नहीं चलेगा । उसके दंत तथा नख भी तोड़ने पड़ेंगे; नहीं तो कौन जानता है कि कब आक्रमण कर बैठे ।

लाल—इसका भय न कीजिए । सदा के लिये मैंने उसे बेकाम कर दिया है । मैंने उसकी आँखें निकाल ली हैं ।

कुर्बान—किंतु एकबारगी ऐसा करना उचित नहीं था । इससे तो कहीं अच्छा था कि उसके प्राण ही निकाल लिए जाते । अच्छा, अब जो होना था हो गया । इसके लिये अब चिंता ही करके क्या होगा ? मेरा विचार है कि जहाँ तक शीघ्र

हो सके, अब उसे यहाँ से कहीं हटा ही देना उचित है । देर होने से आप संकट में पड़ सकते हैं ।

लाल—जब तक आप लोगों की कृपा है, मैं किसी का भय नहीं करता । किंतु इस काम को जहाँ तक शीघ्र संभव हो, संपन्न ही करना उचित है । आप लोगों का जो विचार हो किंतु मैंने तो यही स्थिर किया है कि प्रभात होते ही मैं गयास-उद्दीन को “सागर दुर्ग” में भेज दूँ, जिसमें किसी को उसका पता न लगे ।

सब—ठीक है । ठीक है ।

कुर्बान—आपकी बुद्धि असाधारण है । गुलाम के वंश में आप क्यों उत्पन्न हुए ? आपको तो किसी राजवंश को भूषित करना चाहिए था । कितनी सुगमता से आपने कठिनाई को दूर किया । जिस बात के लिये हम लोग इतने दिनों से यत्न कर रहे थे, उसे आपने कैसे सहज में पूरा किया । भला कौन कह सकता है कि गयास ऐसा दंभी बादशाह, जो अपने सामने किसी को गिनता नहीं था, इस प्रकार बात की बात में पंजे में आ जायगा ! हम लोग तो नहीं समझते थे कि कोई अकेला उसे ऐसा नीचा दिखा सकेगा ।

लाल—आप लोगों की अनुकंपा से सब कुछ हुआ है । इसमें मेरी बड़ाई कुछ नहीं है । आप ही लोगों के भरोसे पर मैंने इस काम में हाथ डाला । भगवान् ने कृपा की । हाँ,

इतना अवश्य है कि देश से आज एक कुग्रह दूर हुआ । अपने को गयास सर्वश्रेष्ठ मानता था । पर बात यह रही कि इसके खुशामदी पक्षपातियों के साथ क्या बर्ताव किया जाय । राज्य-कोष, सेना, सब तो उन्हीं के हाथों में है । जब तक इन लोगों को परास्त न किया जायगा तब तक गयास को सिंहासन से गिरा ही कर क्या हुआ ? और आप ही लोग यह भी जान रखिए, कि इसका निबटेरा आज ही रात में हो जाना चाहिए, नहीं तो प्रभात होते ही जब ये लोग गयास-उद्दीन को देखेंगे अथवा उसे अंधा पावेंगे तो इनके क्रोध का ठिकाना न रहेगा और हम लोगों की रक्षा असंभव हो जायगी ।

हैदर—तब ?

कुर्बान—उमस्या तो बहुत विकट है । जान पड़ता है कि हम लोगों का सब श्रम विफल हो गया ।

हैदर—वे लोग तो अभी तक यहीं हैं न ?

लाल—हाँ, रात में तो कोई भय नहीं है । जो बखेड़ा उठेगा वह भोर होने पर ।

हैदर—महाशय, आप तो दरबार का पूरा हाल जानते हैं । यह तो कहिए कि ये लोग हैं कितने ।

लाल—प्रायः पच्चीस ऐसे हैं जिनसे हम लोगों को अधिक भय है । इस समय मैंने उन लोगों को ऐसे स्थान में रख

दिया है जहाँ उन्हें कोई पता नहीं मिलेगा । किंतु रही कल की बात । वही मुझे विकल कर रही है ।

कुर्बान—हम लोगों के सहायक कितने हैं ?

लाल—यह देखकर क्या होगा ? मैं तो आप लोगों से कह चुका कि जब तक ये लोग पराजित नहीं होंगे, राज्यकोष तथा सेना हम लोगों के हाथ नहीं आ सकती ।

हैदर—शम्सउद्दीन को हम लोग आगे क्यों नहीं करते ?

लाल—यह बात भी मेरे ध्यान में आई थी, किंतु इस राह में यह अड़चन है कि एक तो शम्स दुर्बल स्वभाव का है, दूसरे अपने भाई की यह दशा देख-सुनकर वह मुझसे खिन्न जा सकता है ।

हैदर—तब क्या होगा ?

कुर्बान—उन सभी का हम लोग एकदम ही क्यों नहीं कर देते ? इस समय तो वे बेसुध सोए पड़े हैं ।

लाल—बात तो ठीक है; किंतु कल जब सब लोग यह सुनेंगे कि मेरे यहाँ ये लोग मारे गए और यहीं से बादशाह गायब हो गए तब लोगों के क्रोध की सीमा न रहेगी । और सर्वसाधारण की निंदा तथा आक्रमण से अपने को बचाना मेरे लिये कठिन ही नहीं वरन् असंभव हो जायगा । और यही कौन जानता है कि सेनापति के न रहने पर सेना हम लोगों की बात मानेगी ।

हैदर—सबको कैद कर किसी दूर देश में भेज दिया जाय और कल यह घोषणा कर दी जाय कि न जाने सुलतान को लेकर वे लोग कहाँ चले गए ।

लाल—भला यह विश्वास ही कौन करेगा ? और इतने लोगों को भेजा ही कहाँ जायगा ? यदि एक दो रहते तो कुछ हो भी सकता था । भला पच्चीस पच्चीस आदमियों को भेजने का क्या प्रबंध किया जा सकता है ?

कुर्बान—अच्छा यह तो कहिए कि आज आपके यहाँ शाहज़ादा शम्सउद्दीन क्यों नहीं आए ।

लाल—उन्होंने अपने भाई के साथ जलसे में आना पसंद नहीं किया और अपने लक्ष्य की ओर ध्यान देकर मैंने भी आग्रह करना उचित नहीं समझा । इस संकट में उन्हें डालना मुझे उचित नहीं ज्ञात हुआ ।

कुर्बान—आप उनसे जाकर क्यों नहीं मिलते ? यदि उनकी सहायता हो तो हम लोगों की सब कठिनाई जाती रहे ।

लाल—इसकी चेष्टा तो की जा सकती है । परंतु समय बहुत कम है । रात बहुत ढल गई है । हवा में प्रभातीय ठंडक एवं सुगंध आ गई । सूर्योदय के पहले ही सब काम ठीक हो जाना उचित है ।

हैदर—समय कम नहीं है । जो आप जायँ तो सब काम ठीक हो जा सकता है । किंतु यहाँ से जाने के पहले गयास-उद्दीन को अन्य स्थान में भेजने का पूरा प्रबंध करके जाइएगा,

जिसमें जो कहीं आपके आने में देर भी हो तो यहाँ से जानेवाले चले जायँ ।

लाल—आप लोग जो कहेँ मैं करने को तैयार हूँ । गयासउद्दीन को 'सागर दुर्ग' में भेजने का सब प्रबंध हो गया है । किंतु हम लोगों में से एक को साथ जाना चाहिए । दासों पर ऐसे कठिन कामों को छोड़ना अच्छा न होगा । जाना दूर है । राह में न जाने कैसे कैसे संकटों का सामना करना पड़े ।

हैदर—आप जिसे कहिए जाय ।

लाल—मेरे जानते कुर्बान का जाना अच्छा होगा । इनकी बल-बुद्धि पर हम लोग पूरा भरोसा कर सकते हैं । समयानुकूल ये अपना सब काम ठीक कर लेंगे । इन्हें कुछ सिखाना पढ़ाना न पड़ेगा ।

कुर्बान—मुझे कुछ आपत्ति नहीं है । आप लोग मुझे जिस काम में चाहें लगा सकते हैं ।

सब—आप अवश्य जायँ । जिस उत्तमता से आप इस कार्य को संपन्न कर सकते हैं, दूसरा नहीं कर सकता ।

कुर्बान—आप लोग जो कहेँ ।

लाल—तब आप जाकर यात्रा की तैयारी कीजिए । देा घंटे के भीतर आपको प्रस्थान करना होगा । दुर्ग के स्वामी से सब ठीक है । वहाँ पहुँचने पर न तो आपको कुछ कहना सुनना होगा और न आपको वहाँ कोई कष्ट ही होगा । हाँ,

आपसे यह कहना तो बाहुल्य है कि भेद खुल जाने से हम लोग बड़े संकट में पड़ेंगे । आप यहाँ की चिंता न करें । यहाँ सब ठीक कर लिया जायगा । जो आदमी आपके साथ जा रहे हैं उन पर आप पूरा भरोसा कर सकते हैं । वे पूरे विश्वास योग्य हैं ।

कुर्बान—खुदा चाहेगा तो सब ठीक हो जायगा । अपनी आंर से तो मैं त्रुटि नहीं करूँगा ।

लाल—अच्छा, तब मैं भी शाहज़ादे के समीप जाता हूँ । आप लोग यहीं ठहरकर उमराओं पर दृष्टि रखिएगा ।

सब—अच्छा ।

तेरहवाँ परिच्छेद

राजप्रासाद में शम्सउद्दीन निश्चिंत सोया हुआ था। द्वार पर खोजे पहरा दे रहे थे। लालचीन गुलामों का सरदार था, अतएव इसे सब गुलाम आदर की दृष्टि से देखते और डरते भी थे। शाहज़ादे के शयनागार के द्वार पर लालचीन के असमय पहुँचने से खोजे अकचका गए। सब के सब अभिवादन कर एक ओर खड़े हो गए। किसी में यह साहस न था कि उससे आने का कारण पूछे, तिस पर आज जब स्वयं सुलतान इसके यहाँ निमंत्रण में गए थे।

कड़ककर लालचीन ने कहा—मैं शाहज़ादे से भेंट करना चाहता हूँ।

खोजा—शाहज़ादा तो सो रहे हैं। इतनी रात को उन्हें जगाया क्योंकर जाय ?

लाल—जैसे हो। किंतु मुझे इसी समय उनसे मिलना है।

खोजा—आप जैसा कहें। पर जगाने की आज्ञा तो हम लोगों को नहीं है।

लाल—अच्छा यह तो कहो कि शाहज़ादा यहाँ अकेला या और कोई है।

खोजा—इस समय तो अकेले ही हैं ।

लाल—कितनी देर से सोए हैं ?

खोजा—प्रायः चार घंटे हुए ।

लाल—तब तो जागने में कोई हानि नहीं है, विशेषतः जब इतना आवश्यक काम मुझे है ।

खोजा—आप जैसा चाहें करें । किंतु हम लोगों को न तो जगाने का अधिकार है और न हम लोग जगाने का साहस ही कर सकते हैं ।

लाल—अच्छा, जब भीतर कोई नहीं है तब मैं आप ही जाकर उठाता हूँ । तुम लोग देखना, कोई भीतर न जाय ।

भीतर जाकर लालचीन ने देखा कि तुर्की कालीन पर हाथीदाँत का पलँग पड़ा है । पलँग पर चीरफोनवत् श्वेत बिछौना बिछा है । शाहज़ादा शम्स कोमल सुंदर तकियों पर माथा दिए सोया है । उसकी देह एक भीनी रेशमी चादर से ढकी हुई थी । चादर को छेदकर बदन की आभा बाहर छिटक रही थी । कमरे में कहीं कोई नहीं था । एक शमादान एक कोने में जल रहा था । तुर्की कालीन में पैर धँसा जाता था । दीवार से केवल दो चार तस्वीरें लटक रही थीं । सारांश यह कि यह शयनागार हर प्रकार साफ़ सुथरा, सुंदर तथा मनोहर था । इसकी सजावट सामान्य होम पर भी चित्त को सहज में रंजित करती थी ।

इधर उधर ध्यान न देकर लालचीन सीधा शाहज़ादे के पलंग के पास पहुँच गया। उसने वहाँ देखा कि सुषुप्त शाह-ज़ादे के सुंदर प्रफुल्ल आनन पर कहीं चिंता या विषाद की रेखा नहीं है। कमलवत् उसके नेत्र ढके हैं। पहले तो उसकी सुखनींद भंग करने का उसे साहस नहीं हुआ। उसकी मन में आया कि इसके कोमल कलेजे को अपनी चिंता से क्यों डाँवाँडोल करूँ। फिर यह सोचकर कि समय नष्ट करने का अवसर नहीं है, जो मुहूर्त बीता जाता है फिर न आवेगा, प्रभात होने के पहले यदि सब ठीक न हो गया तो वह किसी काम का न रहेगा, उसने शाहज़ादे के पैरों पर हाथ दिया। लालचीन बहुत दिनों तक दास का काम कर चुका था, इसी से वह इन लोगों के आचार-व्यवहार तथा स्वभाव से पूर्ण परिचित था। दो चार बार पैर पर हाथ फेरते ही शाहज़ादे की आँखें खुल गईं और असमय अपने शयनागार में मनुष्य को देखकर वह अचंभे में आकर पलंग पर उठ बैठा। उसकी घबड़ाहट देखकर लालचीन ने कहा—घबड़ाने की कोई बात नहीं है। आपका सेवक लालचीन सामने खड़ा है। असमय सुखनिद्रा भंग करने का अपराध तो अवश्य हुआ। दंड मिले, सादर शिरोधार्य है।

शम्स—क्यों, बात क्या है? क्या भोर हो गया? किंतु मेरी आँखें कसमसा रही हैं, बदन अलसा रहा है, जान पड़ता है अभी कुछ रात बाकी है।

लाल—प्रायः एक पहर रात बाकी होगी ।

शम्स—आप इस समय क्यों आए ? कुशल तो है ?

लाल—सब ठीक है । परंतु—

शम्स—परंतु क्या ? आज तो सुलतान आपके यहाँ निमंत्रण में गए थे । क्या कोई नई बात है ? वहाँ कोई नवीन घटना तो नहीं हुई ?

लाल—कुछ ऐसी बात तो नहीं है ।

शम्स—तब तुम मेरे निकट क्यों आए हो ? अपनी पदवृद्धि की आशा में तुम बादशाह से जो निदनीय संबंध जोड़ना चाहते हो, उसे मैं भली भाँति जानता हूँ । और यही कारण है कि तुम्हारा निमंत्रण पाने पर भी मैं तुम्हारे यहाँ नहीं गया ।

लाल—यह आपकी भूल है । आप जैसे सुयोग्य गुणवान् रूपवान् कुटुंब के पाने की आशा में मैं सारे संसार का तिरस्कार कर सकता हूँ ।

शम्स—तब ?

लाल—तब क्या ? लुत्फुन्निसा आपको छोड़कर किसी दूसरे की नहीं हो सकती ।

शम्स—तब दरबार में मैंने क्या सुना था ?

लाल—भूठी ख़बरें ।

शम्स—मैं तो इसका विश्वास नहीं करता । परंतु जब आप स्वयं कहते हैं तब तो असंभव प्रतीत होने पर भी मानना ही पड़ता है ।

लाल—असंभव क्यों ? जो मैं कहता हूँ उसे आप सत्य जानिए । आपके वहाँ न जाने से लोगों को बड़ा दुःख हुआ है और यही कहने मैं यहाँ आया हूँ ।

शम्स—बादशाह सलामत लौट आए ?

लाल—अभी नहीं । परंतु वहाँ का जलसा समाप्त हो गया । भोजन आदि हो गया ।

शम्स—तब क्या हो रहा है ?

लाल—आप ही के विषय में लोग परामर्श कर रहे हैं ।

शम्स—मेरे विषय में परामर्श कैसा ? आपकी एक बात भी मेरी समझ में नहीं आती ।

लाल—आप समझने की इच्छा नहीं रखते इसी से नहीं समझते हैं । जिस बात को सारा नगर समझ रहा है, उसे यदि आप नहीं समझ सकते तो इसमें दोष किसका है ?

शम्स—आप मुझसे साफ़ साफ़ बातें करें । इस ढंग की रहस्यपूर्ण गुप्त बातें मैं समझ नहीं सकता ।

लाल—कूटनीति की बातें इसी ढंग की होती हैं । राज-वंश में आपने जन्म धारण किया है । हो सकता है कि राज-छत्र एक दिन आपके शीश पर छाया करे; संभव है कि राज-सिंहासन को एक दिन आप सुशोभित करें । तब ऐसा क्यों कहते हैं कि राजनैतिक गूढ़ रहस्यों को समझने में आप असमर्थ हैं ।

शम्स—आज आपकी बातें बेतुकी हो रही हैं। आपका कथन मेरी बुद्धि को चक्कर में डाल रहा है। मैं संशय में नहीं रहना चाहता। अपना अभिप्राय साफ शब्दों में कहिए।

लाल—कहना क्या है ? गुण स्वभाव का सभी आदर करते हैं। बादशाह की विषयासक्ति ने सबका मन उनकी ओर से फेर दिया है। उनके कुव्यवहार एवं दर्प ने लोगों के हृदय में द्वेषानल प्रज्वलित कर दिया है। उन्होंने लोगों की आशा पर पानी फेर दिया। पहले लोग समझते थे कि वे एक सुयोग्य शासक होंगे किंतु क्रमशः यह विचार लोगों के मन से हटता गया और आज तो कोई उनसे संतुष्ट नहीं है।

शम्स—मैं तो ऐसा नहीं जानता था।

लाल—हो सकता है। एक तो आपके सामने मारे भय के कोई कहने का साहस न करेगा। तिस पर भी यह निश्चय नहीं है कि सुनकर आप विश्वास करेंगे वा नहीं। परंतु अब बिना कहे काम चलने का नहीं अतएव बहुत सोच विचार, तर्क वितर्क के बाद यह संवाद आपके समीप पहुँचाने को मैं नियत हुआ हूँ। आप ही विचारिए न कि जो प्रीति एवं व्यवहार आपके साथ उनका पहले था वह आज है वा नहीं। वैर प्रीति छिपाए नहीं छिपती। अच्छे बुरे का विचार पशु पक्षी भी कर सकते हैं।

शम्स—सुलतान को जैसा आप लोग समझते हैं, मैं नहीं देखता।

लाल—हो सकता है। दूसरे तो भ्रातृस्नेहरूपी स्रोत में कुछ निमग्न नहीं हो रहे हैं। परंतु इतना अवश्य कहूँगा कि आपका सोचना विचारना कुछ काम न आवेगा। अब सबकी यही धारणा है कि आपके भाई यदि सिंहासनासीन रहेंगे तो यहाँ की प्रजा कभी सुखी नहीं हो सकती।

शम्स—यह लोगों का भ्रम है। प्रजा के लिये उत्तम प्रबंध बादशाह सदा सोचा करते थे। हाँ, इधर की बात तो मैं ठीक नहीं कह सकता, क्योंकि आज कल उस ओर मेरा आना जाना कम हो गया है।

लाल—बात ऐसी ही है। पहले से अब से आकाश पाताल का अंतर हो गया है। बादशाह अब वह नहीं हैं जो पहले थे। दो चार दस ऐसे लोगों को छोड़कर जो स्वार्थ के वशीभूत होकर अपने सुविचार को खो बैठे हैं, उन्हींसे अब कोई संतुष्ट नहीं है। अतएव सर्वसाधारण की ओर से मैं आपके पास भेजा गया हूँ कि आप प्रजावर्ग की रक्षा करें। जब तक आप इस काम में हाथ न डालेंगे, लोगों का दुःख दूर न हो सकेगा।

शम्स—मैं क्या कर सकता हूँ ? मैंने प्रतिज्ञा की है कि उनके किसी काम में हस्तक्षेप नहीं करूँगा।

लाल—ऐसा करने से काम न चलेगा। अपनी उदासीनता छोड़िए। मैं जो कहता हूँ उसे ध्यानपूर्वक सुनिए।

जिस प्रकार हो, आप उन उमरावों का दमन कीजिए जो प्रजा को दुःख दे रहे हैं ।

शम्स—मेरे किए क्या होगा ?

लाल—क्यों नहीं । जिसके हाथ पैर में शक्ति है, जिसे हित अनहित सोचने की बुद्धि है, जिसमें विवेक है, जो सुविचार का स्वामी है, जो अपने विचारों को कार्य में परिणत करने का साहस एवं उत्साह रखता है, उसी की संसार में विजय है, दुनिया में उसी की तूती बोलती है, उसी को देखकर वैरियों का हृदय जलता है । उसी की विजय-वैजयंती देश में फहराती है । राजवंश में आपने जन्म धारण किया है । राजदंड वहन करने का आपके हाथों में बल है । आप आशंका किस बात की करते हैं ? आपको भय क्या है ? अवसर से लाभ उठाइए । ठीक समय पर धारा और प्रवाह पर आरोहण कीजिए । फिर देखिए क्या नहीं हो सकता ।

शम्स—आपस की फूट अच्छी नहीं है ।

लाल—देश का हित-साधन आपका धर्म है । सेना आप की सेवा करेगी, कोष आपके हाथ में रहेगा । उमराव आप की सहायता करेंगे । कर्मचारी आपकी आज्ञा मानेंगे । प्रजा सुखी होगी । राज्य में शांति फैलेगी । आप भय न करें । मैं सब कुछ ठीक कर दूँगा ।

शम्स—किंतु अपने भाई के विरुद्ध मैं शस्त्र धारण नहीं कर सकता, उन्हें सिंहासनच्युत करने में मैं अग्रसर नहीं हो सकता ।

लाल—आपको यह भी न करना होगा । इस कार्य का पूर्ण भार मेरे ऊपर छाड़ दीजिए । प्रभात समय दरबार में उपस्थित होकर आप केवल सिंहासन पर बैठ जाइए । सब ठीक हो जायगा ।

शम्स—आपकी बातें सुनकर मेरा दिल दहलता है । परिणाम की ओर ध्यान देने से मेरा हृदय काँपता है । आप मुझे क्षमा करें, मैं राज्यसुख नहीं चाहता । मैं जिस अवस्था में हूँ उसी में रहना मुझे रुचिकर है । आज लोग सुलतान की निंदा करते हैं, उनके विरुद्ध शस्त्र धारण करने पर उद्यत हैं; किंतु चार दिन पहले उन्हीं की इतनी प्रशंसा किया करते थे । यही दुनिया है । इसकी गति कदापि स्थिर नहीं होती । धन के साथ बड़ी बड़ी आपत्तियाँ हैं । उनका सामना करने की सामर्थ्य मुझमें नहीं है ।

लाल—मैं आज तक यह नहीं जानता था कि आप ऐसे कापुरुष हैं, आपका हृदय ऐसा दुर्बल है । यदि मैं ऐसा जानता तो लुत्फुन्निसा को आपके हाथ में समर्पण करने की प्रतिज्ञा न करता । और यदि आप इस समय हम लोगों के लिये कुछ कष्ट उठाना स्वीकार न करेंगे तो मैं निश्चय जानता हूँ कि अपनी दुहिता के लिये मुझे कोई दूसरा उपयुक्त पात्र ढूँढ़ना होगा । मुझे ऐसी आशा न थी कि आप इस प्रकार मेरा अनादर करेंगे । हाय हाय ! मैं उन लोगों से जाकर क्या कहूँगा ? क्या देश में, इस राजवंश में, कोई ऐसा नहीं है जो

दक्षिण भारत के दुःख को दूर कर सके ! अच्छा, अब मैं जाता हूँ । मुझे सबसे बड़ी चिंता अपनी कन्या की पड़ी । देखे उसे क्या कहकर तोष दूँगा ।

शम्स—आप मुझे घृणा की दृष्टि से क्यों देखते हैं ?

लाल—क्या यह पूछने की बात है ? अब मुझे कोई उपाय नहीं सूझता कि क्या करूँ । आपके हित के लिये मैंने इतना किया और आप इस प्रकार आगा पीछा करने लगे हैं । यदि मैं जानता तो क्यों इस काम में हाथ डालता ? जिसके लिये इतना किया, उसे इस प्रकार पीछे हटते देख मेरा उत्साह भंग हो गया । जो अपने स्वत्व पर खड़ा नहीं रह सकता, जो अपने अधिकार को प्राप्त करने की उमंग नहीं रखता, जो अपने श्रेय की कामना नहीं करता उससे क्या आशा की जा सकती है ? सच है, जो अपनी सहायता आप नहीं कर सकता उसकी सहायता दूसरा क्या कर सकता है ? कल्पवृक्ष जानकर मैंने कपास की सेवा की । सब कुछ मेरे भाग्य का दोष है । दूसरे को क्या कहूँ ।

शम्स—भाई साहब सहज में सिंहासन कैसे छोड़ेंगे ?

लाल—उसकी चिंता आपको क्या है ? कल आप उन्हें यहाँ पावेंगे नहीं । दक्षिण भारत में कल से उनका किसी को दर्शन नहीं होगा । किंतु बात यह रही कि राजगद्दी पर कल बैठेगा कौन ?

शम्स—क्या ? भाई साहब क्या हुए ?

लाल—यह जानकर आप क्या करेंगे ? यदि आप में साहस हो तो आप राजदंड धारण करें, नहीं तो फिर जैसा होगा देखा जायगा ।

शम्स—अच्छा, मैं इस पर विचार करूँगा ।

लाल—विचार करने का समय नहीं है । हाँ वा नहीं इसी समय कहना होगा । जिस गयासउद्दीन ने उस रमणी पर कुदृष्टि डाली जिसे आप धर्मरूप से अपनाना चाहते हैं उस गयासउद्दीन पर जब आप इतनी दया दिखला रहे हैं तब आपसे क्या आशा की जा सकती है ? अच्छा, अब मैं जाता हूँ । सुअवसर आपके सामने उपस्थित हुआ है और आप उसे लात मार रहे हैं । अब परिणाम जो होगा, देखा जायगा । किंतु आपकी उन्नति का पथ अब बंद हो गया । अधिक मैं क्या कहूँ ।

शम्स—अच्छा आप जो कहिएगा किया जायगा, किंतु थोड़ी देर के लिये आप मुझे अकेला छोड़ दें । मेरा चित्त स्थिर नहीं है । मेरे हृदय में विचित्र भावनाएँ उदय हो रही हैं । उन पर विचार करने का मुझे समय मिलना नितांत आवश्यक है ।

लाल—आपकी जैसी मरज़ी । मैं आशा करता हूँ कि सुबह के दर्बार में आपको पाऊँगा । आगे सब मैं ठीक कर लूँगा ।

शम्स—अच्छा ।

शम्सउद्दीन से विदा होकर लालचीन अपने घर की ओर चला । उसके हृदय में आनंद का स्रोत उमड़ आया था । चारों ओर अपनी विजय देखकर उसके आह्लाद की सीमा न थी । प्रभात हो चला था । पूर्व दिशा में उषा का आगमन हो गया था, जिसे देखकर लालचीन का हृदय-कमल विकसित हो आया ।

चौदहवाँ परिच्छेद

घर पहुँचकर लालचीन ने देखा कि उसके सदर फाटक के समीप रक्त की नदी बह रही है। उसकी आँखें मनुष्यों की लोथों पर पड़ी। वहाँ कहीं कटे सिर पड़े हैं, कहीं टूटे हाथ गिरे हैं, कहीं माथे से जुदा धड़ भूमिस्थ हैं। किंतु आसपास लालचीन ने किसी को नहीं देखा। रह रहकर उसे नाना प्रकार की चिंता होने लगी, उसके मन में नाना प्रकार के कुविचारों एवं कुभावनाओं का उदय होने लगा। किसी बात पर उसका मन नहीं ठहरता। उधर घर की ओर पाँव धरने का उसे साहस नहीं होता, इधर वहाँ ठहरते भी नहीं बनता। कभी उसके मन में आता कि कहीं उसके घरवालों को गयास के संगियों ने मार तो नहीं डाला, कभी सोचता कि विद्रोहियों पर संदेह होने के कारण इन लोगों ने तो आक्रमण नहीं किया। कभी सोचता कि गयास को मुक्त करने की चेष्टा में यहाँ आपस में युद्ध तो नहीं हुआ। वह कभी एक, कभी दूसरी बात सोचता रहा। किंतु उसमें यह शक्ति न थी कि साहस पर भार देकर किसी शव के मुँह की ओर तो देख ले कि कौन पड़ा है। और जो हो, किंतु लालचीन को यह निश्चय हो गया कि ऐसे समय में उसका घर छोड़कर बाहर जाना अच्छा नहीं हुआ। सारी राह उसे इस बात

की खुशी थी कि किसी प्रकार शम्स राजी हो सका । किंतु यहाँ पहुँचकर उसे ज्ञात हुआ कि उसका सब परिश्रम विफल गया । उसका उद्योग कुछ काम नहीं आया ।

उसने सोचा कि जब गृहस्थी के सुख से वंचित हुआ तब दक्षिण भारत का शासन-सूत्र हाथ में लेकर क्या करूँगा । इस समय इसकी जो दशा थी, उसका उल्लेख कठिन ही नहीं वरन् एक प्रकार से असंभव ही है । कल प्रभात से जो जो घटनाएँ उसके घर में हुईं और जिनका वह सूत्रधार था उन्हें एक बार स्मरण कर वह विचलित हो गया । जिस साहस के सहारे वह अभी तक काम करता था उसने अकस्मात् उसका साथ छोड़ दिया । उसका मुखड़ा विवर्ण हो गया । शरीर थरथराने लगा । सारी देह पसीने से भर गई और बेचारा विवश हो वहीं बैठना चाहता था कि एक दास सामने से निकल आया ।

उसे देखकर लालचीन ने अपने को सम्हाला और स्वामी को सामने देख वह भी दौड़कर वहाँ पहुँच गया । यह लालचीन का विशेष विश्वासपात्र था । अतएव लालचीन ने उससे पूछा—क्या मामला है ? यह सब क्या देख रहा हूँ ? और लोग कहाँ हैं ? वह कैसा है ?

दास—कोई विशेष चिंता की बात नहीं है । सब ठीक ही ठीक है । आपके कहे अनुसार सुलतान की सवारी सुबह होने के पहले ही यहाँ से प्रस्थान कर गई ।

लाल—यह तो ठीक हुआ । किंतु रक्त-पात क्योंकर और किसका हुआ ?

दास—जिस समय सुलतान की सवारी अंतःपुर से निकली और उसके साथ जाने के लिये लोग यहाँ एकत्र होने लगे उसी समय न जाने क्योंकर प्रधान मंत्री सब बातें जान गए । उन्होंने सबको जगा दिया और सेनापति तथा अपर उमराओं के साथ सुलतान की सवारी पर धावा किया । इधर तो सब लोग पहले ही से सतर्क थे । फिर क्या था, उभय पक्ष के लोग आपस में गुथ गए । अंधकार के कारण कोई किसी को पहचान न सका, इसी से इस प्रकार रक्तपात हो गया ।

लाल—किसकी आज्ञा से यह युद्ध आरंभ हुआ ?

दास—आज्ञा किसकी कहूँ । जब सुलतान के पक्ष के लोग आ जुटे तब विवश होकर हम लोगों को भी हथियार उठाना पड़ा ।

लाल—अच्छा, जो होना था सो तो हो चुका । किंतु यह तो कहो कि अंतःपुर की ओर इन लोगों ने धावा तो नहीं किया ।

दास—उधर जाने की किसको सुधि थी ? चार पाँच के सर धड़ से जुदा होते न होते सबके पैर उखड़ गए । जिसने जिधर रास्ता पाया, वह उधर ही भागा ।

लाल—और लोग कहाँ हैं ?

दास—इस समय यहाँ बाहरी कोई नहीं है । घरवाले जहाँ तहाँ पड़े हैं । सब के सब भयभीत हो रहे हैं । हम लोगों

ने सबसे यही कहा कि डाकू आए थे किंतु मारकर भगा दिए गए ।

लाल—यह तो तुमने अच्छा किया । इसके लिये तुम्हें यथेष्ट पुरस्कार मिलेगा । जाओ, जहाँ तक शीघ्र हो सके इस जगह को साफ कराने का प्रबंध करो ।

दास—जैसी आज्ञा । सब ठीक हो जायगा । आप ही की राह देख रहा था, नहीं तो अभी तक सब ठीक हो गया होता ।

लाल—कुछ चिंता नहीं । सबसे यही कहा कि डाकूओं ने छापा मारा । कर्मचारियों को मारकर ये सब सुलतान को कहीं ले भागे । दरबार बैठने के पहले यह समाचार सारे नगर में फैल जाय । फिर सब ठीक कर लिया जायगा ।

दास—जैसी मरज़ी ।

लाल—असल भेद कोई बायबी आदमी जानता तो नहीं ?

दास—जी नहीं । यही हम निज के दो चार आदमियों को छोड़कर और कोई नहीं जानता ।

लाल—तुम लोगों के लिये कोई परवा नहीं है, तुम लोगों पर मेरा पूरा भरोसा है । मैं भली भाँति जानता हूँ कि तुम लोगों से यह भेद नहीं खुल सकता ।

दास—तन में जब तक जान है तब तक तो कोई नहीं जान सकता । बाद की बात क्योंकर कहूँ ?

लाल—अच्छा तो अब जाओ, तुम अपने काम में लगो* ।

पहर भर दिन चढ़ते चढ़ते सारे नगर में यह संवाद फैल गया । जिसने जहाँ सुना वहीं वह अवाक् रह गया । एक

* कितने इतिहास-वेत्ताओं का कथन है कि लालचीन जब सुलतान को लेकर अन्यत्र गया तब राजा की आज्ञा से प्रधान कर्मचारी तथा उमराव यह सोचकर अपने अपने घर चले गए कि आज लालचीन की दुहिता के साथ सुलतान का बहुत शीघ्र संबंध होगा । किंतु गयासउद्दीन की आंखें फोड़ने के पश्चात् लालचीन ने सुलतान के नाम से एक एक कर प्रधान उमरावों को उनके घर से अपने यहाँ बुलाकर उनका वध किया । कहते हैं कि इनकी संख्या प्रायः पचीस थी ।

“ Perhaps the most picturesque of these records is that concerning King Ghias-ud-din Bahmini and Lalchi, one of the Principal Turki slaves of the household. This man possessed a daughter of exquisite beauty, whom the seventeen-year-old monarch happened to see and instantly desired. The father refused, the king persisted. So Lalchi laid his plans. He invited the passion-struck lad to an entertainment at his house, plied him with wine, and then induced him to order his attendants to withdraw, in order that the exquisite beauty might appear. The half-intoxicated prince attempted flight when Lalchi returned from the harem not with a

को दूसरे से पूछने का साहस नहीं हुआ। सब के सब मंत्रमुग्ध भुजंग से निःस्पंद हो गए। इस घटना पर आलोचना करने का साहस किसी में न रहा। किंतु यह अवस्था अधिक देर तक न ठहरी। देखते देखते सारे नगर में शोक, संताप, व्याकुलता, भय, चिंता, निराशा तथा दुःख छा गए। यह शोक-समाचार दावानल सा सर्वत्र फैल गया। कोई गयास की दशा पर आंसू गिराता। कोई मंत्री, सेनापति तथा अपर कर्मचारियों की गति पर विलाप करता। कोई डकैती की बात सच्ची मानता। कोई उसे सुनकर हींठ चमकाता। कोई दबी जुबान लालचीन को गालियाँ देता। कोई खुले मैदान उसकी निंदा करता। कोई शम्स को दोषी ठहराता। कोई उसके पत्त

girl, but a naked dagger, rolled down some, and the next instant both his eyes were blinded ; whereupon Lalchi coolly sent for the royal attendants one by one, as if by the king's order, and put them to death severally as they appeared. As these were mostly nobles and officials of high rank, he found no difficulty in deposing Ghias-ud-din, who had only reigned for six weeks !” F. A. Steel's India Through the Ages, page 130.

परंतु इस अमानुषिक जघन्य घटना का वर्णन मुझे नहीं भाषा। अतएव इसका उल्लेख स्वेच्छानुसार किया गया। किंतु अपर घटनाओं को ज्यों की त्यों इन पृष्ठों में लिखने की चेष्टा की गई है।

में खड़ा हो उसकी निर्दोषिता को यथासाध्य सिद्ध एवं प्रमाणित करने की चेष्टा करता ।

अंधकार के कारण कोई किसी को पहचान नहीं सका था । अतएव डकैती की बात का सप्रमाण खंडन करने में कोई समर्थ नहीं था । अस्तु, सर्वसाधारण में यह बात भली भाँति फैल गई कि लालचीन के मकान पर छापा पड़ा था । नगर-निवासियों को यह बात हृदयंगम कराने में लालचीन के आदमियों ने कुछ कसर नहीं की । सबसे यही कहा जाता था कि डाकुओं के हाथ कर्मचारी आहत हुए और सुलतान कैद ।

इधर लालचीन की राय से गयास की खोज में देश-देशांतर में चर भेजे गए । सब लोगों को यह विश्वास दिलाने का भी यत्न किया गया कि लालचीन के दासों ने प्राणपण से डाकुओं का सामना किया किंतु उनकी संख्या इतनी अधिक थी कि अंत में दासों को हार माननी पड़ी । संसार में सब प्रकार के लोग हैं । यहाँ कोई बात ऐसी नहीं होती कि जिससे सब प्रसन्न हों अथवा जिसे सब उत्तम और उचित समझें । किसी ने इसे सत्य माना और किसी का यह विचार हुआ कि षड्यंत्र रचकर, शम्स की सहायता से, लालचीन ने यह काम किया है और अब अपना अपराध छिपाने को यह झूठी घोषणा कर रहा है ।

किंतु कोई कर ही क्या सकता था ! प्रधान कर्मचारियों के न रहने से लालचीन की शक्ति बढ़ गई । शम्स तो इसके

पंजे में पहले ही से था । अतएव लालचीन को सब सहज ही में ठीक कर लेने में कुछ विलंब न लगा । कनिष्ठ पुत्र होने के कारण राजमाता का अधिक स्नेह शम्स ही पर था । अतएव इसे सिंहासनारूढ़ करने में लालचीन को राजमाता से भी यथेष्ट सहायता मिली । भीतर जिसके मन में जो आया सोचता रहा, किंतु बाहर किसी के किए कुछ नहीं हो सका; यहाँ तक कि खुले दरबार में शम्स को सिंहासन मिला और लालचीन प्रधान मंत्री नियत हुआ; क्योंकि गयास ही के समय में वह गुलामी से हटकर उमराओं की श्रेणी में जा चुका था । अतएव मंत्री के पद पर पहुँचने में उसे अधिक कठिनाई नहीं हुई और शतरंज के प्यादे सा देखते देखते लालचीन गुलाम से वज़ीर हो गया । किंतु वह सीधा चलकर होता है और यह वक्र गति अवलंबन कर हुआ ।

यही संसार है । अब लालचीन को हर ओर विजय ही विजय दीख पड़ने लगी । अब, कोई अवरोधक न रहने के कारण, उसकी मनोरथ-बेलि चारों ओर से लहलहा उठी ।

यथासमय दरबारआम में शम्सउद्दीन ने पदार्पण किया । उसके आनन से पूर्ण शोक प्रकट होता था । लोगों को ज्ञात हुआ कि इस दुर्घटना से वह यथार्थ में शोकाकुल हो गया है । भाई के वियोग में वह यथार्थ में अत्यंत मलिन और दुखी हो रहा है । पहले तो नियमानुसार गयास के लिये शोक मनाया गया, किंतु कोई दूसरा उपाय न देख और राज-

सिंहासन को शून्य छोड़ना उचित न समझकर लोगों ने शम्भुजीन को मुकुट धारण कराया। सब प्रबंध पहले ही से ठीक था, अतएव कहीं कोई कठिनाई न हुई। राजद्वार पर मंगलवाद्य बजने लगे और नगर में एक साथ हर्ष और शोक मनाए जाने लगे।

पाठको, लालचीन मंत्री हुआ। आज वामन ने चंद्रमा छू लिया। शृगाल सिंह के आसन पर बैठाया गया और पाप ने धर्म को पराजित किया। बुरे का फल अच्छा मिला। अधर्म ने धर्म पर विजय पाई। भूठ के सामने सच की दाल नहीं गली। पादुका शीश पर चढ़ी और मुकुट पैरों के नीचे पड़ा—

“जेर ओ ज़बर का फ़र्क़ न रक्खा ज़माने ने।

नालौन सर प रख दिया दस्तार पाँव में ॥”

सब उलट पलट हो गया। किसी का कुछ वश न चला। फलाफल कार्य के अधीन न रहे। स्वार्थ के आवर्त्त में प्रेम तथा कृतज्ञता निमग्न हो गई। कर्मद्रुम में आज विपरीत फल फला।

दक्षिण भारत ने एक राजा पाया और लालचीन ने अपनी मनोकामना। इसी से कहा जाता है कि राजा कभी मरते नहीं, क्योंकि राजसिंहासन शून्य नहीं रहता।

द्वितीय खंड

पहला परिच्छेद

महाराष्ट्र प्रदेश की विस्तीर्ण भूमि अनेक वन-पंक्तियों से आच्छादित और मलयाचल की उच्च शाखा-प्रशाखाओं से अनंत भागों में विभक्त है। इसी पर्वत-श्रेणी के शिखरों पर जहाँ तहाँ छोटे बड़े अनेक पहाड़ी दुर्ग बने हुए हैं, जो किसी समय महाराष्ट्रकेसरी छत्रपति शिवाजी की अभ्युत्थता में बीजापुरनरेश तथा दिल्लीश्वर मुगल सम्राट् औरंगजेब के दाँत खट्टे करते थे। इनमें विशेषता यह है कि थोड़े सैनिकों की सहायता से ये सहस्रों शत्रुओं के छक्के छुड़ाकर अपनी पताका उन्नत रख सकते हैं। सागर दुर्ग भी इन्हीं दुर्गों में से एक है।

भीमा नदी पार करने पर पथिक को कुछ दूर तक बालुका-राशि मिलती है जिसमें जहाँ तहाँ छोटे बड़े पत्थरों के ढाके पर्वत प्रांत की समीपता सूचित करते हैं। कुछ दूर आगे बढ़ने पर काले काले मेघों के समान पर्वतसमूह सामने दृष्टिगोचर होते हैं। इनके अंचल प्रांत में टीक, साल, आबनूस तथा चंदन के घेर जंगल हैं जिनमें भुंड के भुंड हाथी, व्याघ्र तथा अरण्ये स्वच्छंद बिचरते रहते हैं। पर्वतमाला भी चंदन तथा

आबनूस के वृत्तों से ढकी है । इससे कभी कभी बनैले पशु ऊपर भी चढ़ जाते हैं ।

नदीतट से सागर दुर्ग लगभग पंद्रह मील दूर है । एक पतली राह जंगल तथा पर्वतों को लाँघती सागर दुर्ग तक गई है । थोड़ी ही दूर जाने पर मार्ग अत्यंत बीहड़ हो गया है । कहीं चार पोरसा ऊपर चढ़ाव है तो छः पोरसा उतराव । पथ भी पथरीला होने के कारण बराबर नहीं है । कठिनता से चार मनुष्य एक साथ चल सकते हैं । आगे बढ़ने पर मार्ग के दोनों ओर खाई मिलती हैं । जब सागर दुर्ग एक मील रह जाता है तब सहसा राह और भी पतली हो गई है । दोनों ओर चट्टान के ढोके मिलने लगते हैं जो आगे ऊँची दीवार से बन गए हैं । इस पर्वतीय गली से निकलने पर सामने एक छोटी पहाड़ी दृष्टि-गोचर होती है जो सागर दुर्ग के नाम से विख्यात है ।

सागर पर्वत का घेराव लगभग पाँच मील होगा । इसकी ऊँचाई समुद्रतल से अनुमानतः ४००० फुट और अपनी जड़ से लगभग २००० फुट होगी । इसके ऊपर एक मील का 'वर्तु'-लाकर मैदान है जो जंगल को साफ़ करके बड़ी कठिनता से कर्षण योग्य बनाया गया है । तीन ओर से पर्वत अत्यंत ढालुआँ है, जहाँ बकरी तथा भेड़ के भी पैर नहीं टिक सकते । चौथी ओर घना जंगल है जिसके मध्य होकर घूमता फिरता वक्र गति का मार्ग ऊपर आया है ।

दुर्ग का मार्ग इस प्रकार संरक्षित होने के कारण यह असाधारण बलवाला समझा जाता है। रास्ते को और भी दुर्गम बनाने के लिये एक खाई पर्वत के चारों ओर खोद दी गई है जो बीस हाथ चौड़ी और तीस हाथ गहरी है। इसमें लगभग पाँच पोरसा जल बराबर भरा रहता है क्योंकि एक गुप्त नहर द्वारा इसमें भीमा नदी से जल लाया जाता है। यद्यपि दक्षिण देश की नदियाँ ग्रीष्म में प्रायः सूख जाया करती हैं, पर भीमा में सदा जल बना रहता है इसी से यह खाई भी जल से सदा भरी रहती है। दुर्ग के भीतर आने जाने के लिये एक काठ का पुल है जो आवश्यकता पड़ने पर लटका दिया जाता है और कार्य हो जाने पर फिर ऊपर खींच लिया जाता है।

दुर्ग की बनावट अत्यंत निराली है। दक्षिण भारत के अन्यान्य कोट, प्रासाद एवं मंदिरों के समान यह भी पहाड़ में खोदकर बनाया गया है। केवल ऊपर के चार मीनार बड़े बड़े पत्थरों के ढोकों से बने हैं। नीचे से केवल ये ही मीनार तथा दुर्ग की बाहरी दीवार देख पड़ती है। मीनारों पर सदा प्रहरी दूरवीक्षण यंत्र लिए चारों ओर सतर्क भाव से देखा करते हैं। शत्रुओं को आते देख ये नक्कारे पर विशेष प्रकार से चेब देते हैं जिसका शब्द ध्वनित प्रतिध्वनित होता हुआ सारे दुर्ग को सतर्क कर देता है।

दुर्ग की दीवार बाहर से लगभग तीन पोरसा ऊँची है, पर भीतर से एक पोरसे से अधिक नहीं। यह अत्यंत मोटी

और ढालुआँ पत्थरों से बनी है। इसके ऊपर सहस्रों गोले तथा पत्थर की चट्टानें रक्खी हुई हैं जिन्हें गिरने से रोकने के पत्थरों की छोटी छोटी अड़कन दे दी गई हैं। इन्हें गिराने के लिये केवल थोड़ी बारूद की आवश्यकता होती है जिसे जड़ में देकर आग लगा देने पर ये पत्थर कुछ उछल जाते हैं और दीवार तथा पहाड़ ढालुआँ होने के कारण बड़े ज़ोरों से सब कुछ कुचलते हुए नीचे जा पड़ते हैं। बारूद न रहने पर भी अड़कन हटाकर ये चट्टान के ढोके नीचे गिराए जा सकते हैं। रास्ते के ऊपर ये अधिकता से रक्खे गए हैं। एक चट्टान से सैकड़ों शत्रु नष्ट हो जा सकते हैं और आवश्यकता पड़ने पर इन्हें गिराकर राह भी बंद की जा सकती है।

यदि कोई मनुष्य खाई पार कर पेचीली राह से चढ़ता हुआ थका माँदा ऊपर पहुँच भी जाय तो उसे केवल ऊँची दीवार मिलेगी क्योंकि दुर्ग का प्रस्तरनिर्मित फाटक भी इस प्रकार से बना है कि दीवार में मिल जाय और उसका कुछ पता न मिले। दुर्ग का द्वार सदा बंद रहता है। दुर्गाधीश की आज्ञा बिना कोई बाहरी मनुष्य भीतर नहीं प्रवेश करने पाता। वहाँ सदा चार प्रहरी पहरा दिया करते हैं।

दुर्ग भीतर से चार भागों में विभक्त है। एक ओर राज-प्रासाद, अंतःपुर तथा दुर्गाधीश के रहने की अट्टालिका है। इसमें राजभवन के सुख की सामग्री लाकर रक्खी गई है। राजा जब कभी इस दुर्ग में आते हैं तब इसी में ठहरते हैं।

दूसरे विभाग में सैनिक रहते हैं । प्रत्येक थोड़ा के लिये एक एक छोटी छोटी कोठरी बनी है । तीसरा विभाग अखागाह है और यही अन्न आदि रखने के काम में लाया जाता है । और चौथे विभाग में बंदीघर, अश्वशाला आदि बने हैं । बंदीघर के पीछे चौड़ा मैदान है, जिसमें बाजरा उत्पन्न होता है । यहाँ के सैनिक प्रायः यही खाते हैं । दुर्ग में चारों ओर चौड़ी चौड़ी सड़कें गई हैं । दुर्ग के भीतर कई प्राकृतिक झरने हैं जिनसे लगभग छः मास तक जल मिलता है । ग्रीष्म काल में ये सूख जाते हैं तब कुएँ के जल का व्यवहार किया जाता है । ये कुएँ अत्यंत गहरे हैं और नीचे खाई से इनका संबंध है, इससे भीमा नदी का स्वादिष्ट जल पीने के लिये दुर्ग में सदा मिलता है । यदि शत्रु-सेना दुर्ग को सैकड़ों वर्षों तक घेरे रहे तब भी इसमें अन्न जल का अकाल नहीं पड़ सकता, क्योंकि खाने भर को बाजरा ऊपर उत्पन्न होता ही है और जल की कमी रहती ही नहीं ।

इस दुर्ग में केवल दो सौ सिपाही रहते हैं । इनका प्रधान अस्त्र तीर और धनुष है । पर ये अपने साथ ढाल तलवार तथा बर्छी भाला भी ले चलते हैं । प्रायः ये भिलम बख्तर का व्यवहार नहीं करते, क्योंकि इनको मैदान में जाकर युद्ध करने का अवसर कम मिलता है । दुर्ग की दीवार, में अनेक स्थलों में छिद्र बने हुए हैं जिनके द्वारा ये शत्रुदल पर बाणवृषा कर सकते हैं ।

यदि दुर्घटनावश दुर्ग के भीतर शत्रु प्रवेश पा ले तो शरण लेने के लिये यहाँ एक और अंतर्दुर्ग बना हुआ है। उसमें जाने के लिये एक गुप्त राह है जो एक गुप्त कूप के भीतर से होकर गई है। उसमें से प्रच्छन्न रूप से दुर्ग के बाहर भी चले जाने का मार्ग है पर वह केवल विश्वस्त जनों को ज्ञात है।

दुर्ग के जिस विभाग में अस्त्रागार तथा अन्नभांडार है उसमें दस सैनिकों का कड़ा पहरा बराबर रहता है। उसी प्रकार बंदीगृह पर भी दस प्रहरी सदा सतर्क रहा करते हैं। साधारण बंदियों के लिये कारागार ऊपर ही बना है। प्रत्येक बंदी को चार हाथ लंबी एवं तीन हाथ चौड़ी एक एक कोठरी मिलती है। छड़वाले कपाट में सदा ताला बंद रहता है, किंतु विशेष प्रकार के बंदियों के लिये कारागार पृथक् है।

ऊपरवाले कारागार के सम्मुख एक कमरा है जिसमें दुर्गाधीश का कार्यालय है। इसी कमरे के बीच में एक प्रस्तर की चौकी रखी है। इसमें एक कड़ी लगी है। वास्तव में यह एक द्वार है जिसे उठाने पर नीचे जाने की सीढ़ियाँ मिलती हैं। लगभग चालीस फुट नीचे उतरने पर मनुष्य एक कमरे में प्रवेश करता है जहाँ बिलकुल अंधेरा रहता है। यहाँ से चारों ओर जाने के लिये चार द्वार हैं। ये द्वार लाँघने पर एक राह मिलती है जिसके दोनों ओर छोटी छोटी कोठरियाँ बनी हैं। ये सब भी ऊपर की सी चार हाथ लंबी तीन हाथ चौड़ी और तीन हाथ ऊँची हैं। बैठने के लिये कोने में थोड़ा

सा पुआल रक्खा रहता है। मध्याह्न-काल में भी यहाँ आलोक की आवश्यकता होती है। मनुष्य को यहाँ काले काले पत्थर तथा अंधकार के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं देख पड़ता। प्राकृतिक छटाएँ, जो बिना मूल्य सबको मिलती हैं, यहाँ नहीं आने पातीं! सूर्य का दर्शन यहाँ नहीं होता। चंद्र-देव की किरणें यहाँ नहीं भाँकतीं। तारकाएँ इस अँधेरी कोठरी के अभागे निवासियों पर नहीं चमकतीं। उच्च आकाश की स्थिति उनके लिये नहीं है। इसी प्रकार की एक कोठरी में नेत्रहीन राज्यच्युत शाहंशाह गयासउद्दीन, बंदी के रूप में, कई दिनों से रखा गया था।

कारागार की अशेष यंत्रणा से वह रह रहकर व्याकुल हो जाता था। जो भोजन मिलता था वह उसके गले के नीचे नहीं उतरता था; अतएव वह दिनोंदिन निर्बल होता जाता था। स्मृति ने उसे अधिक डाँवाँडोल कर दिया था। वह कभी उठता, कभी बैठता; कभी सिसकता, कभी बिलखता। कभी आह भरता और कभी आँसू गिराता। जब किसी प्रकार अपने को सँभाल न सका तब फूट फूटकर रोने लगा। रोते रोते हिचकी बँध गई और आप ही आप कहने लगा—हाय, मैं किस कुचक्र में पड़ा। ज्ञात नहीं होता, किस कुकर्म का यह विषम फल मुझे भोगना पड़ा। कौन जानता था कि अंत में यही बदा है! क्या था, क्या हो गया! कहाँ वह राज्यसुख और कहाँ यह महि-शयन! कहाँ वह षट्स भोजन और कहाँ

यह सूखी सड़ी रोटी ! न जाने अब किस सुख के लिये प्राण बचा हुआ है ? जान पड़ता है कि अभी और कुछ दुर्गति शेष है, नहीं तो निर्दय विधाता मुझे क्यों जिलाता ? कौन कह सकता था कि दक्षिण भारत का सम्राट् इस अवस्था को प्राप्त होगा ! सैकड़ों जिसका मुँह जोहा करते थे, उसकी ओर आज कोई आँख तक उठाकर देखनेवाला नहीं है । जिसके निकट बैठन के लिये लोग तरसा करते थे उसके समीप भूलकर भी आज कोई नहीं फटकता । क्यों, मैंने क्या किया कि जिसके बदले मेरी ऐसी गति हो रही है । दुनिया नहीं जानती किंतु मैं तो भली भाँति जानता हूँ कि मेरी यह दशा लालचीन के हाथों से हुई । मैंने तो न्याय के विरुद्ध कोई कार्य नहीं किया था । लालचीन से तो मेरा कोई वैमनस्य नहीं था । तब क्यों ऐसा हुआ ? उसकी तनया पर मेरी दृष्टि पड़ी थी, इसके लिये यह दंड क्यों ? क्या मैं स्वयं उसके पास गया था ? वह मेरे दृष्टिपथ में क्यों पड़ी ? बंसी में जिस प्रकार चारा देकर मछली फँसाई जाती है, उसी प्रकार मुझे लालचीन ने फँसाया । वीणा बजाकर व्याध जिस प्रकार मृग का वध करता है, उसी प्रकार लालचीन ने मुझ पर घात किया । जो हो, किंतु क्या इस संसार में मेरा एक भी हितैषी न रहा ? शम्स का मैंने क्या बिगाड़ा था ? परंतु वह मेरी सुधि लेगा ही क्यों ? मेरे हटने से तो वह राज-सिंहासन पर बैठ गया । मेरे लिये उसे चिंता क्यों होगी ?—

हाय, भाई ने मुझे हाले बतर छोड़ दिया ।

रूह ने जिस्म को औ खूँ ने जिगर छोड़ दिया ॥

घर से धक्के दिए औ खाक व सर छोड़ दिया ।

चश्म-उल्फत ने भी अब पास नज़र छोड़ दिया ॥

और छोड़े क्यों नहीं ? राजवंश में प्रेम तो होता नहीं ।
यहाँ सब भावों का उद्रेक स्वार्थ ही है । स्वार्थ ही का यहाँ
संबंध जोड़ा जाता है । तब क्या शम्स इस नियम का अपवाद
है ? और यह भी तो नहीं जानता हूँ कि मेरे विषय में उससे
क्या कहा गया है । इस पर तो विश्वास नहीं होता कि मेरा
पता उसे है । और कर्मचारी लोग ? इन लोगों के लिये जैसा
मैं वैसा शम्स; वैसा ही तीसरा कोई । उन्हें क्या पड़ी है कि
गद्दी पर कौन बैठा है । किंतु विधाता ! मुझे इतनी यंत्रणा
क्यों दी गई ? सब कुछ जाता किंतु यदि आँखें रह जाती तो
मैं उतनी चिंता न करता । आँख रखकर यदि मुझसे लोग
घर छोड़कर कौपीन धारण कर वन वन फिरने को कहते तो मैं
सहर्ष स्वीकार करता ।

हाय ! मेरे लिये अब तो दिन रात में कोई भी अंतर नहीं
रहा । दिनेश आते हैं चले जाते हैं, चंद्रदेव उदय होकर
अस्त हो जाते हैं, अनंत तारकाएँ नभमंडल की शोभा बढ़ाकर
अंतर्हित हो जाती हैं; किंतु मेरे लिये अंधकार ही अंधकार
रह जाता है । इन स्वर्गीय आलोकों का मुझ पर कुछ भी
प्रभाव नहीं पड़ता । कभी मैंने नहीं समझा था कि आँखें

ऐसी अलौकिक संपत्ति हैं। हाय हाय ! नेत्रों के साथ ही साथ सब गए। आकाश गया, पाताल गया, वन पहाड़ नदी सब की स्थिति जाती रही, तारे बुझ गए, सूर्य डूब गया, चंद्र-देव छिप गए, सारी पृथिवी के दीपों का निर्वाण हो गया, अंध-कार, घोर अंधकार, निविड़ अंधकार, नारकीय तम चारों ओर छा गया। अब जो गया वह तो आने का नहीं। तब हे विधाता ! मेरे अंतश्चक्षु खोल दे, मुझे दिव्य दृष्टि दे, जिसमें अपने भीतर मैं उस जगन्नियंता का प्रकाश देखूँ जिसके चलाए संसार चलता है और जो ज्योतिष्पुंज है। क्या कहूँ ? इससे तो कहीं अच्छा होता यदि मैं किसी दरिद्र के वंश में जन्म धारण करता। तब संभव था कि ईर्ष्याग्नि से मेरे नेत्र न दग्ध किए जाते। किंतु उसका सोच करके ही अब क्या होगा ? मरने के सिवा इस दुःख से छुटकारा पाने का कोई और उपाय नहीं है। किंतु मरूँ तो कैसे ? मरना भी तो अपने वश की बात नहीं है। तब क्या यहाँ से छुटकारा पाने का कुछ उपाय नहीं है ? जीकर वा मरकर क्या किसी प्रकार यहाँ से निकल नहीं सकता ? यह भी तो ज्ञात नहीं कि मैं इस समय पृथ्वी के किस कोने में हूँ ? मैं यहाँ किन दुष्टों के हाथों में पड़ा हूँ ? यह कौन सी जगह है ? जो मुझे भोजन दे जाता है वह कौन है ? यहाँ का मालिक कौन है ? इतना तो अवश्य जान गया कि मैं अपनी राजधानी में नहीं हूँ। मुझे बहुत दूर तक पालकी पर आना पड़ा था। वहाँ

तो मुझे छुड़ाने की भी चेष्टा की गई थी । परंतु जब भाग्य बिगड़ जाता है तब क्या कोई उपाय काम आता है ! न जाने लालचीन ने लोगों से मेरे विषय में क्या कहा ? जान पड़ता है कि इस संसार में अब मेरा कोई अपना नहीं है । यदि कोई मुझे सहायता भी देना चाहे तो क्योंकर दे सकता है ! हे भगवान् ! अब तो यंत्रणा असह्य हुई जाती है । अब तुम्हारे बिना इस घोर विपत्ति से मेरी रक्षा कोई नहीं कर सकता । दुःसह दुःख के दूर करनेवाले तुम्हीं हो । क्योंकि—

किशितये-नूह को दरिया से निकाला तूने ।

चश्मे-याकूब को बख्शा है उजाला तूने ॥

मैं भी एक बंदये नाचीज़ हूँ बंदा तेरा ।

गो गुनहगार हूँ, रखता हूँ भरोसा तेरा ॥

यदि मैंने कोई पाप भी किया तो उसके प्रायश्चित्त-स्वरूप मैंने अपने नेत्रों को खो दिया । अब अधिक सताना अच्छा नहीं ! अब जिस प्रकार हो सके, मेरी रक्षा करो । धन, संपत्ति, राज्य-सुख, मान-मर्यादा सब गई । अब तो दुनिया में कोई सुख नहीं ! जीवन भार हो रहा है । जब कोई आशा ही नहीं रही, तब जीकर ही क्या होगा ? सब गया, सब गया, एक साथ ही सब गया । अब शेष पर भी ममता न रहो । हाय ! हाय !

इसी समय एक व्यक्ति भोजन लेकर वहाँ आया और रिकाबी तथा बधना सामने रखकर उसने कहा—“खाना तैयार है ।” गयास ने कोई उत्तर नहीं दिया । उसके अंध नेत्रों में

आँसू और मुखड़े को अत्यंत मलिन देखकर आगंतुक ने पूछा—आप रो क्यों रहे हैं ? शीघ्र भोजन कीजिए ।

गयास—आज भोजन करने की इच्छा नहीं है ।

आगंतुक—इस प्रकार कितने दिन रहिएगा ? बिना खाए आप क्या जी सकते हैं ?

गयास—जीने की इच्छा भी तो नहीं है ।

आगंतुक—आपकी दशा देखकर मेरा कलेजा फटा जाता है; किंतु क्या करूँ कोई वश नहीं ।

गयास—मैं तुम्हें पहचानता नहीं । तुम्हें देख भी नहीं सकता और जान पड़ता है कि कभी देखा भी नहीं है । परंतु तुम्हारी सहानुभूति-सूचक बात सुनकर मुझे ज्ञात होता है कि तुममें दया की मात्रा कम नहीं है । मैं जिस अवस्था में हूँ उस अवस्था में मुँह से समवेदना प्रकट करनेवाला भी कोई नहीं मिलता । ऐसा विश्वास होता है कि तुम्हारा एक करुणापूर्ण वाक्य जो आज मैंने सुना उसके सहारे कुछ दिन और जी सकता हूँ ।

आगंतुक—आपसे बातचीत करने की मुझे आज्ञा नहीं है । किंतु अपने को मैं सँभाल नहीं सका, इसी से इतना कह दिया । अब आप मुझसे आगे कुछ न बोलिए ।

गयास—मैं क्या बोलूँगा और बोलकर ही क्या करूँगा ? हाय ! एक दिन ऐसा था कि जब बड़े बड़े उमराव बरसों इस आशा में मेरा मुँह जोहा करते थे कि मैं भर मुँह उनसे एक

बात करता । तुम नहीं जानते हो, क्योंकि मैं समझता हूँ कि तुमसे कभी कहा नहीं गया है कि जिसके सम्मुख इस समय तुम खड़े हो वह एक दिन दक्षिण भारत का सम्राट् था । षड्यंत्र में पड़कर मेरी ऐसी दुर्गति हुई । जिस प्रकार बलि-प्रदान के बकरे की गर्दन पर कुठार उठाते समय हिंदू उसके सामने खाने की चीज़ रख देते हैं और वह भी परिणाम की ओर ध्यान न देकर स्वच्छंदता के साथ खाता चला जाता है, उसी प्रकार मेरे गले पर भी छुरी चलाई गई है । जिस प्रकार व्याध दाना छींटकर चिड़ियों को जाल में फँसाता है उसी प्रकार भोज में निमंत्रण देकर लालचीन ने मेरी आँखें निकाल लीं । उसने समझा कि किसी ने देखा नहीं, किसी को इसका भेद न मिलेगा । परंतु उसे जानना चाहिए था कि संसार में सब घटनाओं का देखनेवाला धर्म अवश्य है । आदमी की आँखों में कोई धूल भले ही भोंक दे किंतु सर्वदर्शी जगत्कर्त्ता से कोई किसी बात को छिपा नहीं सकता । सूर्य, चंद्र, नक्षत्र, पवन, आकाश, पृथिवी और अपनी अंतरात्मा ये सब ऐसे गवाह हैं कि इनसे मनुष्य किसी प्रकार अपना पीछा छुड़ा ही नहीं सकता । कुकर्म कर मनुष्य न्याय के पंजे से, अपने साथियों के ताने से, धोखा देकर भले ही बच जाय, किंतु आत्मा के विष बुझे वृश्चिक-दंशन से कोई अपने को क्योंकर बचा सकता है ? हाँ हाँ, मैं भली भाँति समझ गया कि इस संसार में लालचीन को दंड देनेवाला अब को नहीं है । किंतु

देखना है कि “रोज़ महशर” में वह अपने को क्योंकर बचा सकता है। उस दिन कहाँ छिपकर रह सकता है ? दिल जल रहा है, कलेजा मुँह को आ रहा है। यदि इस समय लालचीन मेरे सामने रहता तो देखता कि वह मेरे हाथों से क्या और कैसी शिन्ना पाता। चाहता है कि—

“भोंक दूँ शमशीर कब्जे तक, दिले नापाक में।

तोड़ दूँ सर, थूक दूँ मुँह पर, मिला दूँ खाक में॥”

पर यह बुद्धि, यह उत्साह, भुजाओं का यह बल, कलेजे की यह कूवत उस समय न जाने कहाँ चली गई थी जब लालचीन मेरे सामने सींकचा लेकर खड़ा था। उस समय मैं मंत्र-मुग्ध हो नितांत निर्बल क्योंकर हो गया था ? क्या लालचीन यहाँ आया है ? तुम उसे पहचानते हो ?

आगंतुक—जी नहीं, जहाँपनाह !

गयास—क्या तुम मुझे चिढ़ाते हो ? गिरे को लात मारना, लाचार के साथ व्यंग्य करना, पतित का उपहास करना क्या अच्छा है ?

आगंतुक—आप ऐसा ध्यान में न लावें। मैं गुलाम हूँ। स्वामी की सेवा करना मेरा धर्म है, क्योंकि मैं दासवृत्ति करता हूँ। मैं समाजच्युत हूँ, किंतु ऐसी नीच प्रकृति का नहीं हूँ कि मूर्तिमान् दुःख को सामने देखकर ठट्ठा करूँ। पहले ही दिन से मैं आपमें राजचिह्न देखता था। किंतु आपसे कुछ पूछने का मुझे साहस नहीं होता था। तिस पर जैसा मैं पहले कह

चुका हूँ, आपसे बातचीत करने की मुझे आज्ञा भी न थी। किंतु आपका दुःख मुझसे देखा नहीं गया, इसी से अधीर होकर आपसे कुछ बोल दिया। इसी कारण, देखता हूँ कि, आपकी पूर्वस्मृति जागृत हो गई। होमकुंड में आहुति पड़ गई। पुरानी बातों की सुधि दिलाना क्या हुआ, मानों सोए साँप को ठोकर मारकर जगाना हुआ। हाय ! ऐसे घाव में मैंने नया नश्वर क्यों दिया, जिसका मरहम मेरे पास नहीं है। अच्छा, अब आज्ञा हो तो मैं यहाँ से जाऊँ।

गयास—यदि तुम पर विपत्ति आने की कोई संभावना न हो तो तुम थोड़ी देर और ठहरो। तुमसे दो बातें करने से आज मेरा मन बहुत ठंडा हुआ।

आगतुक—आप चिंता न कीजिए। आज मैं आपके सम्मुख प्रतिज्ञा करता हूँ कि जहाँ तक मुझसे संभव होगा, मैं आपकी सहायता करूँगा। निस्संकोच भाव से आप मुझसे जब जो चाहें कह सकते हैं। नौकरी जाय तो जाय, दंड मिले तो मिले, किंतु मैं आपका साथ कभी न छोड़ूँगा। सबके सब दिन बराबर नहीं जाते। सबका अंत है। कैसी ही डरावनी निशा क्यों न हो, उसका भी अवसान अवश्य होता है। कोई अवस्था चिरस्थायिनी नहीं है। आप धैर्य धारण करें, एक न एक दिन आपका दुःख अवश्य दूर हो जायगा। अपनी वर्तमान अवस्था से संभवतः आप अवगत नहीं हैं।

गयास—नहीं ।

आगंतुक—तब सुनिए, आप एक दुर्ग में क़ैद हैं। यहाँ से आपका निकलना एक प्रकार से असंभव ही है। परंतु आज से मैं आपको यहाँ से बाहर निकालने के यत्न में रहूँगा और सुअवसर मिलने पर आपको इस क़िले से अवश्य बाहर कर दूँगा ।

गयास—भगवान् तुम्हारा भला करे और मैं क्या कहूँ । मुझमें सामर्थ्य नहीं है कि तुम्हें धन्यवाद दूँ । मुझसे प्रत्युपकार की आशा छोड़कर तुम मेरी सहायता करना । आँखों के साथ साथ मेरा सब गया और यहाँ से बाहर निकलकर भी यह ठीक नहीं है कि मैं सुखी होऊँगा, क्योंकि संसार में मुझे ठहरने की अब कहीं जगह भी नहीं है ।

आगंतुक—आगे जैसा होगा, देखा जायगा । इस समय आप कुछ खा लें । कल से कुछ अच्छा भोजन देने का मैं प्रबंध करूँगा । किंतु याद रहे कि मेरे साथ आपकी जो बातें हुई हैं, उन्हें किसी अवस्था में आप किसी से मत कहिएगा; नहीं तो इसमें हम दोनों का अनिष्ट है ।

गयास—भला यह भी कहने की बात है ?

आगंतुक—अच्छा, अब मैं चला । बीच बीच में मैं आपसे मिला करूँगा । आपने मुझे देखा नहीं; किंतु शब्द द्वारा आप मुझे पहचान रखिए जिसमें कभी कुछ धोखा न हो ।

गयास—आँखें न रहने पर भी मैं तुम्हें भूल नहीं सकता । जब से मेरी आँखें गईं, मेरी कर्णेंद्रिय तथा स्पर्श-शक्ति

तीव्र हो गई है । इसके अतिरिक्त हृदय को हृदय पहचानता है । अधिक क्या कहूँ—

“कोई नफ़रत से भी मुझ पर न नज़र करता है ।

(अब तो) नाम से मेरे जहन्नुम भी उज़ुर करता है ॥”

“धैर्य रखिए, समय पाकर फिर मिलूँ गा” —कहता हुआ वह व्यक्ति वहाँ से चला गया और गयास उस अंधकूप में अकेला रह गया ।

दूसरा परिच्छेद

सागर दुर्ग से आध कोस पर एक सघन वन में एक क्षुद्र कुटी थी। यह कुटी एक भग्न टीले पर बनो हुई थी। टीले से थोड़ी दूर पर एक सुंदर बावली थी। यहाँ वनजंतु आ आकर सदा जल पिया करते थे। इस रमणीक स्थान में बहुत दिनों से एक मुसलमान फकीर रहते थे। आसपास के नगरों में इनका बड़ा आदर था। लोग इन्हें सिद्ध पुरुष मानते थे। लोगों का अनुमान था कि ये भूत, भविष्य तथा वर्तमान के ज्ञाता हैं। जब कभी अपना दरियाई नारियल लेकर ये नगर में निकल पड़ते थे तब सैकड़ों आदमी इनके पीछे लग जाते थे। जहाँ इनका पैर पड़ता वहाँ की रज लोग अपने शीश पर लगाते थे। ये सदा जगन्नियंता के ध्यान में मग्न रहा करते थे। काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि भूलकर भी इनके निकट नहीं फटकते थे। ये सदा “या रब, अब कब तक” कहा करते थे। अमीर उमरा, धनी दरिद्र सब इनका समान सम्मान करते थे और सभी इनसे आशीर्वाद पाने के लिये लालायित रहते थे।

वन में वसंत ऋतु की विचित्र शोभा छा रही थी। उसमें नाना प्रकार के आरण्य पुष्प विकसित थे, जिनके सौरभ से वह सुगंधित हो उठा था। विपिनवासी नाना जाति के पक्षी

पुबह शाम अपना अपना सुखद रव सुना रहे थे । भ्रमर एवं मधु-मक्षिकाएँ वन में स्थान स्थान पर छत्ता बना मधु संचय कर रही थीं । नव पल्लव द्रुमों तथा वल्लरियों का सौंदर्य बढ़ा रहे थे । तघन कुंजों में वनजंतु विहार कर रहे थे । नाना प्रकार के फल-फूलों से वन-विटप लद रहे थे । यह प्राकृतिक शोभा देखने सैकड़ों मनुष्य नित्य विपिन में आते थे । जो यहाँ आता, सिद्ध मनुष्य का दर्शन किए बिना नहीं जाता था ।

एक दिन संध्या समय शेर अफगन नाम का एक सैनिक फ़कीर के पास आया । उस समय सिद्ध पुरुष बावली के किनारे बैठकर मछलियों की क्रीड़ा देख देख आप ही आप मुस्कुरा रहे थे । सुखद बसंती हवा मंद मंद सुगंध लिए बह रही थी । सैकड़ों पक्षी असंख्य स्वर से बोल रहे थे । निकट ही हरिन के बच्चे स्वच्छंदता के साथ उछल-कूद कर रहे थे । एकांत विपिन के निवासी होने पर भी ज्ञात होता था कि महात्मा अपने घर में बैठे परिवार का सुख अनुभव कर रहे हैं । समीप जाकर शेर अफगन शाह साहब को दंडवत् कर चुपचाप बैठ गया । किंतु वे अपनी धुन में ऐसे लीन थे कि उन्हें इसके आने की सुधिन हुई । कुछ देर के बाद एक ठंडी साँस भरकर फ़कीर ने कहा “ या रब ! अब कब तक ” और साथ ही साथ उनका ध्यान शेर अफगन की ओर गया । आशीर्वाद देकर महात्मा ने कहा—आप यहाँ कितनी देर से आए हैं ? आपको आते मैंने नहीं देखा ।

शेर—अधिक देर नहीं हुई ।

फकीर—और सब कुशल है न ? आज अकेले क्यों ?

शेर—सब आपकी कृपा है ।

फकीर—रब के हाथ सब कुछ है । उसी की कृपा पर सब निर्भर है । मनुष्य के लिए कुछ नहीं हो सकता । उसी को याद करो । उससे डरना, उसके साथ प्रेम करना सबका प्रधान धर्म है ।

शेर—हम दुनियादार लोगों से क्या कुछ बन आता है ?

फकीर—इच्छा करो, सब होगा । दुनिया से इतना क्यों डरते हो ? दुनिया की निंदा न करो । यह भी उसी कर्त्ता की बनाई हुई है । देखो इसमें कितनी शोभा और सौंदर्य है । यहाँ एक एक वस्तु ऐसी है जिसे देखकर मन बरबस जगन्नियंता की ओर आकर्षित होता है । मैं नहीं जानता कि लोग दुनिया में इतनी अपूर्व वस्तुओं को देखते हुए भी इसके बनानेवाले को क्यों भूलें रहते हैं । दुनिया में हम लोग दुनिया देखने के लिये भेजे गए हैं, दुनिया के पीछे दौड़ने के लिये नहीं ।

शेर—अपराध क्षमा हो, मैं समझ न सका ।

फकीर—तुमने नाटक देखा है ? सुनते हैं कि नाटक का अभिनय देखकर तुम लोग बड़ा आनंद पाते हो ।

शेर—हाँ हुआ, देखा तो है ।

फकीर—तुम लोग अपनी मित्रमंडली के साथ तमाशा देखते हो, सुखी होते हो, आनंदपूर्वक अपना समय बिताते हो; और जो तुम्हारे जातिवाले नाट्यशाला में रंगमंच पर

नाना वेष-भूषा धारण किए विविध पात्रों का रूप बनाकर नाचते हैं, गाते हैं, रोते हैं, हँसते हैं, मरते हैं, उन्हें भी क्या तुम्हारे ही समान सुख मिलता है ? जिस नज़र से तुम उन्हें देखते हो क्या उसी से वे अपने को देखते हैं ?

शेर—नहीं ।

फ़कीर—क्यों ?

शेर—उन्हें अपने पेट के लिये, दूसरों की तृप्ति के लिये वैसा करना पड़ता है । वे लोग दिखाते हैं, हम लोग देखते हैं । वे पात्र हैं, हम लोग दर्शक हैं । वे लोग अपनी यथार्थ अवस्था जानते हैं, हम लोग नहीं जानते । जिसे राजा मानकर हम लोग सुखी होते हैं वह अपने को राजा नहीं मानता, साधारण दरिद्र ही जानता है ।

फ़कीर—ठीक यही दशा सांसारिक लोगों की है । दर्शक बनने के बदले वे अपने को पात्र बना देते हैं । देखने के बदले दुनिया में स्वयं खेलने लगते हैं । इसी से इतना दुःख है । इस जगत् का सूत्रधार “रब” है । मनुष्य अपने आप कुछ नहीं कर सकता । इसी से कहता हूँ कि दुनिया को देखना सीखा । इसमें लिपटकर अपने को भूलकर अपने अमूल्य जीवन को नष्ट न करो ।

शेर—आपकी कृपा बिना ऐसा होना असंभव है ।

फ़कीर—देखो, हम लोगों को हिंदुओं से इसका तर्क सीखना चाहिए । उनके धर्मग्रंथ में इस विषय का पूरा

उल्लेख है। उन लोगों का सिद्धांत है कि मनुष्य सब काम करे किंतु उसके परिणाम की ओर ध्यान न दे। मनुष्य परिणाम ही के कारण दुनिया के बंधन में पड़ता है, क्योंकि दुःख सुख का उद्रेक उसी से होता है। जो लोग दुःख-सुख से परे हैं, जो हानि-लाभ की चिंता नहीं करते, वे दुनिया में रहकर भी दुनिया से बाहर ही हैं।

शेर—आपके दर्शन से आज मैं बहुत कृतार्थ हुआ।

फ़कीर—कुछ वैसी बात नहीं है। जी में आया, कह दिया। हाँ, यदि इस मार्ग में कुछ करना चाहते हो तो अपने हृदय से अप्रेम को निकालकर उसमें प्रेम का राज्य स्थापित करो। सब कुछ इसी दो अक्षर “प्रेम” में भरा है। प्रेम का महत्त्व समझो, इसी का मनन करो। व्यवहार में सदा इस प्रेम ही को लाया करो। इसका सूत्रपात परोपकार से होता है। आज से परहित व्रत का अवलंबन करो।

शेर—आपके आदेश-पालन में मुझे कुछ हिचक नहीं है। मैं इस पथ पर अग्रसर होने की यथासाध्य चेष्टा करूँगा।

फ़कीर—शाबाश, खुदा तुम्हें शक्ति दे कि ऐसा करो। “या रब, अब कब तक” क्यों जी, दुर्ग की क्या ख़बर है ?

शेर—वही कहने तो आया हूँ।

फ़कीर—तब चुप क्यों बैठे हो ?

शेर—कोई जल्दी नहीं थी।

फ़कीर—अच्छा, कहो।

शेर—आज कई दिनों से एक नया कैदी दुर्ग में आया है। वह अंधा है। उस पर कठिन पहरा रहता है। कल मुझे उसका भेद मिला। वही आपसे कहने आया हूँ। ज्ञात हुआ है कि वह दक्षिण भारत का सम्राट् गयासउद्दीन है। षड्यंत्र में पड़कर उसने अपने नेत्रों को गँवाया और उसी के फेर में पड़कर यहाँ कैद होकर आया है।

फकीर—मुझसे क्या कहते हो ?

शेर—कल संध्या समय मैं उसका खाना लेकर गया था। कलेजा फट गया। यदि मेरा वश चलता तो उसे अभी मुक्त कर देता। किंतु क्या करूँ, इस कठिन कार्य में जब तक आपकी सहायता न पाऊँगा, मुझसे कुछ हो नहीं सकेगा। मैंने उसे वचन दिया है कि जहाँ तक हो सकेगा, उसकी सहायता करूँगा।

फकीर—इसमें तुम्हें क्या लाभ है ?

शेर—मुझे तो कोई ऐसा लाभ नहीं है। परंतु एक निःसहाय मनुष्य को विपन्न देखकर मेरा मन व्याकुल हो रहा है। यदि प्राण देकर भी मैं उसका उपकार कर सकूँ तो करने पर तैयार हूँ। परंतु उपाय मुझे नहीं सूझता। आप तो जानते हैं कि यह सागर दुर्ग कैसा सुरक्षित है। इस अवस्था में मैं अकेला क्या कर सकता हूँ ! मुझ पर दुर्गेश का पूरा विश्वास है और इसी से मैं भोजन लेकर उनके पास रोज़ भेजा जाता हूँ।

फ़कीर—कौन कह सकता है कि वह अपने दुष्कर्म का फल नहीं भोग रहा है ?

शेर—हो सकता है। किंतु मेरा काम यह देखने का नहीं है। “पराए दुःख से दुखी होना मनुष्य का धर्म है।” अभी आपने कहा है कि अच्छे बुरे का न्याय खुदा करता है। लाचार की मदद करना सबको उचित है। जहाँ तक ज्ञात हुआ है, उसके हितचिंतकों में कोई यह भेद नहीं जानता कि वह किस अवस्था में और कहाँ है।

फ़कीर—तुम्हारी बातें सुनकर मैं बहुत संतुष्ट हूँ। तुम्हारे विचार उच्च हैं। मैं समझता हूँ कि इस शुभ कार्य में तुम्हें अवश्य सफलता होगी, समय चाहे जितना लगे।

शेर—आपको अनंत धन्यवाद हैं। जब आपका आशीर्वाद हुआ तब सब काम ठीक हो जायगा, इसमें अणु मात्र भी संदेह नहीं। किंतु मैं इसका उपाय क्या करूँ ?

फ़कीर—यदि राजकाज से मेरा कुछ संबंध रहता, यदि नरेशों की कूटनीति को मैं जानता तो तुम्हें कोई रास्ता बता सकता; किंतु तुम तो जानते हो कि मेरा किसी से कोई संबंध नहीं है। इसी जंगल और इन्हीं पहाड़ों में पड़े पड़े तो दाढ़ी मूँछ और सिर के केश श्वेत हो गए।

शेर—आप सब जानते हैं। सब कुछ कर सकते हैं। मन में धरने की बात है। मेरी विनीत प्रार्थना यही है कि आप इस काम में किसी प्रकार मेरी मदद कीजिए। जब तक मैं उस

बेचारे की सहायता न करूँगा, मुझे शांति न मिलेगी। मेरे प्राण व्याकुल हो रहे हैं। सच कहता हूँ कि मेरी व्यग्रता की सीमा नहीं है। कल सारी रात मुझे नींद नहीं आई।

फ़कीर—धन्य धन्य ! परोपकार इसी को कहते हैं। अल्लाह तुमसे बहुत प्रसन्न है। “ख़्वाजा ख़िज़र” तुम्हारे पथदर्शक होंगे। ऐ नेक मर्द, ऐ बंदे-ख़ुदा ! तनिक भी चिंता न कर; अंत में तेरी विजय ही विजय है। जिस काम में तू हाथ डालना चाहता है, वह पूरा होगा। तुझे स्वर्गीय सहायता मिलेगी। देवदूत तेरे सहायक होंगे। “अंजाम बुरे का कभी अच्छा नहीं होता।” देख लेना, जिन सबों ने यह दुष्कर्म किया है उन दुष्टों पर “क़हर इलाही” नाज़िल होगा। उन सबों के पाप का बोझ अभी भारी होने दो। एक दिन ऐसा आवेगा कि पूर्ण रूप से लालचीन का विनाश होगा। मैं जानता हूँ, उस दुष्ट का ही यह काम है; उसी ने गयास की आँखें निकाल ली हैं। जुल्म से सदा भागना चाहिए। विपन्न की आह ख़ुदा सदा सुनता है।—

“बंतर्स अज़ आह मज़लूमों के हंगामे दुआ करदम् ।

यज़ाबुत अज़ दरे हफ़ बहर इस्तिक़बाल मी आयद् ॥”

हक़ छोड़ कभी नाहक़ नहीं करना चाहिए। इलाही फ़ैसला हो चुका। जिसने किसी का एक क़तरा खून गिराया उसे सौ बार धिक्कार है ! देखना, यह दुष्ट उसी के हाथों से आहत होगा जिसकी आँखें निकाल डाली हैं। जिस प्रकार

सूर्य के आलोक को सुलतान के लिये उसने निर्वापित किया उसी प्रकार “खुदा का जिलवा” उसके हृदय से बहिष्कृत होगा। उसके पुतले के हाथों से राजदंड खिसक पड़ेगा। उसे ज्ञात हो जायगा कि मसनद के सहारे कोई सुखी नहीं हो सकता। किंतु अभी समय नहीं आया है। तुम धैर्य धरो।

शेर अफगन सिहर उठा और महात्मा का पैर पकड़कर काँपने लगा। किंतु उसके शीश पर हाथ फेरकर फ़कीर ने कहा—कुछ परवाह नहीं, इस समय तुम जाओ। फिर मिलना, सब भेद तुम्हें बता दूँगा।

तीसरा परिच्छेद

गयासउद्दीन के वृद्ध पितामह का नाम मुहम्मद शाह बहमनी था । उसने, सन् १३५८ से १३७५ खृष्टाब्द तक, १७ वर्ष राज्य किया । कुलबर्ग में बहमनी वंश की राजधानी थी । उसके राजत्व-काल में प्रजा सुख-शांति-पूर्वक रहती थी । किंतु उसके शासन-काल में मुसलमानी योधाओं से प्रायः पाँच लाख काफ़िर (हिंदू) आहत हुए थे, जिसका परिणाम यह हुआ कि कई युगों तक कारनाटिक अपनी पूर्व उन्नतावस्था को पुनः प्राप्त न कर सका* । इसके बाद सन्

* Mahomed Shah Bahmani ruled in 1358-1375 A. D. In his reign it is said that "all ranks of the people reposed in security, and peace," and that "nearly five hundred thousand unbelievers fell by the swords of the warriors of Islam, by which Carnatic was so reduced in population that it did not recover for several ages.

Some of these precious potentates died in their beds, a large proportion of them were assassinated. This much, at any rate, may be said of Indian public opinion in these

१३७१ ई० में मुजाहिद ने और सन् १३७८ ई० में दाऊद ने, थोड़े दिनों के लिये, राजदंड धारण किया। दाऊद के दो पुत्र थे—एक का नाम था महमूदशाह और दूसरे का फ़ीरोज़ खाँ। महमूद ने सन् १३७८ से १३८५ ई० तक दक्षिण भारत में शासन किया। महमूदशाह ने अपनी मृत्यु-शय्या पर अपने पुत्र गयासउद्दीन को फ़ीरोज़ खाँ के सपुर्द कर कहा था कि आप शाहज़ादा गयास को अपना पुत्र जानिएगा और पुत्रवत् इसकी रक्षा कीजिएगा।

गयास के शासन-काल में फ़ीरोज़ खाँ और उसका चचेरा भाई कासिम खाँ उच्च पद पर प्रतिष्ठित थे। गयास पर इन दोनों का बहुत स्नेह रहता था। जिस समय लालचीन ने गयास को अंधा किया और उसके कुचक्र में पड़कर सब कर्मचारी आहत हुए उस समय खाँ-बंधु दक्षिण भारत में नहीं थे। किसी कार्य-विशेष से ये दोनों कहीं दूर देश में गए थे। ये दोनों बड़े बहादुर एवं असाधारण बुद्धि के मनुष्य थे। उदार एवं सच्चरित्र होने के कारण साधारण प्रजा इनके प्रति बहुत स्नेह रखती थी। लालचीन भी इनसे डरता रहता था।

times, that it sided with morality, for the most condign punishments on record are invariably meted out to the biggest villains.” F.A. Steel’s India Through the Ages, p. 130.

लोगों की धारणा थी कि यदि ये दोनों उस समय राजधानी कुलबर्ग में रहते तो गयास पर लालचीन का कुचक्र न चल पाता ।

दक्षिण भारत में आकर इन दोनों ने सब समाचार सुना । इनके क्रोध का ठिकाना न रहा । इन लोगों ने दृढ़ प्रतिज्ञा की कि जिस प्रकार होगा, ये लोग लालचीन को उसके अत्याचार का समुचित दंड देंगे । किंतु राजधानी कुलबर्ग का संवाद सुन और वहाँ की दशा से अवगत होने पर इन्हें यह साहस न हुआ कि गयास के प्रति कुव्यवहार का पलटा लेने राजधानी में जायँ । इन लोगों को भय हुआ कि लालचीन इन लोगों पर भी कहीं चोट न करे, क्योंकि इन लोगों ने समझा कि लालचीन को पंजे में लाना टेढ़ी खीर है, और अस्त्रहीन संबल-विहीन रहने पर सिंह की माँद में पैठना कभी उचित नहीं है । अतएव ये लोग भीमा नदी के पार नहीं गए, वरन् राजधानी से प्रायः बीस कोस दूर पर रहकर अपने उद्देश्य की सिद्धि का उपाय सोचने लगे । इधर इन लोगों ने गुप्तचरों को नियुक्त किया जो राजधानी का संवाद सदा इन लोगों के पास पहुँचाया करते थे ।

कई सप्ताह इसी प्रकार बीत गए । एक दिन संभ्या समय एक चर ने आकर फीरोज़ खाँ से कहा कि मीर जाफ़र अल्लाह आँजू आपसे मिलना चाहते हैं ।

फीरोज़—क्यों ? क्या वे आपको साथ आए हैं ?

चर—नहीं। अभी तो राजधानी में हैं। जब तक आपकी अनुमति न पावेंगे, कैसे आ सकते हैं ?

फीरोज़—कुछ जानते हो, वे क्यों यहाँ आना चाहते हैं। आपसे उनकी भेंट हुई होगी।

चर—हाँ, इस यात्रा में वे कई बार स्वयं ही मेरे निकट आए थे। जहाँ तक मुझे अनुमान हुआ है, उनसे हम लोगों का बहुत कुछ काम निकल सकता है। इस समय मैं आपके पास यही पूछने आया हूँ। उनसे मैं कह आया हूँ कि तीन चार दिन के भीतर इसका संवाद मैं उन्हें दूँगा।

फीरोज़—मुझे तो कुछ हानि नहीं जान पड़ती। किंतु भाई साहब से पूछ लेना आवश्यक है। किसी आवश्यक काम से वे कहीं बाहर गए हैं। कल तक अवश्य लौट आवेंगे। तब तक मैं भी सब बातों को भली भाँति सोच-विचार लूँगा।

चर—ठीक है। तब मैं भी अपने दो एक परिचितों से मिल आऊँ। कल पहर दिन चढ़ते मैं यहाँ फिर आऊँगा।

फीरोज़—अच्छा। किंतु वहाँ की कुछ नई ख़बर कहते जाइए।

चर—क्या कहूँ ? शम्सउद्दीन दक्षिण भारत के सम्राट् हुए। बहमनी वंश का राजदंड उनके हाथों में आया। सिंहासन के अधिकारी न होने पर भी लालचीन की सहायता से वे सिंहासनारूढ़ हुए। अपने भाई की आँखों पर पैर रखकर वे शाही मसनद पर आसीन हुए हैं।

फ़ीरोज़—कौन जानता है कि किसके भाग्य में क्या बदा है ! किंतु दुःख इसी बात का है कि उस समय हम लोग यहाँ नहीं रहे । राजमाता की क्या दशा है ?

चर—राजमाता का स्नेह शम्सउद्दीन पर अधिक है; क्योंकि एक तो वे कनिष्ठ हैं और दूसरे शाहज़ादा होने के कारण अपनी माता से ज़्यादा मिलते जुलते हैं । इधर लालचीन अपना मतलब गाँठने के लिये राजमाता की सेवा में विशेष रूप से लगा है और गयासउद्दीन के विरुद्ध उनके कान भर रहा है । उनका भी भुकाव लालचीन की ओर अधिक है ।

फ़ीरोज़—पानी पानी में मिलता है । वह अभागिन भी तो गुलाम ही के वंश की है । भाई साहब को कई बार मना किया गया कि गुलाम की लड़की से विवाह कर अपने वंश को कलुषित न करें । किंतु उन्होंने नहीं सुना । मैं भली भाँति जानता हूँ कि यदि उसका सहारा न पाता तो लालचीन कदापि ऐसा न कर सकता ।

चर—जो हो, किंतु इसका परिणाम यह हुआ कि शम्स एक प्रकार से दक्षिण भारत के सिंहासन पर सुरक्षित हो गया है । देखते देखते लालचीन का अधिकार बहुत बढ़ गया है । उसका प्रबल प्रताप दिगंत में व्याप रहा है । किंतु नीच क्या ऊँचे पद पर पहुँचने से अपनी नीचता छोड़ता है ? धूल ऊँची उठने पर आँख ही में पड़ती है । लालचीन का अन्याय

दिनोंदिन बढ़ रहा है। दुर्बलता—मानसिक दुर्बलता—के कारण शम्स पूर्ण रूप से लालचीन के पञ्जे में पड़ गया है। वह शम्सउद्दीन को, पुतले की तरह, जैसा चाहता है नचाता है।

फीरोज़—अपर कर्मचारी उसके हाथ को क्यों नहीं रोकते ?

चर—उसके कुचक्र में पड़कर भूतपूर्व सुलतान तथा उनके कर्मचारियों की जो दुर्गति हुई उसका ध्यान कर अपर उमरा भी उससे भयभीत रहते हैं। अतएव मनमाना करने में लालचीन का कोई बाधक नहीं है।

फीरोज़—शम्स की मानसिक अवस्था कैसी है ?

चर—राज्य पाकर भी शम्स सुखी नहीं हुआ। अंतरात्मा उसे सदा कोसा करती है। उसके हृदय में सदा चिंताग्नि धधका करती है। दूसरे के न कहने पर भी उसकी आत्मा उसे बराबर अपराधी ठहराया करती है। किसी काम में उसका जी नहीं लगता।

फीरोज़—प्रजावर्ग की क्या दशा है ? उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है ?

चर—क्रमशः देश में असंतोष एवं अशांति फैल रही है। शम्स अपनी प्रजा की सहायता करने में पूर्ण रूप से असमर्थ है। नगर के अनेक प्रतिष्ठित निवासियों का मन एक-दम शम्सउद्दीन से अलग हो गया है। सच्ची बात तो यह है कि शम्सउद्दीन केवल नाम का बादशाह है, सब कुछ लालचीन ही के हाथ में है। वह जो चाहता है करता है और जिससे जो

चाहता है कराता है। उसके सामने शम्स की दाल नहीं गलती। जिस ओर चाहता है, कान पकड़कर घुमाता है। ऐसे राज्य से क्या सुख ? जब दूसरे ही के दिखाए हुए रास्ते पर चलना है, जब अपना किया कुछ होने ही का नहीं, तब राजदंड धारण करने ही में क्या सुख है ? अत्याचार कोई करे, किंतु उसका उत्तरदाता तो वही है। आपसे क्या कहें, किसी का जीवन एवं संपत्ति आज सुरक्षित नहीं है। कितने ही लोगों को, संदेह पर, कठिन दंड दिया जा रहा है। नीच लोग ऊँचे पद पर पहुँचाए जा रहे हैं। जो भद्र पुरुषों के सामने खड़ा होने का साहस न करते थे वे लोग आज उनसे बराबरी का दावा करते हैं।

फीरोज़—इसमें आश्चर्य क्या है ? अच्छा, यह तो कहो कि शम्स के विवाह का कुछ प्रबंध हो रहा है।

चर—कई बार साहस कर शम्स ने लुत्फुन्निसा के साथ अपने विवाह के संबंध में कहा; किंतु लालचीन से इसका कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिला। अतएव उस ओर से भी शम्स को निराशा हो गई है। सुना है कि लालचीन की लड़की इस विवाह पर सहमत नहीं है। देखता हूँ कि गुलाम की, राजकुड़ों में परिगणित होने की, आशा विफल होना चाहती है; किंतु अभी तक वह निराश नहीं हुआ है। चेष्टा कर ही रहा है। देखें, अंत में क्या होता है।

फीरोज़—मनुष्य क्या सोचता है और क्या हो जाता है। हम लोग सदा यही सोचा करते हैं कि वर्तमान में नहीं तो भविष्य में हम लोग अवश्य सुखी होंगे। किंतु वह भविष्य जब वर्तमान में परिणत हो जाता है तब हम लोगों को विदित होता है कि वह भी मरीचिका मात्र था। अभी तक लालचीन जो जो सोचता गया, सब उसकी रुचि के अनुसार होता गया। किंतु इतने पर भी, तुम्हारे कहने से ज्ञात होता है कि, वह सुखी नहीं हुआ।

चर—अन्नदाता, बुरा काम करके मनुष्य भला कभी सुखी हो सकता है ? और कुछ नहीं तो कम से कम आत्मा, जो सदा हम लोगों के पीछे लगी रहती है, हम लोगों को अवश्य दोषी ठहराया करती है, और इसके तिरस्कार से हम लोगों की सुख-शांति सब जाती रहती है। दूसरे को हम लोग धोखा दे सकते हैं। झूठ सच बोलकर पराए से हम लोग अपना पिंड छुड़ा सकते हैं। डर भय दिखाकर दूसरे का मुँह बंद कर सकते हैं, अपनी बुद्धि तथा बल से न्याय की आँखों में धूल भोंक सकते हैं। किंतु क्या किसी प्रकार हम लोग उस आत्मा को भुलावा दे सकते हैं जो परमात्मा का अंश है। यही कारण है कि सब कुछ करने पर भी लालचीन निश्चित नहीं हो सका। उसे रह रहकर इस बात का संदेह हो जाता है कि कहीं नगर में उसके विरुद्ध विद्रोह न हो जाय। अतएव वेतन बढ़ाकर तथा पुरस्कार दे देकर वह सैनिकों को

संतुष्ट रखने की चेष्टा कर रहा है। जो उमरा पिछले शासन में असंतुष्ट थे उन्हें भी, पदवृद्धि करके, उसने अपने मेल में कर लिया है।

फ़ीरोज़—आपका कहना बहुत ठीक है। पर यह तो कहिए कि हम लोगों के विषय में वह क्या सोच रहा है।

चर—बात यह है कि वह अभी तक आप लोगों के संबंध में कुछ नहीं जानता। उसे यह भी ज्ञात नहीं है कि आप लोग राजधानी के इतने निकट हैं। इसका कारण यह है कि अभी तक आप लोगों की ओर उसका ध्यान ही नहीं आया।

फ़ीरोज़—गयास के निवास-स्थान का पता आपको कुछ लगा ? डकैती की बात तो मैं निरी निर्मूल मानता हूँ। मेरी धारणा है कि लालचीन ने उन्हें कहीं छिपा रखा है।

चर—नगर में अनेक लोग तो यही विश्वास करते हैं कि सुलतान गयासउद्दीन को डाकू ले गए। किंतु गुप्त अनुसंधान से ज्ञात हुआ है कि उन्हें लालचीन ने कहीं कैद कर रखा है। कोई कोई कहता है कि वे सागर दुर्ग में हैं। किंतु अभी तक इसका कुछ ठीक पता नहीं लगा। सागर की ओर जाने से इसका भेद मिल सकता है।

फ़ीरोज़—उस ओर आप जा सकते हैं ?

चर—मुझे तो आज्ञापालन करना है। जहाँ आदेश पाऊँ, वहीं जा सकता हूँ। किंतु पहले तो मीर जाफ़र सांहब के पास जाना पड़ेगा।

फ़ीरोज़—अच्छा । वहाँ से लौट कर ही सही । आप जिस उत्तमता से इस कार्य को करेंगे, दूसरा नहीं कर सकता ।

चर—ऐसा ही होगा । आप विश्वास रखें कि मैं आपके लिये कुछ उठा नहीं रखूँगा ।

फ़ीरोज़—आप ही लोगों के भरोसे मैंने इस काम में हाथ डाला है । यह तो आप भली भाँति जानते हैं कि अपने लिये मुझे कोई चिंता नहीं है । किंतु प्रजा का दुःख मुझसे देखा नहीं जाता । गुलाम बादशाह हो और बादशाह टुकड़े का मुँहताज !—क्या न्याय है ?

चौथा परिच्छेद

कुलसुम की मनोरथ-बेलि पर पाला पड़ गया । जिसके लिये उसने इतना अनर्थ कराया वह उसके मत में न आई । लाख चेष्टा करने पर भी वह लुत्फुन्निसा को शम्स से ब्याह करने पर राजी न कर सकी । कुलसुम के गर्भ में जन्म धारण करने पर भी लुत्फुन्निसा का स्वभाव अपनी माता के प्रतिकूल था । यदि कुलसुम को राक्षसी कहें तो लुत्फुन्निसा को देव-बाला कहना पड़ेगा ।

पाठक जानते हैं कि लुत्फुन्निसा कुचक्र की कुछ बात न जानती थी । वह नहीं जानती थी कि उसकी माता ने उसे राजोद्यान में क्यों भेजा था । उसे नहीं मालूम था कि भोज के बहाने लालचीन गयास का सर्वनाश करना चाहता था । भोज के दिन वह अपने घर नहीं थी । वहाँ आने पर उसने सब सुना । सुनकर वह सहम गई । अपने जी में उसने स्थिर कर लिया कि मैं शम्स के साथ ब्याह न करूँगी ।

उस दिन से लुत्फुन्निसा बहुत दुखी हो गई । पिता प्रधान मंत्री हुए । जिसके साथ उसके विवाह की बात ठीक हो चुकी थी वह दक्षिण भारत का सम्राट् हो गया । किंतु लुत्फुन्निसा का दुःख बढ़ता ही गया । उसका मुखड़ा सदा

मलिन रहता था। आनन की कांति पीली पड़ती जाती थी। रात को नींद नहीं। दिन को खाना पीना नहीं। मन में चैन नहीं। देखते देखते वह नितांत दुर्बल हो गई। तिस पर माता-पिता का तिरस्कार, असह्य यंत्रणा, सदा का साँस गाँस सहते सहते वह और भी विपन्न हो गई। अब सदा वह अकेली रहती थी। आज कई दिनों से लालचीन उसे विवाह में सम्मति देने के लिये बहुत दबा रहा था। किंतु अभी तक उसका संकल्प दृढ़ रहा।

सूर्यास्त होने पर लुत्फुन्निसा अकेली अपने महल की छत पर टहल रही थी। कहीं कोई नहीं था। पश्चिम ओर नाना रंग की बदलियाँ धीरे धीरे आकाश में इधर से उधर होकर नाना रूप धारण कर संसार के क्षण-भंगुर स्वभाव का परिचय दे रही थीं। एक बदली का ठुकड़ा विशाल स्तंभ सा दिगंत में ऊपर की ओर खड़ा था। ज्ञात होता था कि तप्त लोहे का एक खंभ खड़ा हो। कितनी मेघमालाएँ सोने के पत्र से मढ़ी जान पड़ती थीं। पक्षी इधर से उधर उड़कर अपने बसेरे की ओर जा रहे थे। जब तक घोर अंधकार न सृष्टि को न घेर लिया और सुंदर गगनांगन में एक एक कर तार-काएँ अपनी अद्भुत ज्योति न दिखाने लगें, लुत्फुन्निसा इस अलौकिक सौंदर्य को देखती रही। तत्पश्चात् वहीं कर पर कपल रख एक लुद्रासन पर बैठ गई। चिंता की एक पर दूसरी तरंग उठकर उसके हृदय-सरोवर को डाँवाँडोल करने

लगी । एक ओर धर्म उससे कहता था कि शम्स की गर्दन पर गयास तथा अपर कर्मचारियों का खून है, उससे विवाह न कर । जिस सिंहासन का शम्स अधिकारी नहीं है उसके सुख के भोगने में तेरा साझी होना उचित नहीं । दूसरी ओर प्रेम कहता था कि शम्स के बिना तेरा जीवन व्यर्थ है । जिस प्रकार हो, उसे तू अपना बना । लुत्फुन्निसा इसी असमंजस में पड़ी थी कि कुलसुम उसके पास आई ।

दुहिता का ध्यान माता की ओर नहीं गया । कुछ देर तक कुलसुम चुपचाप खड़ी रही । फिर उसने कहा—बेटी ! तू अकेली क्या कर रही है ?

लुत्फुन्निसा चौंक उठी और बोली—क्यों ? कुछ तो नहीं ।

कुल—ऐसा कब तक निभेगा ? तू अपना जीवन तथा यौवन क्यों नष्ट कर रही है ?

लुत्फुन्निसा—क्यों ? क्या करूँ ?

कुल—वही बात कै बार कहूँ ? मैं नहीं जानती थी कि तू ऐसी नादान है । आज वे फिर कह रहे हैं कि तू इस विवाह में सम्मति दे, नहीं तो तेरा वा मेरा किसी का कल्याण नहीं है ।

लुत्फुन्निसा—चाहे जो हो, किंतु मैं तो अपने संकल्प से हट नहीं सकती । ऐसी कुघड़ी में शम्सउद्दीन सिंहासनारूढ़ हुए हैं कि सुख-संपत्ति कदापि उनका साथ नहीं दे सकती ।

जिस स्थान पर पहुँचने में मनुष्य को रुधिर की नदी पार करके जाना पड़ा है वहाँ बैठकर मनुष्य कभी आनंद नहीं भोग सकता । मैं कदापि पापी की संगिनी नहीं हो सकती ।

कुल—इन बातों से तेरा क्या संबंध ? इस विवाह से तुझे सुख क्या नहीं होगा ? यदि दक्षिण भारत की सम्राज्ञी होकर तू सुखी न होगी तो कब हो सकती है ? धन, मान, प्रेम सब की अभी तू स्वामिनी हो सकती है । तब फिर क्यों हिचकती है ?

लुत्फुन्निसा—धर्मभय से । अधर्म का साथ देना कभी अच्छा नहीं है । दरिद्र रहकर यदि मैं अपने धर्म की रक्षा करूँ तो वह ऐसे राज्य से कहीं अच्छा है ।

कुल—यह उपदेश तुझे किसने दिया है ? उन्मादिनी हो रही है क्या ?

लुत्फुन्निसा—तुम जो समझो ।

कुल—राज्य क्या किसी को योंही मिल जाता है ? एक को हटाकर दूसरा तो राजा सदा बनता है । जब गयास का पता नहीं है, डाकू उसे कहीं उठा ले गए, तब शम्स क्यों न गद्दी पर बैठे ? इसमें उसने अधर्म ही क्या किया ? इसमें उसका अपराध ही कौन सा है ? एक का जाना, दूसरे का आना यह तो संसार का नियम ही है । जिससे जिसका संबंध है वह उसी के सुख से सुखी होता है । दूसरे के दुःख से यदि

दुखी हुआ जाय तो संसार में दुःख का कुछ ठिकाना ही न रहे । गयास तेरा कौन था कि उसके लिये तू इतनी दुखी हो रही है !

लुत्फुन्निसा—मैं गयास के लिये दुखी कदापि नहीं हूँ । किंतु ऐसे मनुष्य की पत्नी होने से मैं अवश्य सहम जाती हूँ जो अन्याय से अपने भाई पर अत्याचार कर कितने निर्दोषियों का रुधिर बहा गद्दी पर बैठा है । तुम कह सकती हो कि उसने अपने हाथों को रक्त में नहीं डुबाया । हो सकता है; किंतु इन सब अनर्थों का कारण तो वही है । यह सब अत्याचार उसी के हित के लिये किए गए । इससे लाभ तो वही उठा रहा है । मैं उसके अपराधों को क्षमा कर सकती हूँ, उससे अब भी प्रेम कर सकती हूँ; किंतु उसके साथ राज्य-सुख कभी नहीं भोग सकती । मैं भली भाँति जानती हूँ कि इसका परिणाम अच्छा नहीं है । एक दिन ऐसा अवश्य आवेगा कि सबको अपने कुकर्म का फल भोगना पड़ेगा । मा ! तू मुझे अधिक न सता । अब कोई बात मुझसे छिपी नहीं है । अब भी समय है । तुम लोग अपने लोभ को संवरण करो, नहीं तो फिर किसी की बुद्धि काम नहीं आवेगी ।

कुल—तू बड़ी बहकी बहकी बातें कर रही है । तेरी बातें अब मैं सह नहीं सकती । तेरे पिता को बुला देती हूँ, जो जी में आवे उन्हीं से कह । आज से तू मेरे सामने न आना । तेरा मुँह मैं देखना नहीं चाहती ।

लुत्फुन्निसा एक आह भरकर चुप रह गई और कुलसुम के आदेशानुसार लालचीन वहाँ आया जहाँ मा बेटी बैठी थीं। लालचीन को देखकर कुलसुम आगबबूला होकर बोली—लो, जैसा उचित समझो करो। मैं इससे हार गई। यह मेरे कहने में नहीं है। आज से मैं इससे कभी न बोलूँगा। यह ऐसी निर्लज्ज हो गई कि मैं इसका मुँह देखना नहीं चाहती। आज से न मैं इसकी माता और न यह मेरी पुत्री !

लाल—क्यों ? बात क्या है ?

कुल—इसी से पूछो।

लाल—क्यों री बेटी, तू क्या कहती है ?

लुत्फुन्निसा—मुझे कुछ कहना नहीं है। आपके जी में जो आवे कीजिए। किंतु मैं शम्स के संग व्याह नहीं कर सकती।

लाल—क्या मेरे स्नेह का तू यही पलटा देती है ? इसी लिये तेरा लालन-पालन किया, तुझे शिक्षा दी ? मेरे हौसले पर कुठाराघात क्यों करती है ?

लुत्फुन्निसा—आपके स्नेह एवं वात्सल्य को मैं नहीं भूल सकती। किंतु जिन लोगों का खून नाहक गिराया गया है उनके दुःख से, उनके परिवार के दुःख से, मैं दुःखी हूँ। मैं दुःखी हूँ कि सुलतान गयासउद्दीन बिना किसी अपराध के

आपके हाथों से अंधा बनाया गया । मैं दुखी हूँ कि इस राज्य में इतने निर्दोष आर्त्त विलाप कर रहे हैं ।

लाल—क्यों ? तेरी ऐसी स्पर्धा कि मेरे सामने—मेरे मुँह पर—तू मेरी निंदा करे ! यदि तेरी नसों में मेरा रुधिर परिधावित न होता तो आज इसी जगह मैं तेरा सिर गर्दन से जुदा कर देता । देखता हूँ कि तू क्योंकर शम्स से शादी नहीं करती !

लुत्फुन्निसा—और जो हो, किंतु यह तो हो नहीं सकता ।

लाल—क्या तू मेरे सामने ऐसी बढ़ बढ़कर बातें करेगी ?

लुत्फुन्निसा—सत्य सदा अप्रिय होता है । घोर अत्याचार के सहारे मैं सुख भोगना नहीं चाहती । अपनी आत्मा को कलुषित कर मैं जीवन को भार बनाना नहीं चाहती । ऐसे राज्यभोग से मधुकरी माँगनी अच्छी है । जो अपने भाई का नहीं हुआ वह स्त्री का क्या होगा ?

लाल—यदि तू औरत न होती, यदि तू मेरी अपनी संतति न होती तो आज तुझे यहाँ से हटाकर पृथिवी का भार कम कर देता । किंतु क्या करूँ, लाचारी है । मैं सबको ठीक कर सका; परंतु घर में ही मेरी बुद्धि काम नहीं आती । इतना क्यों किया ? जिसके लिये चोरी की वही मुझे चोर कह रही है ! जिसके सुख की सामग्री इकट्ठी की वही मेरा तिरस्कार कर रही है । संसार की गति विचित्र है ।

कुल—तुम क्यों व्यर्थ माथा खपा रहे हो ? इस चुड़ैल को छोड़ो । इसके जी में जो आवे, करे । इससे क्या आशा की जा सकती है ? इसे पेट में रखकर भर पाई । इस बे-कही से कुछ कहना व्यर्थ है । जाओ, अपना काम देखो । देखें, यह क्या करती है । कब तक यह इस राह पर चलती है ! छोड़ दो । यह आप ठीक हो जायगी ।

लाल—अच्छा, एक बार तुझसे और कह देता हूँ । दो सप्ताह के भीतर यदि तू अपने मन को स्थिर न करेगी तो फिर मेरा दोष नहीं । तुझसे मैं साफ़ कह देता हूँ कि जिस प्रकार होगा, मैं तेरी शादी शम्स से करूँगा ।

ऐसा कह लालचीन कुलसुम के साथ वहाँ से चला आया । लुत्फुन्निसा अकेली रह गई । एक पहर रात बीत गई थी । चंद्रदेव आकाश में अभी उदय हुए थे । उनकी क्षीण ज्योति छत पर छिटक रही थी ।

आह भरकर लुत्फुन्निसा ने आप ही आप कहा—या खुदा !

“अगर कुछ मुँह से कहती हूँ, मज़ा उल्फ़त का जाता है ।

अगर चुप होके रहती हूँ, कलेजा मुँह को आता है ॥”

हाय ! अब क्या करूँ ? अंत में क्या मा बाप ही के द्वारा मुझे दुःख भोगना था ? देखती हूँ कि जिसकी पूजा करना मेरा धर्म है उसी के विरुद्ध कुविचारों को अपने मन में स्थान देना पड़ता है ।

जिसको हम समझे थे अपना, वह है सर का दुश्मन ।

जिसमें चाहत थी, वह है खूने-जिगर का दुश्मन ॥

चैन दम भर नहीं देता है, बशर को दुश्मन ।

घर में रहने नहीं देता, कभी घर का दुश्मन ॥

जो इनकी आज्ञा मानती हूँ तो धर्म जाता है । सांसारिक सुख तो कोई ऐसी वस्तु नहीं जिसके लिये धर्म छोड़ा जाय । मैं कह नहीं सकती, किंतु क्या मैं देखती नहीं कि इस राज्य में अत्याचार दिनोंदिन बढ़ता जाता है । कोई किसी की सुननेवाला नहीं है । जिसे रक्तक होना चाहिए वही भक्तक हो रहा है । कर देते देते प्रजा काँप उठी तो भी कोष खाली ही पड़ा है । देश की कृषि कम हो रही है । इतना अन्न पैदा करने पर भी किसानों को कुछ बचता नहीं । सब लगान में चला जाता है । व्यापार की भी वही दशा है । रोज़ रोज़ दिवाला निकलने ही की बात सुनने में आती है । भय से विदेशी यहाँ व्यापार करने नहीं आते । नोकरी चाकरी में किसी का जी नहीं लगता, क्योंकि उसमें अब किसी की प्रतिष्ठा नहीं है । नीच ऊँच का विचार एकदम हट गया । जो खुशामद, भूठी प्रशंसा, पर-निंदा में रहता है, उसी की पदवृद्धि होते देखती हूँ । पिता जानते हैं कि मैं औरत हूँ, मुझे इन बातों की क्या खबर है । किंतु मैं खूब जानती हूँ कि शम्सउद्दीन के राजत्व-काल में केवल सैनिकों की प्रतिष्ठा है । पिता का ध्यान सबसे अधिक सेना-विभाग ही की ओर है । सेना के भरोसे वे प्रजा

की दुर्गति पर तनिक भी ध्यान नहीं देते । अन्नाभाव से प्रजा दरिद्र हो रही है । दरिद्रता के कारण सारे राज्य में रोग का अचल राज्य हो रहा है । सभी दुखी, सभी दरिद्र, सभी रोगी, सभी दुर्बल—फिर असंतोष क्यों न फैले ? सारे देश में घोर असंतोष होने पर भी मेरे पिता, सैनिकों के बल पर, कुछ परवाह नहीं करते ।

सभी जानते हैं कि सब अनिष्टों के आदिकारण मेरे पिता हैं । किंतु मैं कहती हूँ कि यदि शम्स में इस प्रकार की मानसिक दुर्बलता न होती तो मेरे पिता के किए कुछ न होता । राजा का कुछ अपना कर्तव्य भी तो है । उसके पालन की शक्ति जिसमें नहीं उसका राजदंड धारण करना वृथा है । जब शम्स सिंहासन पर बैठा, कुछ दिनों तक मैं देखती रही कि वह किस प्रकार राजधर्म का पालन करता है । किंतु मैंने देखा कि उसमें राजा का एक भी लक्षण और गुण नहीं है । हर प्रकार से वह अयोग्य ही है । और हो क्यों नहीं ? जिसकी सहायता के कारण उसे अनधिकार पद मिला है वह उसी का आज्ञाकारी बना रहता है । भला मैं ऐसे कुकर्म की भागिनी क्योंकर हो सकती हूँ ? इन लोगों की मति मारी गई है । इसी से ये लोग इस साधारण बात को नहीं समझ सकते कि जब प्रजा को दरिद्र बनाने का काम पूरा हो जाता है तब दुःख के साथ साथ असंतोष बढ़ता है । असंतोष से राजभक्ति का हास, शासन-पद्धति में अवि-

श्वास और राजा की न्यायपरता में संदेह होने लगता है। प्रजा अपने सब दुःखों को दूर करने का उपाय राजनैतिक स्वत्व प्राप्त करना ही समझती है। सुशिक्षित अथवा अर्द्ध-शिक्षित पुरुष ऐसे समय में भोली-भाली प्रजा के नेता बन बैठते हैं और बुरे अथवा भले मार्ग पर उन्हें ले जाते हैं, जिसका उत्तरदायित्व केवल उनके सिर पर रहता है।

ऐसी ही अवस्था में समाज-शास्त्र, अराजकता तथा शासन-साहित्य का प्रचार होता है। देश में षड्यंत्र रचे जाते हैं, निर्दोष पुरुषों का रक्त प्लावित होता है और अंतःराष्ट्रविप्लव तथा युगांतर उपस्थित होता है। इन सभी का उत्तरदायित्व केवल राजा, राजपुरुषों तथा नेताओं पर है, जो प्रजा में असंतोष की अग्नि भड़काकर अपने विनाश का स्वयं आवाहन करते हैं। मैं निश्चित रूप से जानती हूँ कि इस राज्य का पाया टूट नहीं है। जिस क्षण विद्रोहाग्नि प्रज्वलित होगी, यह राज्य भस्म हो जायगा। शम्स पर मैं अपना प्राण निछावर कर चुकी हूँ। उसे छोड़ मेरी गति नहीं है। इस जीवन में मैं किसी दूसरे का मुँह नहीं देख सकती। किंतु इस गद्दी की स्वामिनी बन मैं बेगम नाम रखाना नहीं चाहती। क्या कहूँ ? पिताजी समझते नहीं, जिस दिन मेरा विवाह शम्स के साथ होगा उसी दिन असंतोष अधिक बढ़ जायगा। बस, लोग सोचने लगेंगे कि अपना मतलब गाँठने के लिये लालचीन ने यह सब कुकर्म किया है। पिताजी वर्त्तमान को देखते हैं। मैं परिणाम

से डरती हूँ । अब तो जो बदा होगा, सहना ही पड़ेगा । धर्म के पादपद्म पर प्रेम को बलिदान देना ही होगा । इस जीवन में दुःख छोड़ अब मुझे सुख नहीं है । पर क्या करूँ ? कर्त्तव्य के अनुरोध से सब सहना ही पड़ेगा । खुदा के सिवा कोई सहायक भी तो नहीं है । हाय !

“कहे क्या हाय ज़ख़मे-दिल हमारा ?

देहन पाया है लब गोया न पाया ॥”

पाँचवाँ परिच्छेद

बीजापुर के सुदृढ़ गढ़ में फ़ीरोज़ खाँ और कासिम खाँ बैठे आपस में गुप्त परामर्श कर रहे हैं। आजकल सारे दक्षिण भारत में इनके गुप्तचर घूम रहे हैं। गुप्त रीति से ये लोग एक बहुसंख्यक सेना इकट्ठी करने के यत्न में हैं। इन लोगों ने बीजापुर के गढ़ को एक प्रकार से सुरक्षित कर रक्खा है। सदा नए नए लोग इनसे भेंट करने आ जा रहे हैं। किंतु इतनी चेष्टा करने पर भी इन लोगों को अभी तक गयासउद्दीन का पूरा हाल नहीं मिला। राजधानी से आज मीर जाफ़र बल्लाह आँजू बीजापुर आनेवाले हैं। दोनों बंधु यही विचार कर रहे हैं कि उनके साथ कैसा बर्ताव किया जाय।

कुछ रात बीत चुकी थी। जिस कमरे में ये लोग बैठे थे वहाँ एक शमादान जल रहा था। हर ओर निःस्तब्धता छा रही थी। बहुत देर तक इधर उधर की बातें होने पर फ़ीरोज़ ने कहा—भाई साहब ! क्या आश्चर्य है कि इतना यत्न करने पर भी हम लोगों को अभी तक गयास का पता न लगा। न जाने इस चांडाल ने उसे कहाँ छिपा रखा है। डरता हूँ, कहीं उसे खपा तो नहीं दिया।

कासिम—नहीं, यदि ऐसा करता तो अभी तक उसका हाल हम लोगों को मिल जाता। जहाँ तक संवाद मिलता है,

गयास सागर दुर्ग ही में है । किंतु किसी ने उसे अपनी आँखों से अभी तक नहीं देखा । मीर सुद्दू बड़ा दुष्ट और चालाक है । उसे हम लोग किसी प्रकार अपने हाथ में नहीं कर सकते ।

यदि वह हम लोगों से मिल जाय तो बहुत काम हो । क्योंकि 'सागर दुर्ग' में अस्त्र-शस्त्र बहुत हैं और अन्न भी इतना संचित है कि हजार सिपाही दस वर्ष तक खा सकते हैं । इसके अतिरिक्त वहाँ दो सौ सुशिक्षित सैनिक भी रहते हैं । इन बातों का पूरा पूरा हाल मुझे मिला है । सुद्दू को अपने पक्ष में लाने के लिये मैंने एक विश्वासी दूत नियुक्त भी किया है । देखें क्या होता है ।

फ़ीरोज़—किंतु सुद्दू को बहकाना टेढ़ी खीर है । लालचीन से उसका बहुत मेल है । उन दोनों का एक गुट है । उस पर आप भरोसा न करें । रही राजधानी की बात, वहाँ के लोगों का मुझे ठीक अंत नहीं मिलता । इसमें तो संदेह नहीं कि वहाँ असंतोष बहुत है । किंतु वहाँ के लोगों से इसमें कहाँ तक सहायता मिलेगी, यही विचारणीय है ।

कासिम—असंतोष की बात आप क्योंकर कहते हैं ?

फ़ीरोज़—उस रोज़ आप नहीं थे । राजधानी से आया हुआ चर कहता था कि लालचीन रुपए के लिये हाथ हाथ कर रहा है । जिस प्रकार हो रुपया मिले, यही उसकी एकांत वासना है । प्रजा पर सदा नए नए कर लगाए जा रहे हैं ।

नित्य नए प्रतिष्ठित राजपुरुषों की मानहानि की जा रही है और उनके अपहृत धन से कोष भरा जा रहा है। धन के लिये नित्य नए निर्दोषी को दंड दिया जा रहा है। जहाँ चार आदमी एक मत के मिलकर बातचीत करने लगे वहीं लालचीन को संदेह हुआ। सारांश यह कि अब किसी का धन, जन, परिवार, प्रतिष्ठा, मान-मर्यादा वहाँ सुरक्षित नहीं है। लोग अपनी जान की रक्षा के लिये राजधानी छोड़कर भाग रहे हैं।

कासिम—मैं नहीं समझता था कि शम्स इतना नीच है। जो हो, राजवंश में इसने जन्म धारण किया है। बादशाह की गोद में पला है। इसकी नसों में महमूद शाह का रुधिर दौड़ रहा है। तब क्योंकर यह इतना नीच कर्म कर रहा है ? प्रजा पर इतना अन्याय हो रहा है और वह दम साधे बैठा है।

फ़ीरोज़—आप भूलते हैं। इसमें शम्स का कोई दोष नहीं है। वह तो लालचीन के हाथों का पुतला हो रहा है। दुर्बल हृदय का तो वह हई है। इधर लालचीन और अपनी मा के हाथों में पड़कर वह निरा निकम्मा हो रहा है। सुना है कि एक बार साहस करके इस अन्यायपूर्ण शासन के विषय में उसने लालचीन से कहा था। किंतु अपने मंत्री तथा माता से वह इस प्रकार ताड़ित और तिरस्कृत किया गया कि फिर वह कुछ बोल न सका। उसका सारा उत्साह भंग हो गया।

वह केवल नाम का राजा है । शासन-भार पूर्ण रूप से लाल-चीन ने अपने हाथों में रक्खा है । जिन लोगों ने देखा है वे कहते हैं कि राज्य पाकर भी शम्स राज्यसुख से वंचित है । राजदंड हाथ में रखकर भी वह अपनी रुचि के अनुसार शासन नहीं कर सकता । स्वतंत्र राजा होने पर भी वह लालचीन का आज्ञाकारी दास है ।

कासिम—तब क्या हम लोग उससे कुछ आशा रख सकते हैं ?

फ़ीरोज़—इसमें तो संदेह है । यदि हम लोग उसके सामने रहते तो जो चाहते करा लेते । किंतु पीछे लाल-चीन को छोड़कर वह हम लोगों का नहीं हो सकता, क्योंकि कम से कम यह बात तो उसे ज्ञात है कि वह लालचीन ही की कृपा से सिंहासनारूढ़ हुआ है ।

कासिम—जो हो, किंतु एक बार संवाद भेजकर देखा तो जाय, क्या कहता है ।

फ़ीरोज़—राजधानी से आज मीर जाफ़र उल्लाह आँजू आनेवाले हैं । उनसे बातचीत करने के बाद जैसा होगा ठीक किया जायगा ।

कासिम—यह मित्र होकर आते हैं या शत्रु ?

फ़ीरोज़—भला शत्रु होकर भी कोई किसी से मिलने आता है !

कासिम—भीतर की बात कौन जानता है ?

फीरोज़—बातचीत करने में तो बात खुल जायगी । तब जैसा उचित होगा किया जायगा । यहाँ सब प्रबंध ठीक रक्खा गया है । तनिक सा भी संदेह होने पर उन्हें यहाँ कैद कर लिया जायगा । देखें आकर वे क्या कहते हैं । नहीं मालूम क्यों वे कुलबर्ग से हटना चाहते हैं । आजकल भी तो वे एक अच्छे पद पर हैं ।

कासिम—शरीफ़ कमीने के साथ रहना कभी पसंद नहीं कर सकता । अपराध किसी का हो, किंतु दोष तो शम्स ही का समझा जायगा । नाँकरो के कु-आचरण का उत्तरदायित्व स्वामी के ऊपर रहता है । किसी जाति वा मनुष्य को किसी अन्य जाति वा मनुष्य पर मनमाना शासन करने का अधिकार कदापि नहीं है । यदि कोई ऐसा करे तो मानना पड़ेगा कि वह प्रकृति के नियम के विरुद्ध कर रहा है । प्रेम द्वारा मनुष्य जिस पर चाहे अपना अधिकार जमा ले; किंतु दबाव, अन्याय तथा जुल्म अधिक दिन तक सहायक नहीं हो सकते । प्रजा के मन को वश में करना और प्रजा का मुँह बंद करना दो बातें हैं । एक बार जब शम्स गद्दी पर चढ़ चुका था तब वह चाहता तो अच्छा शासक बन सकता था । प्रेम-रज्जु में प्रजा को बाँधकर वह उन्हें आज्ञाकारी बना सकता था । क्योंकि यथार्थ में राजा किसी जाति वा समाज का शासक नहीं है, वरन् उसका सेवक है और समाज के उद्देश्यों, विचारों तथा इच्छाओं का पूर्ण रूप से संपादन करना ही उसका प्रधान धर्म है ।

फीरोज़—इसमें क्या संदेह ? सर्वोत्तम राज्य-व्यवस्था स्वतंत्र राज्यप्रणाली ही है । इससे सब प्रकार के जातीय उद्देश्य सिद्ध होते हैं । किंतु लालचीन चाहता है कि सैनिकों की सहायता से प्रजा की स्वतंत्रता अपहरण करे । विद्या, बुद्धि, जाति तथा धन का मान आजकल राजधानी में नहीं है । वहाँ जो हाँ में हाँ मिलाता है, जो ठकुरसुहाती कहता है उसी की तूती बोलती है । लालचीन में यह बुद्धि नहीं है कि ठकुरसुहाती और मैत्री में भेद कर सके—एक धोखा देना है और दूसरा काम करना ।

कासिम—यह तो मैं भली भाँति जानता हूँ कि शस्त्रबल से राज्य नहीं किया जाता । जो काम स्नेह से होता है वह बल-प्रयोग से नहीं हो सकता । न्याय से विद्रोह की शांति की जाती है, न कि लोहे से । अराजकता की औषध स्वतंत्रता है न कि गुलामी । मिथ्या धर्म का प्रचार सद्धर्म से रोका जाता है न कि नास्तिकता से ।

फीरोज़—यह सब उपदेश राजा के लिये है न कि गुलाम के लिये । शम्स यदि कुपथ पर चलता तो उसे ये सब उपदेश दिए जाते । किंतु यहाँ तो “ढोल, गँवार, जुद्र, पशु, नारी । ये सब ताड़न के अधिकारी ॥” का सिद्धांत है । मुझे यह देखकर आश्चर्य नहीं होता कि दक्षिण भारत की विस्तृत राजधानी में आज वणिकू महाजन सेठ साहूकार खोजने से

भी नहीं मिलते और इतना कर लगाने पर भी राज्यकोष खूँखा ही खूँखा पड़ा है ।

कासिम—लालचीन लोगों को इतनी यंत्रणा क्यों दे रहा है ?

फ़ीरोज़—राजनैतिक अधिकार माँगने से । लोग कहते हैं कि सैनिक विभाग का व्यय कम करो । शांति के दिनों में इतनी बड़ी सेना रखने की क्या आवश्यकता है ? जो व्यय होता है उसे तो हमों लोग देते हैं तब तुम हम लोगों का ऐसा परामर्श क्यों न मानोगे जिसमें व्यय कम हो ? दूसरी बात यह है कि लोग कहते हैं कि शम्स राजा भले ही रहे किंतु लालचीन इस योग्य नहीं है कि मंत्री का काम करे ।

कासिम—यह बात तो निर्विवाद है कि राजनैतिक अधिकार माँगना राजा से द्रोह करना नहीं है, वरन् उसका शुभचिंतक और भक्त बनना है । यहाँ के निवासी एक शृंखलाबद्ध जाति के हैं । इनकी एकता में तखड़ पखड़ करना, लोगों को अकारण ही दोषी ठहराना, शांतिप्रिय नागरिक को विद्रोही करना, शम्स अथवा उसके मंत्री के लिये अपनी सल्तनत की उन्नति के मार्ग में स्वयं काँटा बोना है । मैं भली भाँति जानता हूँ कि यहाँ के रहनेवाले कार्यतत्पर, उन्नतिशील, सत्यशाली और राजभक्त हैं । इनको अधीन करने के लिये बल प्रयोग करना एक बहुत निर्बल शस्त्र है । जहाँ तक ज्ञात होता है, लोग शम्स से उदासीन नहीं हैं । लोगों की

घृणा लालचीन ही की ओर है । यदि मेरा परामर्श माने तो मैं उससे कहूँ कि जिस प्रकार हो वह लालचीन को अपने यहाँ से हटा दे । हाय हाय, राजा का स्वार्थवश कादर होना कितना अपमानजनक है !

फीरोज़—माली यदि फल को न तोड़े तो बहुत पककर वा मुरझाकर वह एक दिन आप ही आप गिर जाता है । निर्बल जंतु जब अपना पीछा करनेवाले से हार जाता है और उसे जीवन की आशा तथा भागने का मार्ग नहीं रह जाता तब वह अपने आक्रमणकर्त्ता ही पर टूट पड़ता है । एक दिन तुम इसी प्रकार देखोगे कि बहमनी राज्य विध्वंस हो जायगा । शम्स की सत्तनत खाक में मिल जायगी और लालचीन अपना सा मुँह लिए रह जायगा । क्योंकि यह बात स्वयं सिद्ध है कि प्रजा के लाभ के लिये राजा की सृष्टि हुई है, न कि राजा के लिये प्रजा की । अतएव प्रजा का ईश्वर-प्रदत्त अधिकार है कि वह अपनी इच्छा, सुगमता तथा लाभ के अनुसार शासन-प्रणाली में परिवर्तन करे ।

कासिम—क्या शम्स ऐसा नीच हो गया है कि अपने हित की भी नहीं सुनेगा ?

फीरोज़—मुझे तो आशा नहीं है ।

कासिम—तब तो इसे निर्मूल ही करना उचित है । हम लोग कई कारणों से इस काम में हाथ डालने को बाध्य हैं । एक तो यह है कि गयासउद्दीन हम लोगों का खून था । उसके

खून का बदला लेना हम लोगों का धर्म है । दूसरी बात यह कि लालचीन इतना बड़ा अपराध कर हम लोगों के सामने स्वच्छंद विचरण कर रहा है । बाहु में बल रहते इसे समुचित दंड न देना कर्त्तव्यच्युत होना है । हम लोग राजवंश के हैं, हम लोगों की आँखों के सामने यदि हम लोगों के वंश की प्रजा को दुःख हो तो उसका उत्तर हम लोगों को खुदा के सामने अवश्य देना पड़ेगा । भाई की पवित्र आत्मा स्वर्ग से हम लोगों की ओर देख रही है । हम लोगों ने उसके कहने पर कान नहीं दिया ।

फ़ीरोज़—इतना सोच करना तो व्यर्थ है ! सब प्रबंध तो ठीक हो ही रहा है । इस समय केवल यही विचारना है कि मीर जाफ़र के साथ क्या बातचीत करनी होगी ।

कासिम—यह सोचकर क्या होगा, एक बार जब उन्हें बुलाया गया है तो वे अवश्य आवेंगे । उस समय उनका जैसा बर्त्ताव होगा उसी के अनुसार अपनी ओर से भी बर्त्ताव किया जायगा और वे जैसी बातचीत करेंगे, समयानुकूल उसी प्रकार की बातें उनसे की जायँगी । किंतु हाँ, एक बात पर अवश्य ध्यान रहे कि गढ़ के भीतर बिना जाँचे उन्हें लाना उचित न होगा ।

फ़ीरोज़—तब उनसे कहाँ मिलना होगा ?

कासिम—गढ़ के बाहर एक जगह पहले ही से ठीक करके रखनी होगी । वहाँ उनके रहने का, खाने पीने का,

सोने बैठने का, सब प्रबंध रहेगा और पहली बार आप जाकर उनसे वहाँ भेंट करेंगे । फिर जैसा देखा जायगा, किया जायगा ।

फ़ीरोज़—आप ठीक कहते हैं । तब जाकर दासों को आज्ञा दीजिए कि गढ़ के बाहर एक प्रतिष्ठित मेहमान के लिये सब प्रबंध ठीक करके रखा जाय ।

“अच्छा” कहकर कासिम खाँ वहाँ से बाहर गए ।

छठा परिच्छेद

बीजापुर के गढ़ के बाहर एक साधारण घर में संध्या समय फीरोज़ खाँ बैठा किसी की राह देख रहा है। क्षण क्षण उसकी उत्कंठा बढ़ती जा रही है। कभी आँगन में आता है कभी फिर घर में जाकर मसनद के सहारे बैठ जाता है। कई बार ऐसा करने पर एक प्रकार से हताश हो वह थककर बैठ गया और आप ही आप कहने लगा कि कहाँ आए। जान पड़ता है कि इसमें कुछ धोखा है। यहाँ आने की मैंने क्यों उन्हें अनुमति दी ? जाकर लालचीन से मिला तो नहीं है ? और हम लोगों का भेद जानने के लिये यहाँ आया चाहता है, नहीं तो वह मेरे चर के साथ क्यों नहीं आया ? दोपहर तक आने की बात थी और इधर संध्या हो गई, अब तक नहीं आया। क्या करूँ ? कौन जानता था कि गुलाम को इतनी बुद्धि है। इसकी कूटनीति तो राजाओं से भी बढ़ गई है। इसका कोई भेद हम लोगों पर प्रकट नहीं होता और एक एक कर हम लोगों का सब भेद यह जानता जाता है। हम लोग जो प्रबंध सोचते हैं उसी को वह धूल में मिला देता है। सब तो हुआ परंतु शम्स की माता को अपने मेल में लाकर यह बहुत आफ़त कर रहा है। वह उसके मेल में क्योंकर आई ? इसमें तो कुछ अधिक आश्चर्य नहीं है। वह भी तो गुलाम

वंश की ही है न। किंतु जान रहते तो इसका पीछा न छोड़ूँगा। इस अपमान को भूलना असंभव है। और कुछ नहीं तो समराग्नि ऐसी प्रज्वलित कर दूँगा कि उसमें लालचीन आप से आप जल मरेगा। किंतु सैनिकों को क्योंकर हाथ में करूँ ? अनंत धन व्ययकर यह उन्हें अपने अधीन रखता है। हम लोगों के पास तो धन नहीं है। इसका क्या उपाय किया जाय ? एक दो धनाढ्य वणिकों को जब तक अपने पक्ष में नहीं किया जाय, काम नहीं चल सकता। अच्छा कासिम को इस काम के लिये बाहर भेजूँ। किंतु जाफ़र अभी तक क्यों नहीं आया ? न आवे न सही। मैं दूसरे काम में क्यों नहीं लगता ? यहाँ बैठा बैठा क्या कर रहा हूँ ?

ठीक इसी समय पर पद-ध्वनि सुनाई पड़ी। फ़ीरोज़ ने फिरकर द्वार की ओर देखा और उसकी दृष्टि दो आगंतुकों पर पड़ी। उठकर फ़ीरोज़ दरवाजे पर गया और जाफ़र से मिलकर उसे सादर भीतर ले आया। उपवेशन करने पर फ़ीरोज़ ने कहा—आपके आने में बहुत देर हुई। मैं तो घबड़ा गया था। जी में आता था कि यहाँ से चला जाऊँ।

जाफ़र—माफ़ कीजिए। आपको बहुत कष्ट हुआ। दुर्दिन आने पर सब कामों में अड़चन ही पड़ती है।

फ़ीरोज़—सो क्या ?

जाफ़र—घोड़ा बहुत थक गया था। इसी से यात्रा में कुछ

कष्ट हुआ । किंतु जब निर्दिष्ट स्थान पर सकुशल पहुँच गया तब सब अच्छा ही अच्छा है ।

फीरोज़—बहुत दिनों के बाद भेट हुई । कैसे रहे ?

जाफ़र—यहाँ बैठकर अपनी दुर्गति क्या कहूँ ? लोग कहते हैं कि दीवार को भी कान होता है । अतएव चलिए किसी जनहीन लतिकाकुंज में चल हम लोग रोकर अपने दिल की जलन को निकाल लें तब दूसरी बात करें । दुःख के बोझ से तो हृदय चूर चूर हो रहा है ।

फीरोज़—यह क्या ? मर्द होकर, बहादुर होकर आप रोने की बात क्यों करते हैं ? संहारिणी असि को वीर जैसे दृढ़तापूर्वक धारण कीजिए ।

जाफ़र—आप यहाँ बैठे बैठे ऐसी बातें करते हैं । किंतु यदि आप राजधानी की दशा देखते तो आपका कलेजा दा खंड हो जाता । नित्य नई विधवा रोती है, नए अनाथ का आर्त्तनाद सुनाई देता है । नित्य नई गगनभेदी शोकध्वनि सुनकर शोक भी शोकाकुल हो जाता है । शोकाकुल ध्वनि-प्रतिध्वनि करती हुई जननी अहर्निश विलाप कर रही है । चलिए चलकर अपनी आँखों से देख लीजिए और यदि बाहु में बल हो, हृदय में शक्ति हो, मन में उत्साह हो तो पीड़िता जननी की रक्षा कीजिए ।

फीरोज़—आपके कहने की प्रतीति करनी पड़ती है और प्रतीति करने से शोक की वृद्धि होती है । यदि कभी समय

अनुकूल हुआ और अपने से हो सका तो इसकी निवृत्ति का उपाय किया जायगा । आप जो कहते हैं वह सब सत्य भी हो सकता है । किंतु एक दिन तो आप लोग सुलतान शम्स-उद्दीन की बहुत प्रशंसा करते थे । जिस अत्याचारी का नाम लेने से जिह्वा दग्ध होती है, उसे एक दिन आप लोग साधुवत् मानते थे । अभी तक आपको तो उसने स्पर्श नहीं किया । तब आप उसकी भक्ति विशेष रूप से क्यों नहीं करते ? और आप क्या जानते हैं कि जो दूसरा राजा होगा वह इससे भी बुरा न होगा ?

जाफ़र—आप ऐसी बातें क्यों कर रहे हैं ? क्या मुझ पर आपको कुछ संदेह है ? और जो कुछ हो किंतु विश्वासघातक मैं नहीं हूँ ।

फीरोज़—आप नहीं हैं । परंतु मैं तो हूँ । चेहरा देखकर मन का भाव जानना कठिन है । आपके कहने से ज्ञात होता है कि शम्स ने विश्वासघात किया । राज्यमद सबको व्यापता है और पिछला स्वभाव छूट जाता है । साधु स्वभाव-वाले भी कदाचारी हो जाते हैं । प्रार्थना करता हूँ, अपराध क्षमा हो, आप जैसे हैं वैसे ही रहेंगे । मेरे विचार आपको बदल नहीं सकते । उज्ज्वलतम विमल “फिरिशते” के पतित हो जाने पर भी ऊपर “फिरिशते” अभी तक उज्ज्वल ही हैं । यदि बुरा अच्छे का रूप धारण करे तो क्या अच्छा अपने स्वरूप को त्याग देगा ?

जाफ़र—मेरी आशा विफल होना चाहती है ।

फीरोज़—आप अन्यथा न समझें । आत्मरक्षा के लिये मैं इतना सतर्क हूँ । आपको अपमानित करने के लिये मैं कुछ नहीं कहता । आपकी क्रिया निश्छल हो सकती है ।

जाफ़र—हे जन्मदे ! तुम्हारे वक्तःस्थल से रुधिर बहे, बहने दो, क्योंकि तुम्हारी रक्षा करनेवाला कोई नहीं है । अत्याचार ! तुम अपनी शाखा-परिशाखाओं का स्वच्छंद विस्तार करो, धर्म तुम्हें बाधा देने का साहस नहीं करेगा । अन्याय ! तुम पूर्ण रूप से अपना अधिकार देश पर जमाए रखो, क्योंकि अधिकारी तुम्हारे कामों में हस्तक्षेप नहीं करेगा । हुजूर से मैं इस समय बिदाई चाहता हूँ । दक्षिण भारत का क्या, यदि सारे भारतवर्ष का राज्य मुझे मिले तो भी आपके साथ ऐसी दुर्नीति का व्यवहार करना मेरे लिये संभव नहीं है ।

फीरोज़—आप दुखी न हों । आप पर आशंका ही कर मैं ऐसा नहीं कर सकता हूँ । इसका दूसरा कारण भी है जिससे मैं वर्तमान सुल्तान के विरुद्ध कुछ करना नहीं चाहता । मैं भली भाँति जानता हूँ कि आजकल राजधानी बहुत पीड़ित है । वहाँ शोणित-धारा बह रही है । देश जर्जरित हो रुदन कर रहा है । उसके कलेजे पर दिन दिन नए आघात पहुँचते हैं । शम्स के बाद सिंहासन का अधिकारी मैं हूँ । मेरा अधिकार स्थापित करने के लिये सहस्रों भुजाएँ उठेंगी । किंतु जब मैं राजा हो जाऊँगा और अत्याचारी के शीश को पद-

दलित करूँगा तब कौन जानता है कि दुःखिनी जननी इससे भी अधिक तापित न होगी, देश में इससे भी अधिक अनर्थ न होगा ।

जाफ़र—किसकी बात आप कहते हैं ?

फ़ीरोज़—अपनी ! नाना पापों के बीज जो मेरे हृदय-स्थल में आरोपित हैं, सुयोग पाकर वे सब विकसित हो जायँगे । मेरी तुलना में मसीमय वर्त्तमान राजा भी विमल बोध होगा; यह घोर अत्याचारी लालचीन निर्दोषी ज्ञात होने लगेगा ।

जाफ़र—घोर नारकी भी कोई ऐसा नहीं मिलेगा जिसका पाप-कर्म लालचीन से अधिक हो ।

फ़ीरोज़—मैं स्वीकार करता हूँ कि वह हत्याकारी, अर्थ-प्रिय, विलासी, वंचक, शठ, उग्र द्वेषपूर्ण सब कुछ है । किंतु इन पापों में वह कदापि मेरी समता नहीं कर सकता ।

जाफ़र—अति असंयम तथा घृणाजनक अत्याचार से कितने सिंहासन शून्य हो गए हैं, कितने राजाओं का पतन हो गया है; किंतु इस हेतु आप अपना उचित आसन ग्रहण करने में कुंठित क्यों होते हैं ? हम लोग शम्स के विरुद्ध नहीं हैं । किंतु जहाँ शम्स है वहीं लालचीन है । इसी से इतना बखेड़ा हो रहा है ।

फ़ीरोज़—किंतु राजा के योग्य गुण—यथा न्याय, सत्य, अक्रोधी स्वभाव, दृढ़ता, तितित्ता, दया, अमायिक भाव, देव-भक्ति, सहिष्णुता, साहस, स्थिरता—एक भी मुझमें नहीं है ।

वरन् मैं नाना दोषों से परिपूर्ण हूँ । यदि मुझमें शक्ति होती तो सद्भावरूपी मधुर क्षीर को नरक-कुंड में फेंक देता, देश में शांति का नाश कर अशांति स्थापित करता । राजधानी से एकता, संपत्ति एवं न्याय को मार भगाता ।

जाफ़र—हा जन्मभूमि, हा जननी ! अब तेरी आशा नहीं है । गुलाम से पददलित होती रह । अब तुझे सांत्वना देनेवाला योग्य एवं अधिकारी भूपाल नहीं मिलेगा ।

फीरोज़—मेरे जैसा आदमी क्या राजा होने योग्य है ?

जाफ़र—राजा होना तो दूर रहे, ऐसे आदमी का जीवन धारण करना भी अन्याय है । वह पृथिवी का भार बढ़ाने के अतिरिक्त और क्या कर सकता है ? हा ! अभागे देश ! दुराचारी अनधिकारी के कर में न जाने कब तक शोणिताक्त राजदंड रहेगा ! कितने दिनों के बाद वह सुदिन उदय होगा कि सुयोग्य अधिकारी तेरे राजसिंहासन पर आसीन हो ! हृदय ! तेरी सब आशा यहाँ आकर धूल में मिल गई ।

फीरोज़—क्षमा कीजिए, मेरे अंतर से आपके सत्यता-संभूत वाक्य ने संशय के मालिन्य को हटा दिया । मेरा संदेह आपके अकपट भाव से एकदम जाता रहा । अब मैं आप पर पूरा विश्वास करता हूँ । जो आप कहें, करने को मैं तैयार हूँ । दुष्ट लालचीन ने मुझे अपने मेल में लाने के लिये अनेक प्रकार के नाना प्रलोभन दिए थे, किंतु विवेक ने मुझे उन पर विश्वास करने नहीं दिया । खुदा जानता है, आपको फिर

ऐसा अवसर न मिलेगा कि मेरे मुँह से झूठी बातें सुनें । आप से मैं आपकी आज्ञा का अनुगामी हुआ । इससे पहले मैं जो कुछ कहा उसका मैं प्रतिवाद करता हूँ । जिन दोषों का अपने ऊपर आरोपण किया है उनका परिहार करता हूँ निश्चित जानिए । मेरी प्रकृति उन सभी से अपरिचित है सत्य के प्रति मेरी आसक्ति जीवन के प्रति आसक्ति से कम नहीं है । मेरी, मेरे गुणों की, मेरे स्वभाव बल बुद्धि की, मेरे सर्वस्व की अधिकारिणी मेरी जन्मभूमि है । अपने शरीर के रुधिर का एक एक बूँद उसके चरणों पर अर्पण करूँगा और जीते-जी लालचीन को दक्षिण भारत में न रहने दूँगा । गुलाम, अपरिचित, पराया, नीच, उसका यह मनसूबा, यह धृष्टता कि मेरे कुटुंब पर, जातिवालों पर, मेरे घर पर अपना प्रभुत्व रखे, उन्हें पददलित करे, मेरे संबंधियों को अपने हाथ में करे, मेरे पूर्वपुरुषों की कीर्ति का विध्वंस करे । आप समय पर आए । इधर सब तैयारी ठीक है । सहस्रों सिपाही हम लोगों के पक्ष में प्राण देने पर प्रस्तुत हैं । दो ही चार दिन में हम लोग यहाँ से यात्रा करते और राजधानी की ओर अग्रसर होते । अब आप कहिए, इस विषय में आप लोगों ने क्या सोच रखा है ! क्यों, चुप क्यों हैं ?

जाफ़र—प्रिय तथा अप्रिय संवाद को एक साथ सुनकर मैं अपने मन को स्थिर करने में असमर्थ हूँ । जान नहीं पड़ता क्या कहूँ । आप दूर से सुन रहे हैं । यदि पास जाकर देखते तो

आपका मन कदापि स्थिर न रहता । हम लोगों की राजधानी आज, दुःख तथा भय के कारण, अपने आपको पहचानने में असमर्थ है । अब वह हम लोगों की जननी नहीं कही जा सकती, क्योंकि उसने कबर का रूप धारण किया है—वह शमशान हो रही है । दीर्घ निःश्वास, आर्त्तनाद, रोदनध्वनि से वहाँ का पवन सदा भरा पूरा रहता है और किसी को ऐसा अवसर नहीं मिलता कि उसकी ओर ध्यान दे । सीमांत शोक ने नैमित्तिक भाव धारण किया है । यदि विश्वास न हो तो चलकर अपनी आँखों से देख लीजिए ।

फीरोज़—अब विलाप का समय नहीं है । उपाय सोचिए कि हम लोग किस प्रकार वहाँ के लोगों की रक्षा कर सकते हैं, उनका दुःख दूर कर सकते हैं ।

जाफ़र—ऐसा ही होगा ।

फीरोज़—यह तो कहिए, गयास कहाँ है ।

जाफ़र—लालचीन ने उसे सागर दुर्ग में कैद कर रखा है । उसकी आँखें निकाल ली गई हैं ।

फीरोज़—हाय हाय ! नीच ! नराधम ! कापुरुष ! दुष्ट ! अपने मालिक को चक्षुहीन करते उसके हाथ टूट नहीं गए, आँखें फूट नहीं गईं ?

जाफ़र—अधीर होने से तो काम नहीं चलेगा ।

फीरोज़—कहिए क्या करूँ । कौन जानता था कि घर आने पर यही सब देखना पड़ेगा ।

जाफ़र—जिस प्रकार हो, पहले सुलतान गयासउद्दीन को सागर दुर्ग से निकाला जाय । किंतु यह तो आप जानते हैं कि वह साधारण दुर्ग नहीं है ।

फ़ीरोज़—ठीक है । किंतु इस समय तो वहाँ कुल दो सौ सैनिक हैं ।

जाफ़र—पर उनको सुविधा बहुत है ।

फ़ीरोज़—इस विषय में कासिम खाँ से परामर्श किया जायगा ।

जाफ़र—अच्छा रात अधिक गई । आज आप विश्राम करें । कल सब ठीक किया जायगा ।

फ़ीरोज़—क्षमा कीजिएगा । उस ओर मेरा ध्यान नहीं गया । आप थके होंगे । आपको विश्राम करना नितांत आवश्यक है ।

जाफ़र—इसकी चिंता न कीजिए । जब तक लालचीन इस संसार में है, मुझे विश्राम नहीं मिल सकता ।

फ़ीरोज़—तब गढ़ की ओर चलें । क्या कहें, स्वप्न में भी नहीं समझता था कि शम्स इस प्रकार का निकलेगा । ओह !

“अब जहाँ से, देख लो, ईमानदारी उठ गई ।

उठ गई अब मुनसिफ़ी दुनिया से सारी उठ गई ॥

है बिरादर को बिरादर से दगा, यह हाल है ।

एक क़लम दुनिया से रस्मे-देस्तदारी उठ गई ॥”

सातवाँ परिच्छेद

कोई बात बहुत दिनों तक छिपी नहीं रह सकती । समय पाकर वह किसी प्रकार प्रकट हो ही जाती है । अतएव लालचीन को भी इस बात का संवाद मिल ही गया कि फ़ीरोज़ खाँ उसके सर्वनाश की चेष्टा में है और अनेक उमरा उससे मिलकर इसके मूलोच्छेद करने पर उद्यत हैं । बहुत सोच-विचार कर उसने चाहा कि शम्स से फ़ीरोज़ खाँ और उसके भाई के वध की आज्ञा ले और विद्रोह का अपराध लगाकर उन्हें सूली दे दे । जब बहुत तर्क-वितर्क करने पर भी शम्स राज़ी न हुआ तब लालचीन ने राजमाता से यह प्रस्ताव किया । पहले तो वह अपने निकट संबंधियों के खून से डरी; किंतु लालचीन के छलावे में आते उसे बहुत देर न लगी । लालचीन ने उससे कहा—जा होना था सो तो हो ही चुका । किंतु अब तो कुशल इसी में है कि विद्रोहाम्नि न प्रज्वलित हो; क्योंकि उसमें सुल्तान, आप तथा मैं सभी भस्मीभूत हो जायँगे । जहाँ तक अनुसंधान से ज्ञात हुआ है, लोगों का संदेह है कि यह सब उत्पात आप ही के किए हुए हैं । लोग कहते हैं कि शम्सउद्दीन पर आपका अधिक स्नेह है, इसी कारण मेरे साथ मिलकर आपने गयासउद्दीन को शम्सउद्दीन के रास्ते से हटा दिया है । अतएव सब

अनर्थों का मूल वे लोग आप ही को मानते हैं । अब आप विचारें कि यदि इन उमराओं से हम लोग निश्चित न हो जायँगे तो हम लोगों के जीवन की आशा नहीं है । बादशाह सलामत इस बात को नहीं समझते । न जाने उनके मन में क्या है । आप जानती हैं कि खाँ-बंधु राजवंश के हैं । अतएव प्रजावर्ग तथा अपर उमराओं पर उनका असीम प्रभाव है । सुल्तान अभी अल्प वयस् के हैं और वे लोग अपनी प्रौढ़ बुद्धि का लाभ उठाना चाहते हैं । मुझे यह भय है कि वे उन लोगों की बात में आ जायँगे । इसमें इनकी बड़ी हानि होगी । यदि खुले मैदान न हो तो गुप्त रीति से उनका दमन करना होगा । जब तक खाँ-बंधु जीवित रहेंगे, हम लोग सुखपूर्वक सो नहीं सकते ।

राजमाता—बेटा, तू ठीक कहता है । मैं अभी शम्स को बुलाती हूँ । तू जा; तेरे सामने अपना मनोगत भाव प्रकट करने में वह संकोच करेगा ।

लालचीन सानंद मन वहाँ से चला गया । उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि उसका काम अब ठीक हो गया । राजमाता की आज्ञा से शम्स ने अंतःपुर में पदार्पण किया । माता के पास आ सादर प्रणाम कर उसने पूछा — क्या आज्ञा है ?

राजमाता—जो बात अपनी समझ में नहीं आती उसे दूसरों से पूछ लेना उचित नहीं है क्या ?

शम्स—क्यों नहीं ?

राजमाता—लालचीन का परामर्श तू क्यों नहीं मानता ?

शम्स—हाँ माता, तू मेरी दशा अनुभूत नहीं करती । राज्य से दुःख छोड़ मुझे सुख नहीं है । सिंहासन मेरे लिये कुसुम का आसन नहीं है वरन् कंटक का । यहाँ आसीन होकर मुझे स्वजनों का वियोग हुआ । जिसके लिये मेरे प्राण आज भी व्याकुल हो रहे हैं वह मुझसे दूर हुई ।

राजमाता—तू उस चुड़ैल के लिये क्यों व्याकुल है ? अब तू राजा हुआ, सुयोग्य पात्री के संग तेरा विवाह होगा । राज्यकार्य में मन दे, उसे भूल जा । यह तेरा भ्रम है कि राजसिंहासन को तू कंटकपूर्ण समझता है ।

शम्स—यह बात सत्य है कि लालचीन ने मुझे राजपद दिया । किंतु राजा होने के लिये मैं लालायित नहीं था । मेरे जीवन का लक्ष्य सदा सुख शांति था । किंतु इस पद पर पहुँचकर मुझे उससे वंचित होना पड़ा । सहस्रों कार्य्य मुझे अपनी इच्छा के विरुद्ध करने पड़ते हैं ।

राजमाता—लालचीन की कृपा से तुझे राज्य मिला है, इसे तू भी मानता है । उपकार के लिये कृतज्ञता प्रकाश करना मनुष्य का धर्म है । अपने उपकार के प्रतिफल की आशा तुझसे वह अवश्य करेगा । तेरे हितैषी के विरुद्ध कितनी बातें कह, उस पर मिथ्या दोषारोपण कर, स्वार्थी तेरे कान भरेंगे । अतएव तुझे सावधान रहना चाहिए । जो अपने उप-

कारी का अनिष्ट करता है वह कभी सुखी नहीं होता । यदि तू अपने राज्य को सुरक्षित रखना चाहता है तो लालचीन के परामर्श को मान । जिसने तुझे राजपद दिया वही तुझे उस पर दृढ़ रख सकता है । मैंने सुना है कि देश में विद्रोह का चिह्न दिखाई पड़ता है और तू उस ओर भ्रूत्तेप भी नहीं करता ।

शम्स—आप क्योंकर जानती हैं ?

राजमाता—लालचीन के सिवा किसकी ऐसी बुद्धि है जो इन बातों का पता पावे ?

शम्स—क्या लालचीन ने आपसे यह भी कहा है कि लोग मेरे शासन से असंतुष्ट क्यों हैं ?

राजमाता—नहीं ।

शम्स—यह पूछना चाहिए था । अच्छा मैं आपसे कहता हूँ । जैसा आज है वैसा अनेक दिनों तक नहीं चल सकता । इसका कुछ उपाय अभी करना होगा । यदि मैं यह जानता तो राज-मुकुट धारण करना कभी स्वीकार न करता । मैं नाम का राजा हूँ । किंतु शासनदंड यथार्थ में लालचीन ही के हाथ में है । वह जैसा चाहता है, करता है । कोई उसका हाथ नहीं रोकता और पापपुंज मेरे शीश पर चढ़ता है । इससे कहीं अच्छा है कि राजमुकुट को उतारकर उसके चरणों पर रख दूँ । आज से वही राजा रहे, इस देश से मेरा कोई संबंध न रहे ।

राजमाता—इसका निपटेरा पीछे कर लिया जायगा । इस समय तू लालचीन को आज्ञा दे कि जिस प्रकार संभव हो, वह फ़ीरोज़खाँ और उसके भाई का दमन करे । जब तक वे स्वच्छंद हैं, हम लोग निश्चित नहीं रह सकते ।

शम्स—उन लोगों ने क्या किया है ?

राजमाता—वे लोग तुमको राज्यच्युत करना चाहते हैं, और ऐसा हो जाने पर फिर तुम्हारी वा हमारी किसी की जान नहीं बचेगी । कौन कह सकता है कि एक बार विद्रोहाम्नि प्रज्वलित हो जाने पर क्या होगा ।

शम्स—यदि उनके दमन की आज्ञा दूँ तो क्या विद्रोह न भड़केगा ?

राजमाता—समरभूमि में उन्हें उचित शिक्षा दी जायगी । यह बात प्रत्यक्ष है कि गयास के नाम पर वे तेरे साथ अन्याय करना चाहते हैं । लालचीन की असाधारण बुद्धि देखकर द्वेषाम्नि से उनका हृदय दग्ध हो रहा है । अतएव वे चाहते हैं कि वह तेरे पास से हट जाय और तब वे तेरा सर्वनाश कर देंगे । * अतएव बुद्धिमानी का काम यही है कि उनका दमन किया जाय ।

शम्स—क्या हम लोगों के पास सामान काफी है ?

राजमाता—सेना तुम्हारे हाथ में है । लालचीन ने सैनिकों को संतुष्ट रखा है । प्राणपण से सेना तुम्हारी सहायता करेगी । इसके अतिरिक्त उमरा भी तुमसे अलग नहीं हो सकते । हाँ,

दो चार कापुरुष एवं नीच उस ओर हो सकते हैं। परंतु उनके किए क्या होगा ? विचार कर देखो तो दूसरा कोई उपाय भी तो नहीं है। जब तक दृढ़तापूर्वक तुम इन लोगों का सामना न करोगे, ये लोग पीछा न छोड़ेंगे।

शम्स—आप जो कहें कितु मैं किसी पर भरोसा नहीं करता। इतने दिनों में मुझे पूरा अनुभव हो गया है कि भूपाल का कोई मित्र नहीं होता। लोग अधिकार का लोहा मानते हैं, राजा का नहीं। जो गयासउद्दीन के हितैषी और मित्र बने रहते थे वे आज मेरे हितैषी और मित्र बने हुए हैं। अपने हितसाधन ही के लिये लोग नरेशों का मुँह जोहा करते हैं।

राजमाता—तब तू क्या चाहता है ?

शम्स—युद्ध से संधि कहीं अच्छी है। इन लोगों को मेल में लाकर संतुष्ट रखने का यत्न किया जाय।

राजमाता—मैं नहीं समझती थी कि तू ऐसा निर्बुद्धि है। इसमें तेरा कल्याण नहीं है।

शम्स—तब आप जो कहिए। मैं तो भली भाँति जान गया हूँ कि इस जीवन में मुझे अब सुख नहीं है। बाहर के लोग जानते हैं कि राजा होने में बहुत सुख है। किंतु यथार्थ बात तो यह है कि संसार में राजा से बढ़कर दुखी कोई नहीं होता। प्रथा के साथ कुव्यवहार कर्मचारी करते हैं और उसका दोष राजा के शीश पर आरोपण किया जाता है। अब

मैं हार गया । अब सब चिंता छोड़कर जो आप कहेंगी वही करूँगा । जो परिणाम होगा, देखा जायगा ।

राजमाता—बेटा, तू इतना क्यों घबड़ाता है ? जब तक लालचीन तेरे पक्ष में है, तेरा कुछ अनिष्ट नहीं होगा ।

शम्स—सब ठीक है । कहिए मुझे क्या करना होगा ।

राजमाता—मेरा अनुरोध है कि तू संधि न कर; और जो काम हो, लालचीन के परामर्श से कर ।

शम्स—अच्छा यही सही । और कुछ नहीं तो कम से कम यह संतोष तो रहेगा कि मैंने माता की आज्ञा पालन की । आशीर्वाद दीजिए, अब मैं जाता हूँ ।

राजमाता—खुदा तुझे विजय दे ।

आठवाँ परिच्छेद

सागर दुर्ग की सुदृढ़ चौड़ी छत पर घूमता हुआ शेर अफगन प्रभातसमीर का सेवन कर रहा था। अभी तक दुर्ग के सब लोग जागे नहीं थे। पूर्व दिशा में कुछ लालिमा दौड़ आई थी किंतु अभी तक सूर्योदय नहीं हुआ था। वन में सुगंध-सनी मंद मंद वायु बह रही थी। सामने के मैदान में हरित दूब की शय्या पर मृगछाँने उछल कूद रहे थे। बनैली गाएँ भी इधर उधर कोमल हरे तृण चर रही थीं। वन-पक्षियों का मधुर सुखद रव सामने के वन से सुनाई दे रहा था। प्रकृति देवी की यह अलौकिक अनिर्वचनीय शोभा देखता हुआ शेर अफगन आत्मविस्मृत हो गया।

इधर गयासउद्दीन के दुःख से शेर कुछ अधिक दुखी हो गया था। अभी तक उसे कोई उपाय न सूझा कि क्योंकि उसकी सहायता करता। नित्य प्रति वह गयास का भोजन लेकर जाता था। किंतु उसमें अब यह साहस नहीं रहा कि उससे कुछ बातें करे। क्योंकि “आपने मेरे लिये क्या किया” इस प्रश्न का अभी तक उसके पास कोई उत्तर न था। एक दो बार ऐसा हुआ कि “कौन है” पूछने पर भी उसने कुछ जवाब नहीं दिया। इधर लालचीन के आदेशानुसार दुर्गेश

की अधिक दृष्टि गयास पर रहती थी और दिन में एक दो बार वह स्वयं जाकर उसे देख आता था । अतएव गयास अपने जीवन से एक प्रकार से निराश ही हो गया था ।

हठात् शेर अफगन की दृष्टि वन के अंचल की ओर पड़ी । उसने देखा कि वहाँ फ़कीर खड़े खड़े उसकी ओर देख रहे हैं । चार आँखें होते ही फ़कीर ने अफगन को बुलाया । इशारा पाकर वह तेज़ी से छत से उतर गया और क़िले के गुप्त द्वार से मैदान में पहुँचकर उसने महात्मा को सादर प्रणाम किया । फ़कीर ने पूछा—क्या ख़बर है ?

शेर—सब आपकी कृपा है ।

फ़कीर—तुम्हारा कैदी कैसा है ?

शेर—कोई नई बात तो नहीं है ।

फ़कीर—उसके छुड़ाने का कोई उपाय तुमने किया ?

शेर—अभी तक तो नहीं । आपकी सहायता बिना यह काम होने का नहीं ।

फ़कीर—मुझे इस भंभट में क्यों डालते हो ? तुम स्वयं कोई प्रबंध क्यों नहीं करते ?

शेर—यदि मुझसे होने को रहता तो आपको कष्ट क्यों देता ?

फ़कीर—कुछ जानते हो, राजधानी में क्या हो रहा है ?

शेर—सुनता हूँ कि लोग वर्तमान शासन-प्रणाली से संतुष्ट नहीं हैं । प्रजा को बड़ा कष्ट हो रहा है । शम्सउद्दीन स्वयं

कुछ देखते सुनते नहीं । लालचीन के जी में जो आता है, किया करता है ।

फ़कीर—मानसिक दुर्बलता मनुष्य में एक प्रबल दोष है । अपने को जो दूसरे के हाथ का खेलौना बनाकर रखता है वह कभी सुखी नहीं रह सकता । राज्य के अपर प्रांतों में क्या हो रहा है, इसका कुछ हाल जानते हो ?

शेर—जी नहीं, राजधानी से प्रायः लोग यहाँ आया करते हैं इसी से इतना भी कह सका । यहाँ से मैं कहीं जाता नहीं, क्योंकि कहूँ कि कहाँ क्या हो रहा है ।

फ़कीर—तुम बीजापुर के गढ़ में जा सकते हो ?

शेर—क्यों नहीं ? आप जहाँ आज्ञा देंगे वही जाऊँगा ।

फ़कीर—फ़ीरोज़ खाँ और कासिम खाँ को जानते हो ?
उनसे तुम्हारा परिचय है ?

शेर—परिचय तो नहीं है, किंतु जानता हूँ ।

फ़कीर—इस काम में तुम्हें उन लोगों से सहायता मिलेगी । बात तो यह है कि गयासउद्दीन यहाँ से आज ही बाहर निकाल दिया जायगा । किंतु जब तक वह उन लोगों के पास नहीं पहुँचेगा तब तक पूर्ण रूप से सुरक्षित नहीं हो सकता । इसके अतिरिक्त इस काम में अभी बहुत कुछ अड़चन है । लालचीन के पापों का बोझ अभी इतना नहीं बढ़ा है कि वह उससे कुचल सके । पाप का वृत्त बड़ा सुंदर है, किंतु उसका

फल विषम विषमय एवं दुःखद है। विटप पर विज्ञमुग्ध नहीं होते। फल की ओर ध्यान देकर वे इसके निकट भूलकर भी नहीं जाते। विषधर भुजंग देखने में बड़ा सुंदर है किंतु उसका दंशन प्राणघातक है। “या रव ! अब कब तक !” क्यों, क्या सोच रहे हो ? कुछ काम करना चाहते हो तो कहो। नहीं तो चलो अपनी राह लो।

शेर—सब करने पर बद्धपरिकर हूँ। इस उद्योग में यदि प्राण भी जायँ तो पीछे हटनेवाला नहीं हूँ।

फकीर—दुर्गेश का तुम पर कुछ संदेह तो नहीं है ?

शेर—मेरे जानते तो नहीं है। पर मन की बात कैसे कहूँ ?

फकीर—आज गयास को मेरी कुटी में पहुँचाकर तुम बीजापुर जाओ, इसके बाद जैसा होगा देखा जायगा। तुमसे एक और भेद की बात कहता हूँ। लालचीन के एक पुत्री है। वह इस समय बहुत विपन्ना है, उसकी भी रक्षा करनी होगी।

शेर—लालचीन की सहायता मैं क्यों करूँगा ? वह बड़ा भारी दुष्ट है।

फकीर—किंतु लालचीन की लड़की लालचीन नहीं है। वह दुष्ट उसे बहुत सता रहा है। दो चार दिनों में वह उसे भी यहीं कैद करके भेजेगा। उसके भी बचाने का भार तुम्हारे ऊपर है।

शेर—महाराज, आप क्या कह रहे हैं ? दाता ! यह तो विचारिए कि गयासउद्दीन को क़िले से बाहर निकालने के बाद मैं फिर क्योंकर यहाँ आ सकूँगा ? यह संवाद पाकर क्या दुर्गेश मेरे प्राण छोड़ेगा ?

फ़कीर—उसे क्योंकर पता लगेगा कि तुमने यह काम किया है ?

शेर—मेरे सिवा कोई गयास के पास नहीं जाता और एक बार उसे बाहर निकालने के पश्चात् मैं क्योंकर दुर्ग में जाऊँगा ?

फ़कीर—इसकी चिंता न करो । सब ठीक हो जायगा । तुम मुझे वचन दो कि लालचीन की लड़की की मदद करोगे ।

शेर—मैं आपकी आज्ञा के बाहर नहीं हूँ ।

फ़कीर—जहाँ गयास रहता है वहाँ एक सुगंग है जो वन में निकलती है । इसका भेद दुर्गेश भी नहीं जानता । उसे किसी ने बताया नहीं । मैं जामता हूँ और तुम्हें बधा देता हूँ । इसी के द्वारा गयास को तुम वन में पहुँचा देना, वहाँ मैं रहूँगा और उसे साथ ले अपनी कुटी पर चला जाऊँगा । फिर उसी राह से दुर्ग में जाकर तुम अपने काम में लग जाना । किंतु एक दो दिन के भीतर किसी प्रकार बीजापुर जाकर फ़ीरोज़ से मिल आना । उससे तुम मेरा नाम लेना और

कहना कि समय आ गया है । गयास का पूरा वृत्तांत तुम उन लोगों से कह देना ।

शेर—इसमें तो कुछ अड़चन नहीं दीख पड़ती । किंतु कारागृह से वन में जाने में कितना समय लगेगा ?

फ़कीर—प्रायः पौन घड़ी ।

शेर—तब कुछ परवाह नहीं है । आप मुझे भेद बतलाइए । कहिए क्या करना होगा ।

फ़कीर—जिस घर में गयास कैद है उसकी दक्षिण भित्ति से लगे हुए लाल पत्थर की कई चौकठें फ़र्श में जड़ी हुई हैं । पूर्व ओर से गिनने पर जो सातवीं चौकठ है वह खटके पर खुलती है । बहुत दिन से वह काम में नहीं लाई गई है । अतएव खुलने में कुछ कठिनाई होगी, घबड़ाना मत । आगे जैसा है, तुम आप ही देख लोगे ।

शेर—दाता ! ऐसा ही होगा ।

फ़कीर—अच्छा, तो अब मैं चला ।

“या रब ! अब कब तक” कहते हुए फ़कीर वहाँ से चले गए ।

शेर अफगन कुछ देर तक वहीं खड़ा खड़ा वन की शोभा देखता रहा । ग्रीष्म रवि का प्रकाश जब कुछ अधिक हुआ और ताप बढ़ा तो वह दुर्ग में लौट आया ।

दोपहर के समय शेर अफगन नियमानुसार गयासउद्दीन को भोजन देने चला । पहले उसे दुर्गेश के कमरे में जाना

पड़ा। वह कुछ कागज़ पत्र देख रहा था। शेर अफगन को आते देख उसने सुरंग का कपाट खोल दिया। अफगन भीतर सुरंग में प्रवेश कर गया। आज उसका कलेजा धड़क रहा था, हाथ काँपता था। गयास के पास पहुँचकर उसने चारों ओर देखा। उसकी नज़र लाल पत्थर की चौकठों पर पड़ी। उसे उखाड़ने की वह चेष्टा करने लगा। बहुत देर तक पत्थर अपनी जगह से न हटा। किंतु अंत में अफगन का परिश्रम सफल हुआ और नीचे जाने की छोटी छोटी सीढ़ियाँ दिखाई देने लगीं। शेर अफगन के आनंद की सीमा न रही और गयास से उसने कहा—उठिए, शीघ्र उठिए, देर न कीजिए और जब तक किसी निश्चित स्थान पर न पहुँच जाइएगा, किसी से कुछ नहीं पूछिएगा।

गयास—मैं क्योंकर चलूँ, कुछ तो दिखाई नहीं देता।

शेर—इसकी चिंता न कीजिए। मेरा यह हाथ धर लीजिए। सीढ़ियों से उतरना होगा। सावधानी से पैर धरिएगा। खुदा चाहे तो आज आप कैदखाने से बाहर हो जायँगे।

गयास—हाय ! अपने साथ उपकार करनेवाले को मैं पहचानता तक नहीं। क्योंकर आपको धन्यवाद दूँ और आगे क्योंकर दूँगा, इसका भी उपाय नहीं है।

शेर—इसकी परवाह न कीजिए। आप कुछ बेलिए मत, चूपके से मेरे साथ साथ हाथ धरे चले आइए। गयास ने

शेर अफगन का हाथ पकड़ा । दोनों सीढ़ियों से नीचे उतरने लगे । प्रायः पच्चीस सीढ़ियाँ उतरने के बाद समतल पथरीली भूमि मिली । दोनों सीधा चलते गए । बहुत दूर जाने पर ऊपर चढ़ने की सीढ़ियाँ मिलीं जिन पर चढ़ने के बाद दोनों वन में निकल आए । बाहर जाकर शेर अफगन ने देखा कि पत्थरों के ढोंके इधर उधर हटाए हुए हैं और वह स्थान एक सघन निकुंज है । सामने फ़कीर को देखकर शेर अफगन कुछ बोलना चाहता था किंतु फ़कीर ने बीच ही में कहा— यहाँ न ठहरो, शीघ्र भीतर चले जाओ । चौकठ को सावधानी से बैठा देना जिसमें उसका पता किसी को न लगे । मैं इनको अपने साथ ले जाता हूँ । बीजापुर के गढ़ से लौट आने पर मुझसे मिलना । तब तक ये मेरे यहाँ रहेंगे, इन्हें कोई भय नहीं है । क्या तुम्हारे मन में संदेह होता है कि मेरे यहाँ बहुत लोग आया करते हैं; कोई इन्हें देख लेगा ? सो नहीं हो सकता । वन में अनेक स्थान ऐसे हैं जहाँ मनुष्य वर्षों तक रह सकता है और कोई उसका पता भी नहीं पा सकता । इसकी चिंता छोड़ो । शीघ्र यहाँ से चले जाओ । सावधान रहना, अपने मनोगत भावों को किसी पर प्रकट होने न देना । तुम्हारे आनन से विविध भाव झलक रहे हैं । उन्हें छिपाने की चेष्टा करो । एक मुहूर्त्त भी न ठहरो, अभी जाओ ।

बिना कुछ कहे शेर अफगन वहाँ से चला गया और कारागृह में आ पत्थर की चौकठ को ठीक कर सुरंग की राह

ऊपर आया । भाग्यवश दुर्गेश उस समय कुछ लिख रहे थे । इसकी ओर उन्होंने नहीं देखा । इस घटना का प्रभाव शेर अफगन के हृदय पर बहुत पड़ा । उसका मन अस्थिर हो गया था अतएव अपने को सम्हालने के लिये अपने कमरे में जाकर वह चुपचाप चारपाई पर पड़ गया ।

उधर गयास को लेकर शाह साहब एक घोर वन में गए । रास्ते में कुछ बातचीत न हुई । वन के बीच एक भ्रम अट्टालिका थी; उसमें कई कोठरियाँ अभी निवास योग्य थीं । एक में ले जाकर फ़कीर ने गयास को रक्खा । वहाँ खाने पीने का सब सामान पहले से ठीक था । स्वच्छ स्वतंत्र वायु लगने से गयास का दुःखित मन किञ्चित् विकसित हो गया । फ़कीर ने कहा—“यहाँ तुम डरना मत । तुम्हारा पता किसी को न लगेगा । लालचीन अब तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकता । यहाँ आवश्यक सभी पदार्थ तुम्हें मिलेंगे । गंदी जगह में रहने से तुम्हारा शरीर खराब हो गया है । तुम्हें जल देता हूँ, पहले स्नान कर लो फिर खाने पीने का प्रबंध किया जायगा ।” गयास गद्गद स्वर से बोला—आज क्या भाग्य इतना मेरे अनुकूल है ? क्या खुदा ने मेरे अपराध को क्षमा किया ? क्या मेरे दुःख के दिन बीत गए ? किंतु क्या मैं यह नहीं जान सकता कि कौन मेरे साथ उपकार कर रहा है ? मैं किस महानुभाव के सामने इस समय खड़ा हूँ ?

फकीर—क्यों नहीं ? किंतु पहले खा पीकर निश्चित तो हो जाओ । निदान ऐसा ही हुआ । फकीर ने नहला धुला खिला पिलाकर गयास को निश्चित बैठाया, और आप भी उसके सामने बैठकर कहा—“यारब ! अब कब तक ।” गयास फकीर की बात समझ न सका । किंतु उसे पूछने का साहस नहीं हुआ । कुछ देर के बाद फकीर ने कहा—आप मुझे नहीं पहचानते । किंतु दक्षिण भारत के प्रभावशाली सम्राट् को मैं भली भाँति पहचानता हूँ ।

गयास—इसका एक विशेष कारण यह भी है कि मुझे आँखें नहीं हैं । अतएव मैं आपको देख नहीं सकता । किंतु आप मुझे अवश्य देख रहे हैं । जब आप इतना जानते हैं तब यह भी अवश्य जानते होंगे कि मैं अंधा क्योंकर हुआ ।

फकीर—क्यों नहीं । किंतु उसकी अब आप चिंता न करें । जो होना था सो हो गया । जो चला गया वह लौटकर आने-वाला नहीं है । तब विलाप का क्या फल है ? चिंता करने से क्या लाभ होगा ? खुदा जो करता है, हम लोगों के भले ही के लिये करता है । हम लोग अल्पज्ञ हैं, इसी से घबड़ा जाते हैं । इस संसार में सुखी वही है जो खुदा से डरता है और सदा उसे याद रखता है । जब तक दुनिया के पीछे मनुष्य दौड़ा करता है, दुनिया उससे भागती फिरती है । तुमने कुछ बड़ा कसूर किया था इसी के बदले यह दंड मिला । मेरे खयाल में हिंदुओं ने अपने शास्त्रों में कर्मफल का विचित्र विज्ञान दिया

है। इसके द्वारा सृष्टि के बहुत से भेद सहज ही समझ में आ जाते हैं। सृष्टि में जो अन्याय, निर्दयता, भूल स्पष्टतः दीख पड़ती है उसके तत्त्व को मनुष्य स्वभावतः सहज में समझ लेता है। मनुष्य में मानसिक बल आता है, वह हर अवस्था में संतुष्ट रहता है, कभी अपने नियंता पर क्रुद्ध नहीं होता। उसका मन चंचल नहीं होता।

गयास—यह ठीक है कि मैं आपको पहचानता नहीं किंतु जब आप दया करके मेरा इतना उपकार कर रहे हैं तब मेरे एक दो प्रश्नों का उत्तर देने की अवश्य कृपा करेंगे।

फ़कीर—क्यों नहीं। यदि मेरी बातों से तुम्हें इस दुःख के सहन करने में कुछ सहायता मिले तो निश्चय जो तुम पूछो मैं कहने पर तैयार हूँ।

गयास—एक मुँह से मैं आपको कितना धन्यवाद दूँ। नहीं कह सकता कि आज मेरे सौभाग्य का सितारा किधर उदय हुआ था। आपके पास आने ही से—आपके कर-स्पर्श ही से—मेरा सब दुःख दूर हो गया। कहाँ तक कहूँ, यदि सारी ज़िंदगी मैं आपके पास रहूँ तो स्वप्न में भी राज्य-सुख स्मरण न हो।

फ़कीर—या रब, अब कब तक।

गयास—हिंदू कर्मफल किसे कहते हैं ?

फ़कीर—उनकी धारणा है कि कर्मानुसार हम लोग जन्म धारण करते हैं। जो जैसा काम करता है वह वैसा फल

पाता है। अच्छे कर्म का फल अच्छा और बुरे का बुरा मिलता है। जब तक हम लोग इस कर्म के संपर्क में रहते हैं, हम लोगों को संसार में विविध रूप धारण कर आना-जाना पड़ता है। उनका सिद्धांत है कि जीव अमर है, बार बार शरीर धारण करता है और बार बार उसका परित्याग करता है। एक जन्म में जैसा कर्म करता है, दूसरे जन्म में उसी के अनुकूल फल भोगता है। इसी तत्त्व को हृदयंगम करने के कारण हिंदू जाति के लोग इतने निश्चित रहते हैं, उनमें इतना संतोष पाया जाता है।

गयास—इससे छुटकारा क्योंकर मिलता है, इस विषय में लोगों ने कुछ कहा है ?

फकीर—क्यों ? यही तो हिंदुओं का सबसे गूढ़ तत्त्व है। इसी के सहारे हिंदुओं के धर्म में इतना बखेड़ा और व्यर्थ की तथा निर्मूल बातें होने पर भी संसार में उनकी स्थिति है और जब तक सृष्टि रहेगी, उनकी स्थिति रहेगी। दूसरे किसी धर्म में इसका पता नहीं है।

गयास—वह क्या है ?

फकीर—ये लोग इसे कर्म-फल-त्याग कहते हैं, जिसका अर्थ यह है कि कर्तव्य समझकर मनुष्य को काम करना चाहिए, उसके परिणाम की ओर ध्यान देना उचित नहीं। काम के बनने वा बिगड़ने से सुखी अथवा दुखी होना व्यर्थ है। जब तक मनुष्य परिणाम की ओर देखता है, जब तक वह

यह समझता है कि काम उसके किए अच्छा वा बुरा होता है, तब तक वह फलाफल के बंधन में रहकर कर्मफल भोगा करता है। इसी से कहा जाता है कि अपना कर्त्ता मनुष्य आप ही है किंतु जभी उच्च ज्ञान प्राप्त कर अपने को निमित्त कारण मानकर और यह समझकर काम करता है कि जगत्कर्त्ता जो कराता है मैं करता हूँ, काम उसका है, मैं उसका हूँ, परिणाम उसकी सृष्टि के प्रबंध में सहायक है, वह जीवन्मुक्त होकर पाप पुण्य से परे हो जाता है, आवागमन से रहित हो जाता है, अपने को पहचान लेता है, अपने बनानेवाले को जान जाता है और सृष्टि के अपर जीवों को जान लेता है। फिर संसार में उसे दुःख सुख नहीं होता, वह किसी की निंदा स्तुति नहीं करता, किसी से वैर विरोध नहीं रखता, सबसे सम प्रेम का व्यवहार करता है, अपने को सृष्टि का—प्रकृति का—एक अंग मानता है।

गयास—धन्य, धन्य ! आज मैं कृतकृत्य हो गया। आँखें देखतीं नहीं तो भी मैं समझ गया कि किसी कामिल (सिद्ध पुरुष) के सम्मुख बैठा हूँ। आज मेरा भ्रम दूर हुआ। मन में बल आया। दुःख सहन करने की शक्ति आई। राजपाट तो छूट ही गया, मैं अंधा हो ही गया; अब क्या है। दाता ! मुझे अपने पास रखें।

फकीर—सब काम समय पर होता है। अभी अवसर नहीं आया है। तुम जानते नहीं हो, तुम्हारी प्रजा इस समय बहुत

दुखी है। लालचीन उसे बहुत पीड़ा दे रहा है। नाम के लिये उसने शम्स को धोखा देकर, उसकी इच्छा के विरुद्ध, सिंहासन पर बिठाया है; किंतु सब काम आप ही करता है। शम्स के मना करने पर भी वह नहीं मानता। अपनी दुर्बलता के कारण शम्स बिल्कुल उसके हाथ का पुतला हो रहा है। उस दुष्ट को समुचित दंड देना तुम्हारा कर्तव्य है, अपने लिये नहीं वरन् अपनी प्रजा के लिये। जब तक वह जीवित है देश में सुख शांति रह नहीं सकती। तुम्हारे पक्ष में लोग युद्ध करना चाहते हैं। तुम्हारे न रहने से लोग उत्साहभंग हो जायँगे। इस विषय में अभी इतना ही जानना यथेष्ट है। समय पर और सब बातें भी जान लोगे।

गयास—जब आप इतना जानते हैं तब सब कुछ जानते हैं। मुझे कृपा कर यह बतला दीजिए कि मेरी इस दुर्गति में शम्स सहायक था वा नहीं।

फ़कीर—कभी नहीं। इस विषय में वह कुछ नहीं जानता था और यथार्थ बात अभी तक नहीं जानता है।

गयास—आपकी कृपा से मेरे हृदय से आज एक भारी बोझ टल गया। भाई ! व्यर्थ ही मन ही मन मैं तुम पर इतना दोषारोपण करता था। क्षमा करना।

फ़कीर—किंतु यह भी निश्चय है कि राजदंड धारण करने के योग्य वह कदापि नहीं है। जिस प्रकार हो उसे सिंहासन-च्युत करना आवश्यक है। अच्छा, अब तो मैं दूसरी जगह

जाऊँगा । दिन रात में दो चार बार आकर तुमसे मिल जाया करूँगा । यहाँ कोई भय नहीं है, कोई यहाँ आ नहीं सकता, तुम निश्चित रहना । सब आवश्यक वस्तुएँ तुम्हें यहाँ प्रस्तुत मिलेंगी ।

गयास—जो आज्ञा ! जब आपकी इतनी कृपा है तब मुझे कोई चिंता नहीं है ।

“या रब ! अब कब तक” कहते हुए फ़कीर ने वहाँ से प्रस्थान किया । अकेले में गयास अपनी अवस्था पर आलोचना करते करते निद्रित हो गया ।

नवाँ परिच्छेद

सांसारिक सुख समृद्धि सुलभ होने पर भी लालचीन को शांति न मिली। उसकी अभिलाषा थी कि अपने वंशज को राजसिंहासन पर देखे। लालचीन के पुत्र नहीं था। उसके एक कन्या मात्र थी। वह चाहता था कि किसी प्रकार शम्सउद्दीन के साथ उसका विवाह हो जाय। शम्स को उससे विवाह करने की प्रबल वासना थी। किंतु लुत्फुन्निसा राज़ी नहीं हुई। अपनी मनोरथबेलि पर पाला पड़ते देख लालचीन के हृदय में प्रबल क्रोध धधक उठा। उधर शम्स हताश हो गया। उसका जीवन दुःखमय प्रतीत होने लगा। झुँझलाकर आज शम्स ने कहा कि जब प्रेम की तृप्ति न हुई तब राज्य भोगकर ही क्या हुआ। लालचीन को चोट लगी। उसने मन में संकल्प किया कि जिस प्रकार होगा, आज लुत्फुन्निसा का हठ छुड़ाना ही होगा।

तीसरे पहर अपने अंतःपुर में जाकर उसने अपनी भार्या से पूछा कि लुत्फुन्निसा क्या कहती है, अभी तक वह राज़ी हुई वा नहीं।

कुल—मुझसे वह राज़ी नहीं हो सकती। न तो वह मेरा कहना मानती है और न कभी मानेगी ही। उसके हठ का ठिकाना नहीं है। मैं ठीक जानती हूँ कि उसके माथे पर म्लेच्छ

सवार है, तभी तो वह अपने हित की बात नहीं सुनती। यदि वह होश में होती तो क्या आज वह राजराजेश्वरी न होती ! कितना कहा, कितना धमकाया, कितना समझाया बुझाया, लोभ दिया, भय दिखाया; किंतु वह एक भी नहीं सुनती।

लाल—तब क्या करूँ ? मेरा इतना किया व्यर्थ हुआ चाहता है। यदि इसे गद्दी पर न बैठा सका, यदि इसे राज-राजेश्वरी न कहला सका, यदि उमराओं की बेगमों से इसका पैर न चुमवा सका तो क्या किया ? जो लोग गुलाम कहकर मेरा तिरस्कार करते थे उनसे बदला लेने का एक यही उपाय था। जब यही नहीं हुआ तब इतना क्यों किया ! यदि शम्स राजी न होता तो उसका कुछ उपाय सोचता। इसका उपाय क्या है ? मैं नहीं समझता था कि अपने ही हाथ से मुझे अपनी जड़ काटनी पड़ेगी। क्या तुमने इसका कोई उपाय सोचा है ?

कुल—उसके सामने मेरी बुद्धि काम नहीं करती। बात यह है कि प्रेम कर्तव्य को परास्त कर देता है। यदि कड़ेपन का व्यवहार किया जाय, यदि दंड का प्रयोग किया जाय, तो अभी उसका मन ठिकाने आ जाय। अब मेरा जी बहुत घबड़ा गया। जब उसका हठ याद आता है, देह में आग लग जाती है।

लाल—आज इसका कुछ निपटेरा करना ही पड़ेगा। असमंजस में कब तक रहा जायगा ? इसी चिंता में मैं और

बहुत से कामों को भूल रहा हूँ । तुम जानती हो कि खाँ-बंधु देश में विद्रोह फैला रहे हैं । उनका दमन करना है । इतना होने पर भी शम्स पर मेरा पूरा प्रभुत्व नहीं है । हो सकता है कि खाँ-बंधुओं के साथ मिलकर वह मुझे रसातल को भेज दे । किंतु यदि उसे लुत्फुन्निसा मिल जाय, यदि वह शम्स को अपने पंजे में कर ले तो फिर कुछ चिंता न रहे— सब बखेड़ा मिट जाय ।

कुल—किंतु यह अरण्य-रोदन सुनता कौन है ? जिसके लिये यह सब किया जा रहा है वही जब राज़ी नहीं होती, तब क्या किया जायगा ।

लाल—तुम उसे बुलाओ । यदि आज वह मेरा कहा न मानेगी तो अभी सागर दुर्ग में उसे कैद कर दूँगा । कुछ दिन जब कारावास करेगी, उसका मन ठीक हो जायगा— हठ छूट जायगा ।

कुलसुम की आज्ञा से लुत्फुन्निसा बुलाई गई । उसका आनन कांतिरहित था । नयन-कोरक धँस गए थे । मुखड़े पर लाँवण्य नहीं था । पहले की माधुरी न जाने कहाँ चली गई थी । लुत्फुन्निसा मलिनवदन मुँह नीचा किए कुलसुम के सामने आ खड़ी हुई और पद-नख से पृथिवी खोदने लगी तथा एकटक अपने हाथ के नख की ओर देखने लगी । ज्ञात होता था कि निरीक्षण कर रही है कि उनमें लालचीन* का रुधिर है या नहीं ।

ऊपर से नीचे तक कई बार भली भाँति देखकर लालचीन ने पूछा—“तूने क्या ठीक किया ?”

लुत्फुन्निसा—किस बात का ?

लाल—विवाह के विषय में ।

लुत्फुन्निसा—मुझे कुछ ठीक करना नहीं है ।

लालचीन के ललाट और कपोलों पर खून दौड़ आया । उसका होठ फड़कने लगा । अपने को बहुत सम्हालकर उसने कहा—“मैं तेरी बात नहीं समझ सका ।”

लुत्फुन्निसा—समझने की तो कोई बात नहीं है । आप तो सब जानते ही हैं । और क्या कहूँ ?

लाल—तू नहीं देखती इसमें कितनी हानि है ।

लुत्फुन्निसा—किसकी ? बाबा ! मैं कई बार कह चुकी और फिर भी कहती हूँ कि रक्तंजित सिंहासन पर मैं पैर नहीं दे सकती । अपराध क्षमा हो । शम्स सुलतान नहीं पैदा हुआ था । भाई को धक्का देकर वह गद्दी पर बैठा है । उसका भाई तख्त के पाए के पास छटपटा रहा है । संभव है, उससे धक्का खाकर सिंहासन हिल जाय । मैं ऐसे स्थान पर बैठना चाहती हूँ जिसके हिलने का भय न हो, जो अचल हो, जो धर्म के पाए पर स्थिर खड़ा हो ।

लाल—क्यों, क्या कह गई ? तू पागल तो नहीं हो गई है ? क्या बे सर पैर की बातें कह रही है ? मैं कुछ नहीं समझ सका ।

लुत्फुन्निसा—अरुचिकर बात को हम लोग समझकर भी समझना नहीं चाहते ।

लाल—तू बहुत बहकी बहकी सी बातें कर रही है । तू यह भी नहीं देखती कि इसमें किसका लाभ है, मेरा वा तेरा ।

लुत्फुन्निसा—किसी का हो । धर्म छोड़ना मैं नहीं चाहती । जो कुकर्म का फल भोग करता है वही कुकर्म का भागी होता है ।

लाल—बस बस, बहुत हुआ । क्या तू जानती है कि किसके सामने बातें कर रही है । क्या लड़कियाँ पिता के सामने इसी प्रकार बातें करती हैं ? क्या तुझे यही शिक्षा दी गई है ?

लुत्फुन्निसा—सब जानती हूँ; किंतु धर्म के लिये मैं जान देने पर भी तैयार हूँ । शम्स से मैं अवश्य शादी करूँगी । शम्स को छोड़कर किसी दूसरे के साथ कभी विवाह न करूँगी । किंतु जब तक वह सिंहासन पर है, उससे मैं कोई संपर्क नहीं रख सकती । मैंने सदा के लिये यह निश्चय कर लिया है । इसके विरुद्ध मैं कभी कर नहीं सकती । अब मुझे किसी बात का भय नहीं है । मैं आपका अधिकार जानती हूँ । यह भी मुझे ज्ञात है कि मेरी जान आपके हाथों में है । किंतु मेरा मन—मेरी इच्छा—मेरी अपनी वस्तु है । आप मेरी जान ले सकते हैं, किंतु मेरे विचारों को बदल नहीं सकते । मन का स्वच्छ बेग रुक नहीं सकता ।

लाल—तू भूलती है। मैं तेरी जान नहीं लूँगा; किंतु तुझे इस बात की शिक्षा देनी है कि कन्या को पिता की आज्ञा कैसे पालन करनी चाहिए। तू जानती है न कि तेरी स्वतंत्रता भी मेरे अधीन है। यदि इस समय तू राज़ी न हुई तो तुझे कठिन कारावास का कष्ट भोगना पड़ेगा। समय है, अब भी सम्हल जा; नहीं तो पीछे पछतायगी। तू नहीं अनुमान कर सकती कि कैदखाने में तुझे कितनी यंत्रणा भोगनी पड़ेगी।

लुत्फुन्निसा—मैं खूब जानती हूँ कि मुझे अवज्ञा का क्या दंड मिलेगा। इस बात पर मैंने पूरा विचार किया है। किंतु अंत में मुझे ज्ञान हुआ कि धर्म के सामने कष्ट कुछ नहीं है। बाबा ! मैं यह भी जानती हूँ कि आप सब कुछ कर सकते हैं। जिसमें आगे बखेड़ा न बढ़े, मैं स्पष्ट शब्दों में कह देती हूँ कि दक्षिण भारत के सम्राट् से मैं कभी विवाह नहीं करूँगी। आगे मुझे कुछ कहना नहीं है।

लालचीन अब अपने को रोक न सका। उसका क्रोध सीमा के बाहर हो गया। उसने लुत्फुन्निसा को लात मारना चाहा किंतु कुलसुम ने उसे रोक लिया। तब लालचीन ने दाँसी से कहा कि इसके हाथ पैर बाँधकर एक घर में बंद कर। देखना, कभी निकलने न पावे। आज संध्या तक इसे दूसरी जगह भेज दूँगा।

यह कह लालचीन ने बाहर आकर अपने प्रधान कर्मचारी से कहा कि पचास अश्वारोही सैनिकों और एक शिविका का

तुरंत प्रबंध कर दो । उसने एक पत्र सागर के दुर्गेश के पास लिखा कि जो कैदी जाता है उसे प्रतिष्ठा के साथ रखना होगा । किसी मर्द को उसके निकट कभी न जाने देना होगा और वह खुद भी उसके समक्ष न जाय । उस पर खोजों का पहरा रहेगा और उसे बहुत ही साधारण भोजन दिया जायगा । यह सब प्रबंध ठीक करने पर भी लालचीन का क्रोध शांत न हुआ । वह एक बार और अंतःपुर में गया ।

पाँच पकड़कर कुलसुम ने बहुत विनती की, किंतु लालचीन ने एक न मानी । जब कुलसुम ने उसे किसी प्रकार न छोड़ा तब उसने झूठी बातें बना दीं कि दो चार दिन के लिये एक रिश्तेदार के पास भेजता हूँ, फिर बुला लूँगा । इस पर कुलसुम राजी हो गई । उसने समझा कि कदाचित् इससे लुत्फुन्निसा भी डरकर विवाह करने पर सहमत हो जाय ।

यथासमय लुत्फुन्निसा दो दासियों, पाँच खोजों और पचास सैनिकों के संग सागर दुर्ग में भेजी गई । जिस दिन गयास कारागार से निकाला गया था उसी दिन संध्या समय लुत्फुन्निसा की सवारी सागर दुर्ग में पहुँची ।

दसवाँ परिच्छेद

जैसी कोठरी में गयासउद्दीन कैद था वैसी ही कई कोठरियाँ सागर दुर्ग में थीं। इनमें से एक में जाने की राह उस स्थान से थी जहाँ दुर्गेश की स्त्री रहती थी। उसी कोठरी में लुत्फुन्निसा के रहने का प्रबंध किया गया।

आगंतुक के लिये सब ठीक कर दुर्गेश गयास की कोठरी की ओर चला। पश्चिम दिशा में मार्तण्ड की विदाई का प्रबंध हो रहा था। दिगंत रक्तावलंबी हो रहा था। यूथ के यूथ पत्नी उड़ उड़कर अपने बसेरों को जा रहे थे। सुखद त्रिविध पवन डोल रहा था। विहंगकुल के कलरव से निर्जीव वन सजीव हो रहा था। प्रकृति की शोभा अकथनीय थी। किंतु दुर्गेश ने इसकी ओर दृष्टिपात नहीं किया। सुरंग से होकर वह उस कोठरी में पहुँचा जहाँ गयास कैद था। वहाँ किसी को न देखकर उसका माथा ठनका। दौड़कर वह बाहर आया और अफगन को बुलाकर उसने पूछा कि कैदी क्या हुआ।

शेर—कौन कैदी ?

दुर्गेश—गयासउद्दीन।

शेर अफगन ने आश्चर्य में आकर कहा—सो क्या ? दोपहर को जब मैं भोजन लेकर गया था, तब तो वह वहीं

था । यह आप क्या सुना रहे हैं ! वहाँ से मनुष्य भागेगा क्योंकर ?

दुर्गेश—बुद्धि काम नहीं करती । चलो न फिर चलकर देखें ।

निदान दोनों एक साथ फिर उस कोठरी में गए और आलोक के सहारे दोनों ने कोठरी तथा सुरंग में अनुसंधान किया । किंतु गयास का कहीं पता न लगा । हताश हो दुर्गेश ने कहा—सुरंग छोड़कर बाहर जाने का कोई पथ नहीं है । वहाँ सदा मैं रहता हूँ । ताली मेरे पास रहती है । मेरे कमरे के द्वार पर सदा प्रहरी रहता है । आप कहते हैं कि दोपहर के भोजन के समय वह वहीं था । तब क्या हुआ ? ऐसी आश्चर्यजनक घटना ! भला कौन इस पर विश्वास करेगा ? लालचीन क्या कहेगा ? कहीं निकलने की राह नहीं । तहखाने में ऐसा भी रंध्र नहीं है जिसमें सर्प समा सके । क्या हुआ ? ऐसा तो कभी देखा वा सुना भी नहीं । लालचीन कहेगा कि मैंने उसे भगा दिया । ऐसी अड़चन पड़ी कि बुद्धि चक्कर में आ गई । आप सच कहते हैं कि जब आप मध्याह्न का भोजन लेकर गए तब गयास उद्दीन वहाँ थे ?

शेर—भला यह भी मिथ्या हो सकता है ? आँखों की देखी बात कह रहा हूँ । मैं कुछ पागल तो नहीं हो गया हूँ कि छाया को मनुष्य मान कर भ्रम में पड़ूँगा ।

दुर्गेश—उस समय वे क्या कर रहे थे ?

शेर—करेंगे क्या ? सदा बैठे रहते थे । आज भी बैठे बैठे अपने भाग्य पर भँख रहे थे ।

दुर्गेश—आपने तो कहीं उन्हें भगा नहीं दिया ?

शेर—क्या खूब ! मान लिया जाय कि मैं ऐसा करना चाहता भी तो किस राह से निकालता ? आपसे तो बढ़कर कोई दूसरा इस दुर्ग का भेद नहीं जानता । यदि आपको कोई रास्ता मालूम नहीं है तो दूसरा क्या जानेगा ? किंतु इतना अवश्य है कि हड्डी मांस का बना मनुष्य कुछ भाफ होकर उड़ तो नहीं जायगा ।

दुर्गेश—क्या कहें ? किसको कहें ? सब मेरे भाग्य का दोष है । अच्छा कल जाकर आप लालचीन को इसका संवाद दीजिए । आपने जो देखा सुना है, सब ठीक ठीक उनसे कह दीजिएगा ।

शेर—एक दो दिन बाद जाने से अच्छा न होगा ? इस बीच हम लोग गुप्त रीति से उन्हें इधर उधर ढूँढ़ें ।

दुर्गेश—जब भागने का मार्ग ही नहीं ज्ञात होता है तब खोजा कहाँ जायगा ? अच्छा यह भी चेष्टा कर देख लीजिए ।

शेर—अच्छा मैं अभी जाता हूँ ।

शेर अफगन ने जंगल की राह ली । दुर्गेश की चिंता की सीमा न रही । लालचीन को वह भली भाँति जानता था, इससे बहुत भयभीत हुआ । उसे यह भली भाँति ज्ञात था कि संतोष-जनक उत्तर दिए बिना उसके प्राणों का छूटकारा नहीं है ।

किंतु करे तो क्या ? एक बार जाकर वह लुत्फुन्निसा का पूरा प्रबंध कर आया। गयासउद्दीन के निकल जाने की बात उसने किसी से न कही।

इधर शेर अफगन फ़कीर के पास पहुँचा। वे कुटीर के द्वार पर बैठे चंद्रदेव की शोभा देख रहे थे। इसे देखकर उन्होंने पूछा—“कहो, क्या संवाद है।”

शेर—दाता ! दुर्गेश को गयास के भागने की ख़बर लग गई। वह बहुत चिंता में पड़ा है। एक सवारी आई है। उसके साथ प्रायः पचीस सिपाही हैं। जान पड़ता है कि वही लालचीन की कन्या है। दाता को सब बातों का क्यो-कर पता रहता है ?

फ़कीर—मुझे पता क्या रहेगा ? तुमने हठ करके मेरी प्रवृत्ति जब इस ओर कराई तब तो सब बातों की ख़बर रखनी ही पड़ेगी। कहो तो वह कहाँ रखी गई गई है।

शेर—यह कहना तो कठिन है; क्योंकि सवारी अंतःपुर में भेजी गई।

कुछ देर सोचकर फ़कीर बोले—हाँ, जान गया। जिस प्रकार की कोठरी में गयास कैद था उसी प्रकार की एक कोठरी अंतःपुर में भी है। वह भी उसी प्रकार खुल सकती है। उसकी सुरंग का द्वार जहाँ गयास इस समय है उसी के निकट है। किंतु यदि वह बाहर भी निकले तो जायगी

कहाँ ? क्योंकि हम लोग स्त्री को तो यहाँ वन में नहीं रहने दे सकते । उसमें कई कठिनाइयाँ हैं ।

शेर—ठीक है । उसे बाहर निकालने का भी तो कोई उपाय नहीं है ।

फकीर—मुझे यह भी जान पड़ता है कि यदि एक दो दिन में वह निकल सकी तो निकली । नहीं तो उसका निकालना ही कठिन हो जायगा ।

शेर—सो क्यों ?

फकीर—लालचीन को जब गयास के निकल भागने का संवाद मिल जायगा, वह इसे यहाँ न रहने देगा ।

शेर—इस ओर तो मेरा ध्यान ही नहीं गया था । तब क्या किया जाय ?

फकीर—जो दासियाँ उसके पहरे पर नियुक्त हुई हैं उनमें से किसी को तुम जानते हो ?

शेर—एक को तो जानता हूँ । किंतु उससे क्या हो सकेगा ?

फकीर—हो तो बहुत कुछ सकता है, यदि वह साहस करे और कुछ करने पर राज़ी हो जाय ।

शेर—यह तो मैं नहीं कह सकता ।

फकीर—अच्छा जाने दो । एक दूसरा उपाय किया जाय । एक दो रोज़ उसे भी मैं यहाँ रक्खूँगा । तुम कल प्रातःकाल फीरोज़ खाँ के निकट जाकर यहाँ का सब संवाद

कहो। उससे कहना कि तुम अपनी पुत्री को उसके परिवार के साथ कुछ दिनों के लिये रखना चाहते हो। मुझे आशा है कि वह इसे स्वीकार कर लेगा। मैं आज ही रात को उसे यहाँ से निकाल लाता हूँ। खुदा चाहे तो सफलता भी अवश्य होगी। तुम एक मशाल तो तैयार करो।

शेर अफगन ने एक मशाल जलाई। हाथ में एक दाब लेकर फ़कीर आगे आगे भग्न अट्टालिका की ओर चला। रात तो चाँदनी थी, किंतु अरण्य में चारों ओर अंधकार राज्य कर रहा था।

थोड़ी देर में अट्टालिका के निकट पहुँचकर दोनों दक्षिण की ओर गए। वहाँ झुरमुट तथा लताओं के मिलने से एक निकुंज सा बन गया था। इधर उधर देख-भाल कर फ़कीर ने एक स्थान को सफ़ किया और एक हाथ के लगभग वहाँ की भूमि खोदी। मिट्टी निकालने पर एक चौखूँटा पत्थर दीख पड़ा। दाब के सहारे फ़कीर ने उसे अपनी जगह से हटा दिया। सामने सुरंग सी दीख पड़ी।

फ़कीर ने शेर अफगन की ओर देखकर कहा—“डरो मत। सावधानी से मेरे पीछे बराबर चले आओ। तुम मशाल मुझे दे दो।” बहुत दूर जाने के बाद सामने ऊपर चढ़ने की सीढ़ियाँ दीख पड़ीं। दोनों ऊपर चढ़ गए। सामने की राह पत्थर के एक चौरस टुकड़े से बंद थी। कई बार चेष्टा करने पर भी वह हट न सका। तब दाब के सहारे फ़कीर ने

वहाँ की मिट्टी खोदी । इस बार बल प्रयोग करने पर एक खटके की आवाज़ के साथ प्रस्तरखंड अपनी जगह से हट गया और उस राह से हवा का एक झोंका आया । मशाल बुतते बुतते बची । शेर अफगन को वहाँ छोड़ “या रब, अब कब तक” कहता हुआ फ़कीर ऊपर चला गया ।

मशाल के आलोक ने उस कोठरी के निबिड़ अंधकार को हटा दिया । चौंकर एक अत्यंत सौंदर्यमयी रमणी सेज से उठ खड़ी हुई और भयभीत होकर सर से पाँव तक काँपने लगी । फ़कीर को देख वह चिल्लाना ही चाहती थी कि निकट पहुँचकर फ़कीर बोला—बेटी, डरो मत । खुदा का भेजा मैं तेरी मदद के लिये आया हूँ । तू कौन है, क्यों यहाँ कैद की गई है, सब जानता हूँ । धर्म के लिये तूने सुख छोड़ा । खुदा तुझसे संतुष्ट है । वह तुझे कारावास का दुःख नहीं भोगने देगा । चल, तू शीघ्र यहाँ से चल । अभी तक कोई जानता नहीं । देर होने से कोई जान लेगा तो बखेड़ा हो सकता है । इस प्रकार अकचकाकर तू मेरी ओर न देख । समय नष्ट न कर । मुझ पर विश्वास कर । मैं तुझे धोखा दे नहीं सकता ।

रमणी—दाता ! मैं आपको पहचानती तो नहीं ।

फ़कीर—मेरी पहचान तो यही है कि मैं एक बंदे खुदा हूँ । फ़कीर का और क्या परिचय ? किंतु बेटी, तू मुझ पर विश्वास कर सकती है । मैं अब ठहर नहीं सकता । जल्द मेरे साथ चल ।

इतनी देर तक रमणी फ़कीर की आर देख रही थी। उसके मन में कुछ संदेह नहीं हुआ, वरन् उसे फ़कीर पर भरोसा हुआ। अस्तु, साथ चलने के लिये वह आगे बढ़ी। सीढ़ी से उतरकर दोनों सुरंग में आए। फ़कीर ने सावधानतापूर्वक प्रस्तरखंड को अपनी जगह पर बैठा दिया। अपने उद्योग में सफलता प्राप्त होने के कारण उसे बहुत हर्ष हुआ। तीनों सुरंग को तय कर वन में आए, मिट्टी पूर्ववत् बैठा दी गई।

फिर तीनों टूटी अटारी की ओर जाने लगे। पाठक समझ गए होंगे कि यह लालचीन की दुहिता लुत्फुन्निसा है। अटारी में आकर फ़कीर ने लुत्फुन्निसा को एक अलग कोठरी में रखा। सब ठीक हो जाने पर फ़कीर ने कहा—“शेर अफगन, अब यहाँ से जाओ। कल प्रातःकाल बीजापुर की ओर अवश्य जाना। दुर्गेश से सब कुछ इसी समय ठीक कर लेना। नहीं तो इसके भागने का संवाद पाकर वह कल बहुत विचलित हो जायगा। दो दिन के भीतर तुम लौट आना।”

“ऐसी ही चेष्टा करूँगा” कहकर और फ़कीर को प्रणाम कर शेर अफगन दुर्ग में लौट आया।

यहाँ फ़कीर ने लुत्फुन्निसा को बहुत ढाढ़स दिया और कहा—तुम कुछ भय न करना, मैं सदा तुम्हारे पास रहूँगा। हाँ ! एक बात यह है कि मैं अधिक दिन तुम्हें यहाँ रख नहीं सकता; क्योंकि यह स्थान सुरक्षित नहीं है। यहाँ का पता तुम्हारे पिता को लग जा सकता है। तब वह तुम्हें अधिक

कष्ट देगा । दो चार दिन में तुम एक सुरक्षित स्थान में भेजी जाओगी । किंतु तुम्हें कहना पड़ेगा कि तुम शेर अफगन की लड़की हो । उदास न होना । अंत में तुम्हारी कामना सिद्ध होगी । शम्स तुम्हें मिलेगा—वह शम्स जिसे तुम चाहती हो, सुलतान शम्सउद्दीन नहीं जिससे तुम घृणा करती हो ।

फ़कीर की बातें सुन लुत्फुन्निसा चकित हो गई । हृदय के आवेग से वह कुछ बोल न सकी, मुँह नीचा कर चुप रह गई ।

कुछ देर के बाद फ़कीर बोला—“अब तुम सो जाओ । रात अधिक बीत गई ।” आज की अपूर्व घटना का प्रभाव लुत्फुन्निसा पर इतना पड़ा था कि वह कुछ सोच नहीं सकती थी । आधी रात से अधिक बीत चुकी थी । भय तथा चिंता के कारण लुत्फुन्निसा को कारागार में नींद नहीं आई थी । फ़कीर के अनुरोध से कुछ खा पीकर वह सो गई ।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

अरुणवसना उषा ने स्वर्णरंजित किरीट धारण किए गगनांगन में दर्शन दिए। शीतल मंद सुगंधमय दक्षिण समीर वन के कोमल स्निग्ध पत्तों को सजीव करने लगा। वन-विहंगों का कर्णसुखद रव सुनकर मन में स्वर्गीय आनंद का संचार होने लगा। अंधकार को आलोक ने क्रमशः हटाना आरंभ किया। सघन अरण्य की संकीर्ण एवं वक्र राह से दो एक पहाड़ी इधर उधर आते जाते दीख पड़ने लगे। किंतु हर ओर अभी तक शांति छा रही थी। इस समय की शोभा तथा सौंदर्य अकथनीय था। इस समय इन स्थानों में प्रकृति अपनी अलौकिक स्वर्गीय छटा दिखाती है। जो शांति को चाहता है, आनंद की खोज करता है, स्वर्गीय सुख को अनुभूत करने की इच्छा रखता है, वह इस समय इसी स्थान में आवे; देखे मलयाचल से सौरभ ला लाकर पवन प्रकृति देवी की कैसी सेवा कर रहा है, और वन-विहंग कैसा अपने कर्त्ता का गुण गा गाकर प्रकृति को उसके निःसीम दान के लिये धन्यवाद दे रहे हैं। प्राचीन लोग इसी समय को अमृतवेला कहते हैं। आर्य ऋषि इसी समय सिंधु नद के तट पर बैठकर सोमरस का पान एवं सामवेद का गीत करते थे और देवतागण धरातल पर आ आकर उन लोगों

को वाञ्छित फल देते थे । किंतु पीछे की बातें पीछे रह गईं । आज तो सागर दुर्ग का प्रहरी दुर्ग के कँगूरे पर खड़ा खड़ा इस अनिर्वचनीय शोभा को देखता हुआ गुन गुन कुछ गा रहा है । हठात् उसकी दृष्टि पहाड़ की निविड़ खोह की ओर पड़ी । वह अचंभे में आ गया । उसने देखा कि पाँच अश्वारोही मनुष्य दुर्ग के फाटक की ओर बढ़े चले आ रहे हैं । अभी तक दुर्ग के निवासी निश्चिंत सोए पड़े हैं । दुर्ग में हर ओर सन्नाटा राज्य कर रहा है । यह आश्चर्यजनक दृश्य देख उसने नक्कारे पर चोट दी, जिसकी आवाज़ से दुर्ग गूँज उठा । सब लोग जाग उठे । कई एक सैनिक दौड़ते हुए उसके समीप आए और कितने दुर्ग की दीवार पर चढ़कर चारों ओर देखने लगे । पहाड़ी राह पर अश्वारोहियों की संख्या क्रमशः बढ़ने लगी । सामने प्रायः तीन शत सिपाही दीख पड़ने लगे । लोगों ने दौड़कर दुर्गेश को संवाद दिया । अब क्या था ! दुर्ग में समर का डंका बजा । सैनिक सुसज्जित होकर दुर्ग की रक्षा पर बद्धपरिकर हो गए ।

देखते देखते सिपाही दुर्ग के फाटक पर पहुँच गए । पहाड़ी राह पर श्रेणीबद्ध सैनिक आगे बढ़ते हुए दीख पड़ने लगे । कँगूरे से दुर्गेश ने देखा कि दुर्ग पर आक्रमण हुआ । किंतु अपने दुर्ग के बल की ओर ध्यान देकर वह विचलित नहीं हुआ । दुर्गेश की आज्ञा पा दुर्ग के सैनिक बाण

वर्षण करने और पत्थरों के ढोके गिराने लगे । उधर आक्रमणकारी सिपाही भी दुर्ग के सैनिकों को लक्ष्य कर तीर छोड़ने लगे । निदान कुछ देर तक खूब घमासान मचा रहा । पहाड़ की खोह में आहत हो होकर अश्व एवं अश्वारोही गिरने लगे । इधर दुर्ग के भी कितने ही सिपाही काम आए ।

प्रायः दो घंटों तक घोर युद्ध हुआ । तत्पश्चात् आगे बढ़ने का कोई उपाय न देखकर वैरियों ने अपनी पीठ दिखाई । तथापि दुर्ग से छोड़े हुए बाणों से भागनेवालों में भी कितने खेत रहे । हताहतों से दुर्ग का पहाड़ी रास्ता एक प्रकार से बंद हो गया और पहर दिन चढ़ते चढ़ते दुर्ग में विजयध्वनि गूँज उठी । किंतु किसी को इस बात का पता न लगा कि दुर्ग पर किसने और कहाँ से आक्रमण किया था ।

दुर्ग में पुनः एक प्रकार शांति स्थापित हो जाने पर दुर्गेश अपने कमरे में जाकर अकेला इस सोंच में पड़ा कि क्या आश्चर्य है कि गयासउद्दीन दुर्ग के सुरक्षित कारागार से निकल गया; लालचीन की बेटो अंतःपुर से बाहर हो गई । किसी को कुछ पता न लगा । अभी तक इसका सूत्र न मिला । ऐसा कौन मनुष्य है जो इस दुर्ग का मुझसे भी अधिक भेद जानता है । कहीं कोई रास्ता नहीं, तो भी दो दो असामी यहाँ से निकल गए ! आज दुर्ग पर यह घोर आक्रमण हुआ ! किसी को भेद न मिला कि ये योधा कहाँ से आए और कहाँ चले गए । भला यह सब दुर्घटना लालचीन सुनेगा तो क्या

कहेगा ? गयास और उसकी कन्या के संबंध में उसे मैं क्या उत्तर दूँगा ? इस स्थान को सुरक्षित समझकर लालचीन ने इन्हें यहाँ भेजा था । किंतु, देखता हूँ, यह दुर्ग भी अब निरापद नहीं है । किसी को यहाँ से आने जाने की कोई गुप्त राह अवश्य मालूम है । किंतु वह व्यक्ति कौन है और वह राह कहाँ है, इसका पता क्योंकर लगे ? जब तक यह न ज्ञात हो, मैं सुख से सो नहीं सकता । आज अचानक धावा किसने किया ? जान पड़ता है, इनको सागर का बल विदित नहीं था । नहीं तो ये लोग कदापि ऐसा साहस न करते । प्रहरी ने बड़ा काम किया । किंतु दुर्ग में ये घुस ही कैसे सकते थे । दुर्ग की दीवार के निकट पहुँचने पर इन्हें ज्ञात होता कि द्वार का पता लगाना कठिन ही नहीं वरन् एक प्रकार से असंभव ही है । किंतु ये लोग थे कौन ? फीरोज़ खाँ के सिवा और हो ही कौन सकता है ? सुना है कि वे बीजापुर के गढ़ में विद्रोहियों का एक दल इकट्ठा कर रहे हैं । जान पड़ता है, गयास का संवाद पाकर इन्हीं लोगों ने इस ओर पाँव बढ़ाया था । हजार शुक्र है कि थोड़े ही में जान बची । किंतु अब यहाँ का संवाद शीघ्र ही लालचीन के पास पहुँचना चाहिए और दुर्ग की रक्षा के लिये राजधानी से और सेना मँगानी चाहिए । आशा है कि दो चार दिन में शेर अफगन वहाँ पहुँच जायगा । किंतु आक्रमण का संवाद भी यदि आज भेज दिया जाय तो अच्छा हो ।

इधर दुर्गेश यह विचार कर रहा था उधर फीरोज़ की सेना भागकर सघन वन में जा छिपी । दुर्ग में अधिक सिपाही नहीं थे, अतएव उन लोगों ने इनका पीछा नहीं किया । बहुत दूर वन में जाकर बहुत कठिनाई से फीरोज़ ने अपनी उखड़ी सेना को पुनः संगठित किया और दुर्ग से प्रायः दो कोस हटकर उसने अपना शिविर खड़ा किया ।

तीसरे पहर को मीर जाफ़र उदास वन में अकेला घूम रहा था । विफल-मनोरथ होने के कारण उसका मन बहुत चंचल था । इसी समय उसकी दृष्टि एक पहाड़ी व्यक्ति पर पड़ी । उसके निकट जाकर इसने पूछा—भाई, तुम कहाँ रहते हो ?

पहाड़ी—क्यों ? पास ही एक कुटी में । आप कौन हैं ?

जाफ़र—मैं रास्ता भूल गया हूँ । मुझे दुर्ग में जाना है ।

पहाड़ी—आप यहाँ कितने दिनों से हैं ?

जाफ़र—मैं हाल ही में आया हूँ । क्या तुम मेरी कुछ सहायता कर सकते हो ?

पहाड़ी इधर उधर देखने लगा । जाफ़र ने एक अशफ़ी उसके हाथ में दी । अशफ़ी लेकर पहाड़ी ने विनीत भाव से उसे सलाम किया ।

पहाड़ी—मैं आपकी सेवा करने को प्रस्तुत हूँ । चलिए, दुर्ग के फाटक तक आपको पहुँचा दूँ । वहाँ आपके इशारा करने पर प्रहरी भूला लटका देगा और आप उस पर चढ़कर दुर्ग में चले जाइएगा ।

जाफ़र—किंतु मैं नहीं चाहता कि दुर्गेश इस बात को जाने । क्योंकि उनकी आज्ञा के बिना मैं यहाँ आया हूँ ।

पहाड़ी—तब क्या किया जाय ?

जाफ़र—मैंने सुना है कि दुर्ग में जाने के कई एक गुप्त रास्ते भी हैं । किंतु मैं हाल ही में आया हूँ इसी से इसका पता नहीं जानता । यदि इसका भेद तुम जानते हो तो मुझे बता दो । एक और अशर्फी तुम्हें दूँगा ।

पहाड़ी—आप ही सरीखे बड़े लोगों के जिलाए हम लोग जीते हैं । किंतु आज सुना है कि दुश्मन वहाँ चढ़ आए थे । गुप्त राह से जाने पर हो सकता है कि लोग देख लें फिर हम लोग बखेड़े में पड़ेंगे । तिसमें संध्या हो गई । आप चलकर आज मेरी कुटी में ठहरिए । आपको सुबह वहाँ पहुँचा दूँगा । दिन में यदि कोई देख भी लेगा तो उतनी हानि नहीं है, क्योंकि हम लोग उस ओर से आते जाते हैं ।

जाफ़र—उधर का रास्ता कैसा है ? क्या हम लोग घोड़े पर चढ़कर वहाँ जा सकते हैं ?

पहाड़ी—रास्ता अच्छा है । घोड़े पर भी जा सकते हैं और पैदल भी । वह स्थान तो यहाँ से दूर नहीं है । घोड़े पर क्यों जाइएगा ?

जाफ़र—यों ही पूछ लिया । यहाँ घोड़ा कहाँ है जिस पर चढ़कर जाऊँगा ? तब कहो क्या अशर्फी लेते हो । एक नहीं दो सही । तुम नहीं जान सकते, मैं इतना क्यों व्याकुल हूँ । रात

को हम लोगों की हाज़िरी होती है । यदि उस समय मैं वहाँ न पाया जाऊँगा तो मेरी नौकरी चली जायगी । संदेह न करो । लो यह दो अशर्फ़ियाँ और ले लो ।

पहाड़ी में अब यह साहस न रहा कि लालच रोक सके । वह आनंद के मारे उछल पड़ा और बोला कि आज तो उस ओर जाने के लिये अच्छा दिन नहीं है और यह समय भी उधर पैर रखने का नहीं है, किंतु जब आप इतने विवश हो रहे हैं तब क्या किया जाय, चलिए । आपसे एक बात और कह देता हूँ कि जो कहीं कुछ बखेड़ा हो तो आप मेरा नाम न लीजिएगा ।

जाफ़र—इसका भय न करो ।

पहाड़ी जाफ़र को गुप्त राह दिखलाने के लिये चला । उसे तनिक भी संदेह न हुआ । अशर्फी की चमक ने उसकी आँखों में चकाचौंध लगा दी थी । सच है, “द्रव्येषु सर्वे वशाः” ।

चाँदनी छिटक रही थी, तो भी इस अरण्य-पथ में अँधेरा ही था । बहुत सावधानी से दोनों आगे बढ़ने लगे । वहाँ की सब वस्तुओं को जाफ़र ध्यानपूर्वक देखता जाता था जिसमें अकेले आते समय भूलें नहीं । कभी कभी वन में खड़खड़ाहट सुनकर वह चिहूँक जाता था । अभी तक रात एक घड़ी से अधिक नहीं बीती थी किंतु यह जान पड़ता था कि न जाने कितनी रात बीत गई है । कुछ दूर आगे

चढ़ने पर दोनों पहाड़ की खाह में धुसे। वहाँ चंद्रदेव का पूरा प्रकाश आ रहा था। कुछ आगे जाकर पहाड़ी ने जाफ़र को एक गुप्त पत्थर का द्वार दिखाकर कहा कि इसी को खोलकर आप भीतर जा सकते हैं। भीतर जाकर ऊपर चढ़ने की सीढ़ियाँ मिलेंगी। फिर एक साधारण द्वार मिलेगा। उसे खोलकर आप दुर्ग के हाते में पहुँच जाइएगा। मैं आगे नहीं जाऊँगा। मेरी कुटी इसी ओर है। आप भय न कीजिए। चले जाइए।

पहाड़ी चला गया। मीर जाफ़र अकेला रह गया। ऐसे बीहड़ स्थान में अपने को अकेला पा पहले तो वह डरा किंतु उसने साहस कर एक बार द्वार खोलने की चेष्टा की। भुजाली की सहायता से वह कपाट को खोल सका। उसने सचमुच ऊपर चढ़ने की सीढ़ियाँ देखीं। अब जाफ़र को वहाँ अधिक देर तक ठहरना व्यर्थ जान पड़ा। वह आनंद-स्रोत में बह चला और खूब तेज़ी से अपने शिविर में पहुँचा। वहाँ फ़ीरोज़ खाँ उसके लिये चिंतित हो रहा था। उसके मन में नाना प्रकार के भाव उदय हो रहे थे। मीर जाफ़र ने चुपके से सब बातें फ़ीरोज़ से कहीं। दोनों साथ आकर उस द्वार को फिर देख गए, क्योंकि फ़ीरोज़ खाँ बहुत चतुर सरदार था और बिना स्वयं जाँच किए उसने अपनी सेना को उस ओर ले जाना उचित न समझा। सब कुछ पूर्ण रूप से निरीक्षण करने के पश्चात् फ़ीरोज़ का वदन प्रसन्न हो आया और जाफ़र की प्रशंसा

लिया । यदि आपकी सहायता न होती तो भला इस अजय दुर्ग का रास्ता मिलता ? किंतु अब तो देखता हूँ कि इसमें घुस जाना कोई बात नहीं है । जान पड़ता है कि इस ओर दुर्गेश का अधिक ध्यान नहीं रहता है !

जाफ़र—क्या ध्यान रहे ? भला कभी किसी को कुछ संदेह हो सकता है कि दुर्ग में जाने की इस ओर कोई राह होगी ? क्या आप नहीं देखते कि यह स्थान कैसा डरावना है ! दिन को भी इस ओर पाँव रखते दिल दहल जाय, रात की बात कौन चलावे ।

लौटकर फ़ीरोज़ खाँ ने अपने साथियों को बुलाकर सब समाचार कह सुनाया । डूबते हुए को सहारा मिला । सुबह को हार जाने के कारण ये लोग बहुत चिंतित, दुःखित और निरुत्साह हो रहे थे । यह शुभ संवाद सुनकर इनमें नूतन बल का संचार हुआ । कूच की भेरी बजी । किंतु लोगों की राय हुई कि घोड़ा लेकर जाने में खटका है, अतएव पैदल ही चलने की ठहरी । पहर रात शेष रहते प्रायः पाँच शत सैनिक लेकर फ़ीरोज़ खाँ गुप्त द्वार की ओर चला ।

इस बार वह अपने सिपाहियों के साथ दुर्ग में निरापद घुस गया । इस गुप्त द्वार की ओर किसी का ध्यान नहीं था । एक दो प्रहरी साधारण रीति से यहाँ पहरा दे रहे थे । हठात् सैनिकों के भीतर पहुँच जाने से ये अकचका गए । और इसके पहले कि वे कुछ कर सकें, फ़ीरोज़ के सिपाहियों

ने इन्हें बाँध डाला । बड़ी चौकसी से, भाले के सहारे, फ़ीरोज़ और जाफ़र ने इस गुप्त द्वार को खोला था । सिपाहियों के भीतर आते ही क़िले में हलचल मच गई और भीतर के सिपाही, जो प्रभातकालीन घटना से कुछ अधिक चौकन्ने थे, सजग हो गए । डंका बजते ही सब सैनिक अपने अपने विश्राम-स्थान से निकल पड़े । किंतु रण-साज से सज्जित होने के पूर्व ही फ़ीरोज़ के सिपाही उन पर दूट पड़े । इस समय अपने पराए की पहचान कठिन हो गई । दुर्ग के निवासियों को कुछ पता न चला और बात की बात में दुर्ग फ़ीरोज़ के हाथ में चला आया । सुबह होते होते मीर जाफ़र ने दुर्गेश को पकड़ा । फिर क्या था । सम-राग़ि बुझ गई । किंतु दोनों दलों के बहुतेरे सिपाही काम आए । फ़ीरोज़ की घोषणा दुर्ग में फिरी कि किसी को अब कोई भय नहीं है, जो असभ्य व्यवहार करेगा वही दंड पावेगा । यहाँ के सब सैनिकों को मैं अब अपना समझता हूँ । सब के साथ एक सा बर्ताव किया जायगा । किंतु यदि दुर्ग का कोई सिपाही कोई अनुचित व्यवहार करेगा अथवा मेरी आज्ञा पालन में आनाकानी करेगा तो उसे प्राणदंड दिया जायगा । आज से इस दुर्ग का स्वामी मैं फ़ीरोज़ खाँ हुआ ।

तीसरे पहर तक दुर्ग पुनः पूर्ववत् हो गया । अंतर केवल यह हुआ कि सैनिकों की संख्या बढ़ गई और भूतपूर्व दुर्ग-स्वामी बंदी हो गया ।

शेर अफगन दुर्ग में नहीं है। आज दो दिन हुए, दुर्गेश की आज्ञा से वह राजधानी की ओर गया था और उसने ठीक कर लिया था कि राजधानी से होकर बीजापुर में फ़ीरोज़ खाँ से मिलूँगा ! क्योंकि कमाल शाह का यही आदेश था और उन्होंने वचन दिया था कि दो सप्ताह तक वे असामियों की रक्षा करेंगे। शेर अफगन यदि आज यहाँ होता तो उसकी खुशी की सीमा न रहती।

अभी तक फ़ीरोज़ की आज्ञा से उसके सिपाहियों ने दुर्ग के सब स्थानों को ढूँढ़ डाला। किंतु गयास का कहीं पता न लगा। अंत में हताश हो फ़ीरोज़ ने दुर्गेश को अपने पास बुलाया और सादर कहा कि अब तो आपसे यह बात छिपी न रही कि क्यों इतना कष्ट उठाकर मैं यहाँ आया हूँ।

दुर्गेश—मैं तो कुछ नहीं जानता। इतना अवश्य कहूँगा कि यह काम अनुचित हुआ है। किसी के घर में चोर की तरह रात को घुस आना न्याययुक्त नहीं है।

फ़ीरोज़—आपके साहस की मैं अवश्य प्रशंसा करता हूँ। विजयी के सामने इस प्रकार निर्भीक भाव से बोलने का कितने लोग साहस करेंगे ? किंतु इस समय मैं यह बताने नहीं बैठा हूँ कि आपके स्वामी शम्स ने इस राज्य को डाकू जैसा हस्तगत किया है और मैं उसे दंड देने आया हूँ अथवा मैं स्वयं चौर जैसा शम्स के माल को अपनाने आया हूँ। समय पाकर

इसकी मीमांसा की जायगी और तब आप स्वयं स्वीकार करेंगे कि किसका पल्ला भारी है ।

दुर्गेश लज्जित होकर चुप रहा । उसे चुप देखकर फीरोज़ बोला कि आप विश्वास कीजिए कि दुर्ग लेने की आकांक्षा से मैं यहाँ नहीं आया हूँ; क्योंकि दुर्ग के लेने और न लेने पर कुछ निर्भर नहीं है । जब तक लालचीन और शम्स का मैं दमन न करूँगा तब तक मेरा उद्देश्य पूरा नहीं होगा ।

दुर्गेश—तब आपने इतने लोगों की जान क्यों ली ?

फीरोज़—लड़ाई के दिनों में यह बात नहीं देखी जाती । मरना जीना तो लगा ही है । आप मुझे पहले यह तो बताइए कि गयासउद्दीन को आपने कहाँ छिपा रखा है । आप जो उनका पता मुझे बता दें तो आपको मैं अभी मुक्त कर दूँ और जो आप चाहें, तो यह दुर्ग भी आपको सौंप दूँ ।

आह भरकर दुर्गेश ने कहा कि अब सब बात समझ गया, भला कौन विश्वास करेगा कि मैं सच कहता हूँ । आपके प्रश्न का मैं क्या उत्तर दूँ ।

फीरोज़—आप निःसंकोच भाव से कहिए, बात क्या है ।

दुर्गेश—आप मानिए वा न मानिए, मुझे तो कहना ही पड़ेगा । देखिए, यहाँ के एक गुप्त कारागार में वे कैद थे, यह बात ठीक है । किंतु आज चार दिन से उनका पता नहीं है । न जाने, क्योंकर, किस राह से, किसकी सहायता से वे

बाहर निकल गए । चारों ओर खोज ढूँढ़कर जब उनका पता न पाया तब मैंने राजधानी में इसका संवाद भेज दिया । अभी तक तो यही संदेह था कि आपके आदमियों ने उन्हें निकाल लिया किंतु अब तो यह एक विषम समस्या हो गई ।

फ़ीरोज़—इस प्रकार आप मुझे भुलावा नहीं दे सकते । मैं इतने सहज में आपकी बातों में नहीं आ सकता ।

दुर्गेश—यहाँ जितने गुप्त स्थान हैं, सब आपको दिखा देता हूँ । आप स्वयं चलकर देख लें । मैं आपसे सच कहता हूँ, इस समय वे दुर्ग में नहीं हैं और न मुझे ज्ञात ही है कि वे कहाँ हैं । उनके लिये तो मैं आप ही बखेड़े में पड़ गया हूँ । मैं तो जानता ही था कि आप विश्वास न कीजिएगा । इसी से कहने में संकोच होता था ।

फ़ीरोज़—जहाँ वे रहते थे वहाँ पहरों पर कौन था ?

दुर्गेश—स्वयं मैं । कुछ ऐसा प्रबंध था कि बिना मुझसे ताली लिए कोई वहाँ पहुँच नहीं सकता था । अतएव मैं इसका कोई संतोषजनक उत्तर नहीं दे सकता कि गयासउद्दीन क्या हुआ ।

फ़ीरोज़—आपके साथ मैं दूसरा बर्ताव करना चाहता था किंतु क्या करूँ ! आप आज फिर इसी अवस्था में रहें । कल देखा जायगा ।

फ़ीरोज़ की आज्ञा से दूसरे कमरे में दुर्गेश कैदी सा रखा गया और नियमित रूप से प्रहरी वहाँ रखे गए । दुर्गेश के

अंतःपुर की रक्षा भी भली भाँति होने लगी। इसके अतिरिक्त और जितने प्रत्यक्ष और गुप्त द्वार थे उनकी रक्षा के लिये भी उचित प्रबंध किया गया।

किंतु रात में फीरोज़ को नींद नहीं आई। वह बेचैन होकर खाट पर छटपटाता रहा। रह रहकर यही कहता था कि हाय! इतनी खून खराबी किसी काम में न आई। दोनों ओर के कितने सिपाही काम आए, किंतु कुछ काम न निकला। यदि मैं यह जानता कि गयास यहाँ नहीं है तो इतना कष्ट क्यों उठाता। इससे तो कहीं अच्छा था कि राजधानी की ओर जाने का प्रबंध करता। किंतु लालचीन के हाथ से एक दुर्ग तो निकला। इसके भरोसे वह बहुत कुछ अनर्थ कर सकता था और करता था; क्योंकि इससे अधिक सुरक्षित दुर्ग दक्षिण में कम ही हैं। किंतु मैं तो यहाँ बहुत दिन तक ठहर नहीं सकता। हाँ (खुदा न करे) किंतु दुर्दिन आने पर यहाँ हम लोग कुछ दिन निश्चित रह सकते हैं। इस समय तो यह दुर्ग हम लोगों के काम नहीं आ सकता। जहाँ तक शीघ्र हो, बीजापुर लौट ही जाना चाहिए। वहाँ सैनिकों को वचन दे आया हूँ कि शीघ्र ही गयास को लेकर मैं लौटूँगा। भला वहाँ जाकर उन्हें क्या उत्तर दूँगा? सैनिक जब तक गयास को न देख लेंगे, हम लोगों पर पूरा विश्वास न करेंगे। जो हो, इसका निपटेरा तो बीजापुर ही जाकर होगा। यहाँ अधिक दिन ठहरना व्यर्थ है। एक दो दिन यहाँ और

ढूँढ़कर चल देंगे । इस बीच जाफ़र कुछ सैनिकों को लेकर बीजापुर जायँ । नहीं तो वहाँ भी हम लोगों के पीछे कुछ बखेड़ा हो सकता है । किंतु गयासउद्दीन हुआ क्या ? उसका पता क्योंकर लगे ? जिसके लिये इतना कर रहा हूँ उसी का पता नहीं; जिसे सुख-शांति देने का उद्योग कर रहा हूँ उसे देखता तक नहीं ! नहीं कह सकता, गयास के बिना मुझे कहाँ तक सफलता प्राप्त होगी । देखता हूँ कि भारी बखेड़े में पड़ा । यदि आज गयास को यहाँ पाता तो कितना सुखी होता । किंतु क्या करूँ ?

इसी सोच विचार में सुबह होते होते फ़ीरोज़ ख़ाँ की आँखें भिप गईं और उसने स्वप्न में देखा कि गयास के साथ वह राजोद्यान में बैठा है, लालचीन कैदी के रूप में उसके पैरों के पास लोट रहा है और डरा हुआ शम्स दूर से—संकुचित एवं लज्जित भाव से—उसकी ओर देख रहा है ।

बारहवाँ परिच्छेद

सागर दुर्ग पर आक्रमण तथा उसका पतन हुए आज प्रायः तीन सप्ताह बीत गए । आज बीजापुर के एक सविस्तर दालान में फीरोज़ खाँ, कासिम खाँ और मीर जाफ़र उल्लाह आँजू बैठे राज्यसंबंधी नाना बातें कर रहे थे । लालचीन को इस बात की पूरी ख़बर थी कि बीजापुर अब विद्रोहियों के हाथ में है । वहाँ खाँ-बंधु सैन्य संग्रह कर रहे हैं । देश देश से लोग आकर वहाँ फौज में भरती हो रहे हैं । रसद का भी पूरा प्रबंध हो रहा है । बीजापुर का गढ़ अधिक सुरक्षित बनाया जा रहा है । अरब, पारस आदि देशों से अस्त्र शस्त्र मँगवाए जा रहे हैं । कितने अमीर उमरा, मनसबदार रईस, पुराने समय के पदाधिकारी, जो अब पदच्युत हो गए हैं, आ आकर खाँ-बंधुओं से मिल रहे हैं । यह सब देख सुनकर लालचीन की चिंता बढ़ने लगी । इधर लुत्फ़ुन्निसा के हठ से शम्स पर से भी उसका विश्वास हटने लगा । राजमाता के अनुरोध से शम्स ने खाँ-बंधुओं की गिरफ़्तारी का परवाना दे दिया । किंतु उसी समय गुप्तचर ने आकर बीजापुर का सब संवाद लालचीन को सुनाया । लालचीन सुनकर समझ गया कि यह काम अब सहज नहीं है । खाँ-बंधुओं को पकड़ना

टेढ़ी खोर है । इधर इन लोगों को भी इसका पता लग गया कि लालचीन इन्हें गिरफ्तार करना चाहता है ।

खाँ-बन्धुओं का अपने आदमियों पर भरोसा था क्योंकि समवेदना से ताड़ित होकर ये लोग एकत्र हुए थे । सब के सब समान दुःख से दुखी थे । सब का एक लक्ष्य लालचीन से बदला लेने का था । उधर लालचीन को धन का भरोसा था । अनंत धन व्यय कर उसने अपनी सेना को संतुष्ट रखा था । वेतन, पुरस्कार और भत्ता अधिक दे देकर उसने उनके मन को अपनी मुट्ठी में रखा था । किंतु, इतना होने पर भी वह उनका पूरा भरोसा नहीं करता था; क्योंकि लाख यत्न करने पर भी वह ठीक नहीं जान सका कि दिल से वे किस दल की ओर हैं ।

आज रायपुर का सूबेदार खाँ-भाइयों से आ मिला था । सैयद कमालउद्दीन बड़ा दिलेर बहादुर था । रान सवारी में, भाला, तलवार, तमंचा तथा तीर चलाने में वह अपना सानी नहीं रखता था । सिपाहियों में उसकी बड़ी प्रतिष्ठा थी । जो वार्षिक कर रायपुर से राजकोष में जाता था उसे लालचीन ने इधर तिगुना कर दिया । सैनिक विभाग के प्रबंध में सैयद कमालउद्दीन से सदा राय ली जाती थी और दरबार में उसका बड़ा मान था किंतु लालचीन उसका उतना आदर नहीं करता था । इन्हीं सब कारणों से यह भी विद्रोहियों से मिल गया । इसे पाकर खाँ लोग बहुत प्रसन्न हुए ।

आज आपस में ये लोग यही परामर्श कर रहे थे कि अब क्या किया जाय। मीर जाफ़र ने कहा कि पहले सुलतान शम्स-उद्दीन के पास एक पत्र भेजा जाय। यदि वे लालचीन को हटाकर उस पद पर किसी योग्य पुरुष को रखें और शासन-प्रणाली को सुधारें तो उनसे मिलकर उन्हें उचित प्रबंध बताया जाय। यदि वे इसे स्वीकार न करें तो शस्त्र के प्रयोग से उन्हें सिंहासन से हटा दिया जाय। हम लोगों को शम्स से कुछ विरोध नहीं है। किंतु उनकी मानसिक भीरुता इस प्रकार की है कि वे संसार में किसी काम के नहीं हुए और न होंगे।

सैयद—उन पर लालचीन का जिस प्रकार का प्रभुत्व है उससे मुझे तो विश्वास नहीं है कि वे हम लोगों की कही हित की बातें सुनेंगे।

मीर—किंतु हम लोगों का तो धर्म है कि युद्ध के पहले एक बार संधि का प्रस्ताव उनके पास भेजें। लालचीन के सब कुछ होने पर भी बादशाह तो वे ही हैं। हाँ, नाम ही के सही। ये लोग उनके बड़े बूढ़े हैं। उनका कर्त्तव्य है कि इनका परामर्श मानें। यों तो उनके जी में जो आवेगा वही करेंगे।

कासिम—नहीं, यह बात नहीं है। अभाग लालचीन जो कहेगा वही शम्स सुनेगा। शम्स जाने वा न जाने किंतु लालचीन निस्संदेह नर के रूप में पिशाच है। सुना है कि अपनी कन्या के साथ भी उसका अच्छा व्यवहार नहीं होता है। जो अपनी कन्या का नहीं हुआ, जो अपने स्वामी

का नहीं हुआ वह दूसरे का क्या होगा ! अतएव राजधानी में दूत भेजना तो व्यर्थ है । किंतु जब आप लोग कहते ही हैं तो जाय । अब यह विचारना रहा कि कौन भेजा जाय ।

फीरोज़—मेरी राय है कि मीर सुद्दू जायँ । किंतु कैसे आश्चर्य की बात है कि अभी तक हम लोग गयासउद्दीन का पता न लगा सके । न जाने इन दुष्टों ने उन्हें कहाँ छिपा रखा है ।

कासिम—अभी तक तो बराबर यही संवाद मिलता रहा कि वे सागर दुर्ग में हैं और मुझे विश्वास भी था कि लाल-चीन ने ज़रूर उन्हें वहीं रखा होगा; क्योंकि दक्षिण भारत में उससे अधिक सुरक्षित दुर्ग बिरला ही है ।

मीर—उस दिन वहाँ का सामान देखकर छक्का छूट गया । यदि हम लोग असाधारण बुद्धि से काम न लेते तो क्या वह दुर्ग हम लोगों के हाथ आता ।

फीरोज़—दुर्ग मिलकर ही क्या हुआ जब गयास का वहाँ पता न लगा ?

कासिम—हम लोगों को इस काम में अधिक कठिनाई भी तो न हुई; क्योंकि अंत में दुर्गेश भी अपने को सब प्रकार से पराजित और असमर्थ देख रह गया ।

मीर—वाह ! हम लोगों के सिपाहियों ने भी क्या बहादुरी दिखाई ।

फीरोज़—इसकी खुशी मुझे नहीं है, क्योंकि जिस काम के लिये इतना कष्ट उठाया गया जब वही नहीं हुआ तब दुर्ग ही

लेकर क्या हुआ ! आप लोगों के कहने से मैं संधि का प्रस्ताव भेजता हूँ । किंतु जब एक बार लड़ाई छिड़ गई और सागर दुर्ग शम्स के हाथ से निकल गया तब वह कदापि सुलह नहीं करेगा । किंतु अपनी ओर से मैं कसर नहीं रखूँगा ।

इसी समय एक दास ने आकर कहा कि सागर वन से एक मनुष्य आया है । वह आप लोगों से मिलना चाहता । फ़ीरोज़ ने कहा कि आने दो ।

शेर अफगन भीतर लाया गया । विनीत भाव से अभिवादन कर उसने कहा—आप लोग मुझे नहीं जानते किंतु मैं आप लोगों को भली भाँति पहचानता हूँ । जिस के लिये आप लोगों ने सागर दुर्ग पर धावा किया था उसका पता बताने मैं आया हूँ । सागर वन के निवासी कामिल फ़कीर जनाब शाह कमाल का नाम तो आप लोगों ने अवश्य सुना होगा । उन्हीं का भेजा हुआ मैं आप लोगों की सेवा में आया हूँ ।

फ़कीर का नाम सुन फ़ीरोज़ ने शेर अफगन को बड़े आदर से अपने पास बैठाया । कुशल प्रश्न के बाद अफगन ने कहा कि दाता आप लोगों की विजय-कामना करते हैं । वहाँ का संवाद यह है कि उनकी सहायता और असाधारण युक्ति से सुलतान गयासउद्दीन कारागार से मुक्त हो गए । आजकल सुलतान उन्हीं के पास हैं । आप लोगों ने सुना होगा कि वे अंधे हो गए हैं । अभानो लालचीन ने उनकी आँखें निकाल

ली हैं । सब के सब कहने लगे—“या ग़ज़ब ! लानत उस बदकिर्दार पर । खुदा उसे जहन्नुम में भेजे ।”

अफ़गन ने गंभीरतापूर्वक कहा—जो काम आप लोगों के किए नहीं हुआ उसे उन्होंने कर दिया । अब आप लोग अपने भूतपूर्व सुलतान को अपने पास लाकर रखें, क्योंकि अधिक दिन वे उन्हें अपने पास बन में नहीं रख सकते ।

फीरोज़—बात तो ठीक है । अच्छा कल ही उन्हें यहाँ लाने का प्रबंध किया जायगा । उनका पता लग गया यही बहुत है, उन्हें देखकर सिपाहियों का उत्साह अधिक हो जायगा । इससे बढ़कर शुभ संवाद हम लोगों के लिये दूसरा हो नहीं सकता । अभी तक हम लोगों को यह भी मालूम नहीं था कि वे जीवित हैं वा मर गए । सागर दुर्ग पर भी उन्हीं के लिये हम लोगों ने आक्रमण किया था ।

शेर—ठीक है, किंतु आप लोगों के वहाँ पहुँचने के पहले ही वे दुर्ग से निकाल लिए गए थे । अब एक बात और रही । इस काम में दाता की सहायता करने के कारण लालचीन मुझसे खीझ गया है । मेरा सर्वनाश किए बिना अब वह कदापि नहीं रहेगा । मुझे तो अपना भय नहीं है; क्योंकि मैं पुरुष हूँ । मरने से डरता नहीं । किंतु मुझे एक कन्या है । आज तो उसे मैं शाह साहब के पास रख आया हूँ; परंतु कोई ऐसा सुरक्षित स्थान नहीं है जहाँ उसे रख मैं सदा के लिये निश्चित हो जाऊँ । अतएव मेरी विनीत प्रार्थना है कि

जब तक देश में अशांति है, आप लोग कृपापूर्वक उसे अपने परिवार के साथ रखें। शाह साहब ने मुझे विश्वास दिलाया है कि आप लोगों पर मैं पूरा भरोसा और विश्वास कर सकता हूँ।

फ़ीरोज़ ने कासिम की ओर देखा। कासिम ने कहा—कुछ परवाह नहीं। आप उन्हें भेज सकते हैं। हम लोगों के परिवार में अपनी कन्या सदृश उनका लालन पालन होगा।

शेर—भेजने की बात नहीं है। अब तो मैं सागर की ओर जा नहीं सकता। मेरी पुत्री शाह साहब के पास है, आप लोग उसे सुलतान के साथ मँगा ले सकते हैं। इस उपकार के लिये मैं आप लोगों को असंख्य धन्यवाद देता हूँ। आज मेरे कलेजे से एक बड़ा भारी बोझ हटा। अब मरने जीने की मुझे परवाह नहीं है। जहाँ तक हो सकेगा, मैं जी जान से आप लोगों की सहायता करूँगा।

फ़ीरोज़—कहने की क्या बात है, आप तो हम लोगों की सहायता कर ही रहे हैं। उन लोगों को यहाँ लाने के लिये कल तक उचित प्रबंध हो जायगा और आशा है कि खुदा चाहे तो वे लोग निर्विघ्न यहाँ पहुँच भी जायँगे। यह तो कहिए, क्या देश की दुर्दशा दाता जानबू है।

शेर—उनसे कोई बात छिपी नहीं है। वे हम लोगों से कहीं अधिक जानते हैं। उनका अनुमान है कि आपको सहायकों की कमी नहीं होगी किंतु अर्थाभाव से आप कुछ

अड़चन में पड़ सकते हैं। धर्म आपका सहायक है। दूसरे का दुःख दूर करने के लिये आप इस काम में हाथ डालते हैं। अतएव अंत में आपको सफलता अवश्य प्राप्त होगी। संसार में कोई मार्ग निष्कण्टक नहीं है। धर्म की राह विकट एवं दुर्गम है। इस मार्ग में आप लोगों को बहुत सी विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ता है। आप लोग कठिनाइयों से न डरिए। अंत भले का भला है, यों तो सब खुदा ही का किया होता है।

कासिम—ये व्यर्थ की बातें हैं। यों तो आप कह सकते हैं कि लालचीन जो करता है वह परमात्मा की रुचि के अनुसार ही हो रहा है।

शेर—इससे कौन इनकार करेगा ? इसे न स्वीकार करना अल्लाह की शक्ति, सर्वज्ञता तथा कुदरत में संदेह करना है। क्या आपके कहने का यह मतलब है कि लालचीन खुदा की सृष्टि से बाहर है ? अच्छा और बुरा प्रतिद्वंद्वी शब्द हैं। किसी एक वस्तु को सभी अच्छा वा बुरा नहीं कहते। लालचीन को हम लोग बुरा कहते हैं, किंतु उसके पक्षवाले तो उसे सबसे अच्छा मानते हैं। यदि ऐसा न होता तो आज कोई भी उसका सहायक न होता। कितने लोगों की धारणा है कि दक्षिण भारत में ऐसा बड़ा आदमी आज तक पैदा नहीं हुआ। इसने अपने बुद्धिबल से सलतनत में शतरंज का नक़्शा खड़ा कर दिया और लोगों को देखते देखते प्यादा

(गुलाम) फ़रज़ी (मंत्री) हो गया । आज भी उसकी कूट-नीति के प्रशंसक बहुत हैं । यथार्थ बात तो यह है कि हम लोगों को सारी सृष्टि की ख़बर नहीं है । इसी से, अपनी अल्पज्ञता के कारण, एक दूसरे को अच्छा वा बुरा कहते हैं । जाति-विशेष वा व्यक्ति-विशेष को पुरस्कार वा दंड देने के लिये ही खुदा ताला व्यक्ति-विशेष को असाधारण रूप, विद्या-बुद्धि वा बल देता है और उसकी रुचि का भुकाव इस प्रकार का करता है कि उसके द्वारा ईश्वरीय उद्देश्य की सिद्धि हो ।

मीर जाफ़र—मेरी समझ में नहीं आता कि आप लाल-चीन के पच्चावलंबी हैं वा विपत्ती ।

शेर—उसके विरुद्ध मैं कमर कसकर तैयार हूँ । यदि आज वह मेरे सामने आ जाय तो अभी उसका सर तन से जुदा कर दूँ । ऐसा करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ । अच्छा बुरा देखनेवाला पाक पर्वरदिगार ही है, जो अच्छे गुणों का केंद्र है । जो तीनों काल का ज्ञाता नहीं है वह किसी को अच्छा और किसी को बुरा क्या कहेगा । हाँ, अपनी रुचि के अनुसार हम लोग किसी को अच्छा और किसी को बुरा कहते हैं । जो अपने मन का हुआ वह अच्छा है और जो अपने मन का नहीं है वह बुरा है । किंतु अच्छे बुरे की जाँच की यह तो कोई अचूक तुला नहीं है ।

फ़ीरोज़—हम लोग अपने लक्ष्य से दूर भागे जा रहे हैं । इस समय विज्ञान संबंधी तर्क वितर्क के लिये हम लोग यहाँ

नहीं बैठे हैं। इस समय विचाराधीन यह है कि देश की वर्तमान अवस्था को देखते हुए हम लोगों का क्या धर्म है। लालचीन को हटाकर देश में सुख-शांति लाना वा उसके साथ मिलकर देश के सत्यानाश करने में सहायता पहुँचाना ?

शेर—इसमें मत-भेद नहीं हो सकता। जिस प्रकार हो, लालचीन को पदच्युत करना ही होगा।

फ़ीरोज़—तब राजधानी में पत्र भेजा जाय, यही निश्चय हुआ।

सब—जी हाँ।

फ़ीरोज़—अच्छा तब यही निश्चय हुआ कि कल कुछ सिपाहियों के साथ दो सवारियाँ सागर की ओर भेजी जायँ और पत्र लेकर दूत राजधानी में जाय। अच्छा तब आप लोग इस समय विश्राम करें। कल सैनिक संबंधी विचार कर युद्ध की तैयारी की जायगी। शेर अफगन साहब के आने से हम लोग एक प्रकार से निश्चिंत हो गए। गयासउद्दीन का पता पाकर हम लोग आधी फ़तह पा चुके।

सब—इसमें क्या संदेह ! यह सब आपकी अच्छी नीयत का फल है।

तेरहवाँ परिच्छेद

अपनी माता तथा लालचीन के अनुरोध से शम्सउद्दीन ने फ़ीरोज़ खाँ के प्रस्ताव को न माना । दूत लौट गया ।

दक्षिण भारत में समराम्नि धधक उठी । उभय पक्ष में युद्ध की तैयारियाँ होने लगीं । सारे देश में हलचल मच गई । वीरों और सिपाहियों के मन में उमंग की लहरें उठने लगीं । कायर और शांतिप्रिय नागरिक चिंतित हो गए । जिनके लिये पेट भर खाना और सुख से सोना ही यथेष्ट था उनके सर पर बड़ी विपत्ति घहराई । जो “हाल मस्त” थे, जिनकी मसल थी कि “कोई नृप होय हमें का हानी” वे उभय पक्ष की निंदा करने लगे । जिनमें बल था, पुरुषार्थ था, जो संसार में कुछ कर लेना ही अपना कर्त्तव्य मानते थे वे अपनी रुचि के अनुसार किसी एक पक्ष में जा मिले ।

देखते देखते कई हज़ार वीर फ़ीरोज़ खाँ के झंडे के नीचे आ खड़े हुए । एक दिन प्रभात समय क़वायद के मैदान में अंधे गयासउद्दीन को सिपाहियों ने देखा । उसे देखकर उनका उत्साह बहुत बढ़ गया । सबके मन में यह बात बैठ गई कि बादशाह के साथ लालचीन ने बहुत अनुचित व्यवहार किया है, उस पर घोर अन्याय किया गया है । सबने गयास के पहले दोषों को भुला दिया । गिरे को देख-

कर मनुष्य के हृदय में स्वभावतः दया जाग उठती है। विपत्तिग्रस्त के अपराधों को दुनिया सहज में भूल जाती है। संध्या समय रवि को अस्त होते देखकर लोग मध्याह्न-काल के ताप को सहज में भूल जाते हैं। गयास को देखकर तलवार का कब्ज़ा छूकर सबने प्रतिज्ञा की कि “जान रहते हम मुँह न मोड़ेंगे और गयास का साथ न छोड़ेंगे, वैरियों का विनाश करेंगे और सत्य के पक्ष में मरने से भी न डरेंगे।”

निदान चार हज़ार सिपाहियों को साथ ले, मसजिद के मैदान में निमाज़ पढ़ और फ़तह के लिये प्रार्थना कर, बीजापुर से फ़ीरोज़ लालचीन का सामना करने चला।

फ़ीरोज़ की सेना चार विभागों में बाँटी गई। एक को फ़ीरोज़ ने अपने आधिपत्य में रखा, दूसरे का सेनापति कासिम नियुक्त हुआ, तीसरी जाफ़र के अधीन रही और चौथी सैयद के।

क़िले के मैदान में अपनी अपनी सेना ले चारों सरदार मैदान-जंग (लड़ाई के मैदान) की ओर चलने के लिये जुटे। अश्वारोही तथा पैदल अलग अलग जमा हुए। हाथियों की क़तार अलग थी। ऊँटों पर युद्ध का धौंसा बज रहा था। अनंत तोमर तथा पताकाएँ फहरा रही थीं। किसी के हाथ में ढाल तलवार थी, किसी के हाथ में नेज़ा। कोई तीर कमान तथा तरकस से सुसज्जित था। बालरवि की सुंदर किरणें

अस्त्र-शस्त्रों पर जगमगा रही थीं । प्रभातसमीर के स्पर्श से सिपाहियों का साफ़ा फहरा रहा था । भेरी-नाद होते ही कूच की आज्ञा पर जयध्वनि करती हुई प्रावृट् मेघ जैसी सेना रणक्षेत्र की ओर उमड़ चली ।

उधर लालचीन ने भी सामान ठीक कर रखा था । उसकी इच्छा थी कि ख़ाँ की सेना राजधानी के निकट न आने पावे । इसी से उसने नदी के पार ही इन्हें पराजित करना चाहा । उसे भय था कि यदि वे नदी पार हो जायँगे तो राजधानी में घुस आना उनके लिये सहज हो जायगा । अतएव उसने शम्स को भीमा के किनारे चलकर शिविर डालने की सम्मति दी । सेना को धन देने में लालचीन ने राजकोष ख़ाली कर डाला । किंतु इस बात की ख़बर शम्स को नहीं हुई । देखने में सिपाही संतुष्ट थे । शम्स सेना के साथ हुआ । लालचीन अपनी पत्नी से बिदा होने घर गया । वह कुछ दिन पहले से बीमार थी ।

लालचीन को देखकर वह बोली—आप युद्ध में न जाइए, मेरा जी डरता है । मैं चाहती हूँ कि आप यहीं रहते ।

लालचीन—डर किस बात का है ?

कुल—जान पड़ता है, अब आपको मैं नहीं देखूँगी । यदि इस समय मेरी लड़की रहती तो बहुत कुछ ढाढ़स होता । क्या आप उसे बुला नहीं सकते ? उसका नाम याद आते कलेजा फटने लगता है ।

लाल—मेरे सामने उसका नाम मत लो । यदि उसकी सहायता मुझे मिलती तो क्या मैं इतने बखेड़े में पड़ता ।

कुल—तुम उसका पता लगाओ, नहीं तो मैं जी नहीं सकती ।

लाल—तुम्हें क्या हो गया है ? भला उसका पता एकाएक मैं क्योंकर लगाऊँ ? मेरी बुद्धि स्वयं काम नहीं करती । मैं किसी प्रकार समझ नहीं सकता कि सागर दुर्ग से लुत्फुन्सिा तथा गयासउद्दीन दोनों क्या हो गए । वहाँके दुर्गेश पर अभी तक मेरा पूरा विश्वास है, किंतु इस रहस्य का उद्घाटन होना कठिन जान पड़ता है । इस समय देश की ओर ध्यान दूँ कि घर की ओर ?

कुल—जिस ओर उचित समझिए, देखिए । जिस प्रकार घर गया उसी प्रकार सब जायगा । पुत्री के साथ सब गया । इस दुनिया का अब कौन भोग करेगा ? किसके लिये ? हाय ! हाय ! अच्छा यह तो कहिए आप लड़ने क्यों जा रहे हैं ।

लाल—मजबूरी है । जब तक मैं सामने न रहूँगा सिपाही उत्साह ही काम न करेंगे ।

कुल—न करें, तुम्हें क्या पड़ी है ?

लाल—लड़ाई में हार जाने पर फिर मेरा पता कहाँ रहेगा ? अतएव अपनी रक्षा के लिये, राज्य की रक्षा के लिये और राजा की रक्षा के लिये रणभूमि में मेरा जाना निताई आवश्यक है ।

कुल—सुनिए; लड़ाई में जाने का काम नहीं है। यह सब बखेड़ा छोड़िए। अपना जो कुछ है उसे ले-देकर यहाँ से चले चलिए और लुत्फुन्निसा को वहाँ बुला लीजिए।

लाल—मैं तुम्हारे ऐसा पागल तो नहीं हुआ हूँ।

कुल—मैं नहीं, आप ही पागल हैं। अब मुझे सब सूझ रहा है। जो होना था, हो चुका। आगे अपना सर्वनाश न कीजिए। हाँ, इसमें संदेह नहीं कि इस अनिष्ट का मूल कारण मैं ही हूँ।

लाल—इस समय तुम्हारे पास आकर मैंने अच्छा नहीं किया। जो हो, अब मैं ठहर नहीं सकता। सब ठीक है; घंटे दो घंटे में हम लोग चले जायँगे।

कुल—मेरा कहा न मानिएगा ?

लाल—क्योंकर मानूँ ?

कुलसुम “हाय” मारकर गिर गई और साथ ही साथ मूर्च्छित हो गई। लालचीन ने उसे दासी के सुपुर्दे किया और रणक्षेत्र के लिये पयान किया।

लालचीन को ज्ञात हुआ कि उसका सुखसूर्य अब अस्त हो चला। उत्साह के स्थान पर अनुताप ने उसके हृदय में घर कर लिया, किंतु अपनी सेना के पास पहुँचकर उसके मन में कुछ नई उमंग का संचार हुआ और वर्तमान ने भविष्य की चिंता हटा दी।

चौदहवाँ परिच्छेद

गंभीर निशीथ रजनी है । चारों ओर सन्नाटा छा रहा है । आकाश में मसीमय घोर काली रंघ्रहीन घटा छा रही है । गगन में तारे नहीं हैं, चंद्र नहीं है । रह रहकर दामिनी दमक उठती है और दूरवर्ती मेघ का गर्जन सुनाई देता है । मंद मंद बूँदे पड़ रही हैं । जहाँ दृष्टि जाती है, भयावनी अंधियारी दीख पड़ती है । निकटस्थ ठूँठे पीपर के वृत्त से उलूक का कर्कश रव सुनाई पड़ा । शृगालदल फेंकर उठे ।

कुलसुम, जो अपने कमरे में सेज पर अकेली पड़ी थी, चिहुँककर उठ बैठी और चकित हो चारों ओर देखने लगी । पास ही एक नीची चारपाई पर एक दासी बेसुध पड़ी थी । घर में एक शमादान जल रहा था । सारे घर में पूर्ण निःस्तब्धता राज्य कर रही थी । “कहाँ ? किसने पुकारा ?” कहती हुई कुलसुम बिछौने से उठ पड़ी और कमरे में चौकन्नी सी घूमने लगी ।

पाप का फल विषम होता है । आत्मा बहुत दिनों तक पाप की संगिनी नहीं होती । पाप जब सीमा का उल्लंघन कर जाता है, प्रायश्चित्त आरंभ होता है और बुद्धि साथ छोड़ देती है । मनुष्य ज्ञानशून्य हो जाता है और मस्तिष्क में विकार आ जाता है । यही दशा कुलसुम की हुई । जब लुत्फुन्निसा को लालचीन

ने—अवज्ञा के अपराध में—सागर दुर्ग में कैद कर दिया, लुत्फुन्निसा के शम्स के साथ विवाह न करने के कारण जब दंपति को वाञ्छित फल न मिला, खॉ-बंधुओं के प्रस्ताव को अस्वीकृत करने के कारण जब देश में समराग्नि भभक उठी तब कुलसुम में इतना मानसिक बल न रहा कि वह विवेक के द्वारा अपने दुःख को सहन करे। उसे चारों ओर से निराशा ने आ घेरा और वह उन्मादिनी हो गई। युद्ध आरंभ होने के पहले ही उन्माद का चिह्न दीख पड़ा था।

किंतु लालचीन के समरभूमि में चले जाने पर कुलसुम का पूरा यत्न नहीं हुआ और उसका उन्माद एकदम बढ़ गया। उसके साथ सदा एक दासी रहा करती थी। रात में उसे नींद नहीं आती थी। उन्माद और अधिक होता जाता था अतएव दासी को सारी रात जागना पड़ता था। कुलसुम आज शाम ही से सो रही थी। निश्चित हो दासी भी सो गई। घर में अपर लोग भी नियमानुसार सो गए थे।

थोड़ी देर टहलने के बाद कुलसुम शमादान के पास ठहर गई और अपने सुंदर हाथ की ओर देखती हुई कुछ अस्पष्ट बोलने लगी। धीरे धीरे उसका प्रलाप सुनाई देने लगा। वह कहती थी—“यह कहाँ से आया—मेरे सुंदर हाथ पर यह रक्तबिंदु कहाँ से ? उस दिन गयास की आँखें पोंछ-कर मैंने पट्टी बाँधी थी। वही खून का दाग पड़ा है। किंतु उस दिन से तो बराबर मल मलकर धो रही हूँ। छूटता क्यों

नहीं ? दूर हो, नरक की कालिमा दूर हो । रुधिर तो लाल हाता है । उसके नयन धोने में क्यों गई ? सर्प को मारकर लोग देखते क्यों हैं ! आखेट में आहत चिड़िया को छटपटाते देखने में क्या सुख है ? तुम मंत्री हुए । तुम्हारी प्रतिष्ठा बढ़ी । तुम सिंहासन के समीपवर्ती हुए । बाप रे बाप ! ये लाल लाल आँखें कैसी ? जान पड़ता है, लील लेंगी । दूर हो, दूर हो, अरे मुझे बचाओ, बचाओ... ..मैंने तेरा क्या बिगाड़ा ? जा लालचीन को काट खा.....उसी का सर्वनाश कर । लालचीन मेरा कौन है ? वैरी । इसी से उसे पाप करना सिखाया, मैं स्वयं पाप नहीं करती । लोभ ! लोभ ! सबसे बड़ा पाप लोभ है । दूसरे की संपत्ति देखकर जलना क्या घोर पाप नहीं है ? लोग कहते हैं “मुझे एक दुहिता थी, वह मर गई” । आँखों से देखा वह कबर में दी गई, जिंदा गोर में—तब मेरी क्योंकर ? क्या ? क्यों री, मेरा मुँह क्यों चिड़ा रही है ? तेरे शीश पर यह फूस-काँटे का मुकुट कैसा ?—लालचीन कहता था कि तू दक्षिण भारत की राजमहिषी होगी ! * किंतु यहाँ की राज्ञी तो हीरक-मुक्ता-माणिक-जटित कंचन-किरीट धारण करती है । उसके मुकुट की ज्योति के सामने तारका झिलमिल जाती है—तेरा किरीट काँटों से क्यों भरा है ? अरी, तेरे ललाट से रक्तबिंदु क्यों टपक रहे हैं ? तब तू रानी क्योंकर हुई ? तू मुस्कराती क्यों है ? क्यों, मारेगी क्या ? चुड़ैल तेरे ही लिये तो सब करना पड़ा ! सुख किसे

होता, रानी कौन होती ? तुझे देखकर मेरी आँखें जुड़ातीं, यह भी तुझसे न देखा गया । क्या कहती है ?—‘अस्वाभाविक कार्य अस्वाभाविक दुःख का जनक है । कलुषित मन अपनी गुप्त बात कर्णहीन उपाधान से कहता है ।’ क्या तू मुझे पागल समझती है ? मुझसे तुझे बुद्धि अधिक हो गई है, ज्ञान सिखलाने आई है ! हाय हाय ! यह तो रोने लगी । इसका रोना देखकर मेरा कलेजा फटता है । सुना है—‘शोणित शोणित चाहता है । रक्त के पलटे में रक्त देना पड़ता है । खून का बदला लेने के लिये अचल प्रस्तर भी चलायमान हो जाते हैं । वृत्त भी बोल उठते हैं । कुत्सित विहंग साक्षी देकर कार्य-कारण की गुप्त संबंध-शृंखला को प्रकाशित करते हैं । पवन गुप्त हत्या को प्रमाणित कर देता है ।’ हा ! हा ! मेरे भी प्राण जायँगे । सच कहती है । मेरे ही कहने से लालचीन ने यह पाप-कर्म किया । मेरी ही उत्तेजना से इतने निर्दोषियों के प्राण गए । इनका खून मेरी ही गरदन पर है । बेटी, तेरे भी प्राण मेरे कारण गए । मेरे हाथ महक क्यों रहे हैं ? इनसे रुधिर की गंध क्यों आती है ? क्या सप्त-सागर का जल इसे साफ़ न करेगा ? क्या सारे संसार के सुगंधित द्रव्य इस दुर्गंध को न मिटा सकेंगे ? हाथों को काट दूँ ? हाथ कटने से क्या मन को शांति मिलेगी ? सब गया । हाय हाय ! यह तो घोर युद्ध हो रहा है । प्राणाधिक प्राणवश्रभ लालचीन भागो, भागो । खड़ग लिए गयास तुम्हारी

ओर दौड़ रहा है। छोड़ो, छोड़ो, राज का लालच छोड़ो, धन की माया छोड़ो, प्राणों की रक्षा करो। जान रहेगी तो भीख माँगकर भी खा लोगे। ओह, ओह ! तुम्हारा माथा शरीर से जुदा हो गया। हाय हाय ! रणक्षेत्र में लोथ पड़ी है। शीश पर गिद्ध काग बैठे हैं। बेटी गई, स्वामी गया, सब गया; तब जीकर क्या होगा ? हाय ! हृदय में आग लगी है। आँखों से आँसुओं की धारा बह रही है। तो भी कलेजा जल रहा है—

चश्म पुर-आब है, इस पर भी जिगर जलता है।

क्या क्यामत है, कि बरसात में घर जलता है ॥

“हाय ! मैं क्या थी और क्या हो गई ? पहला उत्साह कहाँ गया ? अब तो—

वह जोश बलबले, मेरे दिल के नहीं रहे।

जलता था एक चिराग, सो अब है बुझा हुआ ॥

“तब मर क्यों नहीं जाती ? किंतु क्योंकर मरूँ ? क्या कोई देखता है ? सब तो सो गए हैं। पर मरूँ कैसे ? अच्छा, एक डोरी गरदन में बाँधकर यदि छत से लटक जाऊँ तो क्या न मरूँगी ? डोरी कहाँ मिलेगी ? क्यों रेशम की डोरी तो घर में है। सामने छत से लोहे की कड़ी लटक रही है। इसी में रस्सी बाँध दूँगी। फिर खाट पर चढ़कर अपनी गरदन से एक छोर बाँधकर लटक जाऊँगी। और ‘दम निकल जाय तो हम समझें कि अरमाँ निकला’ फिर सब दुःख दूर हो जायगा। सब झंझट मिट जायगा। तब जाती क्यों नहीं, अच्छा चलो।

बेटी, तुम्हारे पास आ रही हूँ । नरक ! अपने द्वार को खोल रखना । मुझे स्थान देने में न हिचकना ।”

कुलसुम ने ऐसा ही किया । प्राणों का जब देह से वियोग होने लगा, उसने एक आर्त्तनाद किया । कमरा गूँज उठा । इसी समय आकाश में भयंकर रव से बादल कड़क उठे । सारा घर हिल गया । दासी की निद्रा भंग हुई । अपनी स्वामिनी को फाँसी पर लटकते देखकर उसने भयभीत हो हल्ला किया । घर के सब लोग जाग उठे । बैद बुलाए गए । नाड़ी पर हाथ रखते ही उसकी गर्दन हिल गई । लोगों ने समझा, अब कुछ आशा नहीं है ।

कुलसुम के शोकाकुल प्राण शरीर छोड़कर पयान कर गए । दुःख का बोझ उससे सहन न हो सका । कोमल कलेजा फट गया । दिल चूर चूर हो गया । पापमय जीवनयात्रा समाप्त हुई । पापकर्म की इतिश्री हुई । लालचीन, यह संवाद सुनकर तू क्या करेगा ? तुझ पर इसका प्रभाव क्या पड़ेगा ? तेरी पापयात्रा की संगिनी आज तुझसे जुदा हो गई । दुनिया से वह बिदा हुई । उसने तो अपने कर्मों के प्रायश्चित्त-स्वरूप अपने प्राण दिए, तू क्या करेगा ?



पन्द्रहवाँ परिच्छेद

दक्षिण भारत में भीमानाम की एक पहाड़ी नदी है। किसी किसी स्थान पर अर्धचंद्राकार हो जाने के कारण यह चंद्रभागा नाम से भी विख्यात है। इसके दोनों कूलों पर बहुत से स्थलों पर सघन अरण्य हैं। कहीं कहीं पत्थर के ढोकों से टकराती हुई यह सागर की ओर परिधावित होती है। इसी भीमा के उभय तटों पर दोनों पक्ष के समर-शिविर पड़े हैं। दोनों दलवाले अपनी अपनी घात में हैं और सुयोग की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

महाभारत के समय स्वजनों के विरुद्ध स्वजनों ने शस्त्र धारण किया था। यही नीति आज यहाँ भी काम में लाई जा रही है। भारतवर्ष का यह परम दुर्भाग्य है कि यहाँ के निवासी अपने लोगों के गले पर शस्त्र-प्रहार करने में नहीं हिचकते। अपर किसी देश में यह नियम नहीं है कि घर के लोग घरवालों ही का गला दूसरों से मिलकर घोटें। यहाँ भी दोनों दलों में घनिष्ठ संबंध था। दोनों एक ही देश के रहनेवाले, एक भू-माता की गोद में पालित, एक ही भू-खंड के अन्न से पले थे।

आधुनिक पाठक यह सुनकर अवश्य आश्चर्य में आवेंगे कि सुशिक्षित, रण-शिक्षा प्राप्त शाही सेना के सामने खाँ-बंधुओं

की अशिक्षित सेना (जिसमें प्रायः वणिक् और कृषक थे) क्योंकर लड़ेगी । किंतु यदि वे एक दो बातों पर ध्यान दें तो उनका कुतूहल बहुत कुछ शांत हो जायगा । पहले तो यह कि उस समय भारत निःशस्त्र नहीं था अतएव यहाँ के निवासी उस समय शस्त्र का प्रयोग करना जानते थे । मृगया, आखेट आदि की चाह रखने के कारण भी वे लोग हथियार चलाने में अभ्यस्त होते थे । दूसरी बात यह कि उस समय राजा की ओर से प्रजा की रक्षा का ऐसा उत्तम प्रबंध नहीं था । अस्तु, आत्मरक्षा के निमित्त भी लोगों को शस्त्रसंग्रह करना पड़ा था । इधर शाही सेना भी ऐसी सुशिक्षित नहीं रहती थी जैसी आज की होती है और न आधुनिक युद्धशस्त्र ही उसके पास थे । अतएव साधारण लोगों में और शाही फौज में आज जैसा आकाश पाताल का अंतर नहीं था ।

खाँ ने अपने साथियों से परामर्श किया कि यदि शाही फौज पर रात को धावा किया जाय तो उसे सहज में परास्त करना संभव है । किंतु कठिनाई यह थी कि नदी कैसे पार की जाय । कुछ दिन पहले बहुत पानी बरसा था । इस कारण नदी बढ़ गई थी और पार होने के लिये कोई पुल भी नहीं था । इस असमंजस में शाही सेना भी थी । नहीं तो अभी तक लालचीन कब का आक्रमण कर डालता ।

• आँखें न रहने के कारण गयासउद्दीन इनके साथ रणभूमि में नहीं आया था । यदि शम्स को छोड़ दिया जाय

तो राजवंश में फ़ीरोज़ ख़ाँ से समीपतम राजछत्र का उत्तराधिकारी दूसरा नहीं था। अतएव विद्रोहियों ने फ़ीरोज़ ख़ाँ को “फ़ीरोज़-शाह-रोज़-अफ़ग़ान” की उपाधि से भूषित कर समरभूमि को प्रस्थान किया था। यहाँ इनके प्रति इनके संगियों का व्यवहार बादशाह जैसा होता था। अहमद ख़ाँ “अमीर-उल्ल-उमरा” बनाकर प्रतिष्ठित किए गए। मीर जाफ़र उल्लाह आँजू प्रधान मंत्री नियुक्त हुए और सैयद कमालउद्दीन तथा शेर अफ़ग़ान सिपहसालार बनाए गए। निदान विद्रोहियों ने अपना सब शाही सामान ठीक कर लिया था। किंतु एक राज्य में दो नरेशों का रहना युक्तियुक्त नहीं है। अस्तु, अब देखना रहा कि दक्षिण भारत पर कौन शासन करता है— फ़ीरोज़-शाह-रोज़-अफ़ग़ान वा शम्सउद्दीन शाह, और यही फ़ैसला करने के लिये भीमा नदी के किनारे फ़ौज इकट्ठी है। दोनों दल अपना अपना झंडा फहरा रहे हैं, दोनों ओर अपने अपने पक्ष के लिये जयध्वनि हो रही है। दोनों ओर के सिपाहियों में उत्साह, उमंग, दिलेरी तथा जोश की मात्रा कम नहीं है। सभी बेडर, जान हथेली पर लिए, अपनी अपनी जगह पर डटे हैं।

हिम ऋतु का राज्य था। रात बड़ी और अँधेरी थी। चारों ओर कुहरा छा रहा था। प्रायः नौ बजे होंगे। एक खीमे में बैठकर फ़ीरोज़ ख़ाँ अपने भाई, शेर अफ़ग़ान, मीर जाफ़र और सैयद कमालउद्दीन से परामर्श कर रहा था। फ़ीरोज़

ने पूछा कि वैरियों का क्या संवाद है । कुछ पता लगा, शाही सिपाही कितने हैं ।

शेर—पैदल और सवार सब मिलकर छः हजार ।

अहमद—हम लोगों की सेना केवल चार हजार है ।

फीरोज़—इससे क्या ?

अहमद—चार हजार छः हजार पर क्योंकर विजय पावेंगे ?

फीरोज़—जीतना और हारना क्या सैनिकों की संख्या पर निर्भर है ?

अहमद—तब किस बात पर ?

फीरोज़—लड़ाई में बहुत सी बातों पर ध्यान रखना होता है । विजय और पराजय यदि जन-संख्या पर निर्भर होती तो हम लोग दूसरे देश से आकर भारतवर्ष पर कदापि विजय लाभ न करते । जब जगद्विजयी सिकंदर भारतवर्ष पर आक्रमण करने आया था तब उसके पास कितनी सेना थी ? क्या यूनानी सिपाहियों के बल पौरुष के सहारे उसने पंजाब में विजय लाभ किया था ?

जाफ़र—अपनी ही सेना के हाथी के बिगड़ जाने के कारण पुरु की सेना छिन्न भिन्न हो गई । यदि ऐसा न होता तो सिकंदर को यहाँ फ़तह न मिलती ।

, फीरोज़—आपके कहने का तात्पर्य यह है कि एक हाथी ने हिंदुस्तान और यूनान के भाग्य का फैसला किया । अत-

एव हिंदुओं तथा यूनानियों का विधाता एक हाथी हुआ । भला यह तो कहो कि वह हाथी पहले पहल उसी रणक्षेत्र में गया था वा उसके पहले भी उसने समरभूमि में अपना कुछ काम दिखाया था ?

जाफ़र—सुना है कि कई बार वैरियों के सामने अपनी करामात दिखाकर पुरु नरेश को विजय प्राप्त करने का उसने सुअवसर दिया था ।

फ़ीरोज़—तब सिकंदर के सामने वह क्यों विचलित हो गया ?

जाफ़र—उसके प्रताप के कारण ।

फ़ीरोज़—और उस दिन उसका प्रताप कहाँ था जब उसके सिपाहियों ने सतलज से आगे बढ़ना अस्वीकार किया ? फिर देखिए, हारना जीतना यदि सेना की संख्या पर निर्भर रहता तो क्या मुहम्मद कासिम अरब से सेना लेकर 'दाहिर' को परास्त करता और यदि प्रताप की बात ली जाय तो क्या बिना अपराध ही दाहिर की कन्या के कहने से खलीफ़ा मुहम्मद कासिम को प्राण-दंड देता ?

जाफ़र—तब आप इसका कारण क्या समझते हैं ?

फ़ीरोज़—जय और पराजय जगत्कर्त्ता के हाथ में है । जैसे सृष्टि का सब काम उसकी इच्छा के अनुसार होता है लड़ाई का फैसला भी उसी के इच्छानुकूल होता है । हम लोग धर्म की राह पर हैं । इसी से आशा है कि धर्म हम

लोगों की सहायता करेगा और लालचीन पर हम लोग विजय पावेंगे ।

शेर—यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि देश में इतना असंतोष फैलने पर भी सेना लालचीन से इतनी संतुष्ट क्यों है ?

जाफ़र—रुपया सब कुछ कर सकता है । किंतु जो आप लोग देखते हैं उसे मैं सच्चा उत्साह नहीं मानता ।

शेर—अच्छा देखा जायगा, मैदान जंग में वे कैसा काम करते हैं ।

फ़ीरोज़—मेरी राय है कि इसके पूर्व कि वे नदी के पार हों, हम लोग उन पर हमला करें ।

अहमद—जाड़े की रात में दरिया पार होना कठिन प्रतीत होता है ।

सैयद कमाल—यहाँ से दो कोस ऊपर चढ़कर एक स्थान पर नदी का पाट कम है । कल शाम को मैं देख आया हूँ । जंगल से लकड़ी काटकर इकट्ठी की जाय । वहीं पुल बनाया जाय और रातोंरात जाकर हम लोग हमला करें । मैं अनुमान करता हूँ कि एक सप्ताह में हम लोग यह सब ठीक कर लेंगे ।

शेर—यदि लोग देख लें ?

सैयद—इतना संदेह करने से तो कुछ काम नहीं हो सकेगा । आप सैनिकों को आज्ञा दे, कल से काम आरंभ हो

नाथ । हम लोगों के पास इतना सामान है कि दो मास तक यहाँ ठहर सकते हैं । पुल बनाने का काम रात में होगा । जब एक बार यहाँ आ गए हैं, किसी प्रकार शाही फौज का छका छुड़ाना ही होगा ।

फीरोज़—आपका परामर्श प्रशंसनीय है । कल से अवश्य काम आरंभ हो जायगा ।

शेर—युद्ध तो एक प्रकार से शतरंज का खेल है । जो जितना सोचता है उसे उतनी ही सफलता प्राप्त होती है ।

फीरोज़—ठीक है, शतरंज में हम लोग सब गोटियों की नियमित चाल जानते हैं किंतु युद्ध में हम लोग सब योधाओं की रुचि और उनके मनोगत भावों को जान नहीं सकते और जानने का कोई उपाय है भी नहीं । युद्ध का फलाफल बहुत कुछ घटना-विशेष के अधीन है । भिन्न भिन्न प्रकृति के मनुष्य एक ही दशा में भिन्न भिन्न प्रकार से काम करते हैं । सबकी बुद्धि न तो समान है और न समय पर एक ही सा काम करती है । इसी से लड़ाई का परिणाम सदा अनिश्चित रहता है । देखिए शतरंज की सब चाल जानकर और यह भी समझकर कि किसके बाद कौन सी चाल चली जा सकती है, खेल में जब हार-जीत होती है तब भला लड़ाई विषय में कौन कह सकता है कि क्या होगा ? प्रधान सूत्रधार सबके मन की डोरी अपने हाथ में रखकर अपनी कार्यसिद्धि के लिये प्रत्येक की रुचि को इस प्रकार

फेरता है कि उसी की रुचि के अनुसार सब काम होता है और जैसा वह चाहता है, युद्ध-विशेष का परिणाम होता है। अच्छे लोगों की रक्षा और बुरों को दंड देने ही के लिये युद्धाग्नि प्रज्वलित होती है। यह आप लोग निश्चय जान लें। अतएव जब तक युद्ध का अंत न हो, हम लोग इस युद्ध के विषय में भी कुछ कह नहीं सकते। भगवान् पर भरोसा कर आप लोग उत्साह से काम करते जाइए, जो होगा देखा जायगा।

निदान सैयद के परामर्श से कार्य आरंभ हुआ। प्रभात होते न होते सिपाही आरण्य विटपों से विशाल कुंदे काटने लगे। सैकड़ों आदमी इस काम में लग गए। इधर सैयद ने निर्दिष्ट स्थान पर जाकर दो सिपाहियों के साथ माप तथा निरीक्षण आरंभ किया। संध्या होते होते मशाल के आलोक में पुल बनना आरंभ हो गया। हजारों आदमी लग गए। कोई लकड़ी लाता, कोई मिट्टी खोदता, कोई बीम गाड़ता, कोई पाया बाँधता, कोई तृण-पल्लव रखता, कोई मिट्टी भरता। निदान भोर होते होते पुल का कुछ अंश तैयार हो गया। दिन को वहाँ से सब हट गए। सैयद की आज्ञा से वहाँ पाँच सिपाही रखे गए थे जिन्हें यह कहा गया था कि यदि विपक्ष का कोई किसी समय वहाँ दीख पड़े तो वे आकर संवाद दें। निर्विघ्न तीन दिन काम होने पर पुल तैयार हो गया और शाही फौज को इसकी खबर न हुई। पुल को तैयार

देख सैयद ने कहा कि तीन हिस्सा लड़ाई हम लोग जीत गए । रही एक, वह भी यदि आज दिन भर शाही पलटन को पुल का हाल न मालूम हुआ तो, आज ही रात को हम लोग जीत लेंगे ।

उधर लालचीन का ध्यान इस ओर नहीं गया । उसका अनुमान था कि दो चार दिन में बाढ़ के घट जाने पर सिपाही नदी पार हो जायँगे और फिर दुश्मनों को पछाड़ना बाएँ हाथ का खेल रह जायगा । प्रायः एक सप्ताह बीत गया, बाढ़ नहीं घटी । युद्ध की आशा में पड़े पड़े सिपाही निरुत्साह होने लगे । उन्हें दिलासा देकर लालचीन ने कहा कि कल कोई उपाय किया जायगा ।

रात अँधेरी है । आकाश मेघ से ढका है । कहीं किसी प्रकार का आलोक नहीं है । वन में तो सदा अंधकार ही का राज्य रहता है । वह इस समय और भी निविड़ हो गया । जहाँ तहाँ सैनिकों ने नदी के दोनों ओर आवश्यक काम के लिये जो अग्नि जलाई है उसी का प्रकाश स्थान स्थान पर दिखाई देता है, जहाँ तो चारों ओर अंधकार ही अंधकार है । आधी रात बीत गई । चारों ओर सन्नाटा छा रहा है । विद्रोहियों की सेना सजी सजाई खड़ी है । कहीं कोई कुछ बोलता नहीं । रण का धौंसा सुनाई नहीं देता । रणवाद्य नहीं बजता । प्रत्यक्ष में किसी ने कोई आज्ञा न दी । आधी रात बीतते बीतते फौज ने कूच किया । चलने में भी शब्द नहीं होता था । मनुष्यों

तथा पशुओं के पाँव की आहट तक नहीं मिलती थी । तीन हजार फौज पुल की ओर चली । एक हजार फौज को लेकर अहमद शाह वहीं रह गए ।

विद्रोही सेना निर्विघ्न नदी पार हो गई । आकाशवर्ती मेघ और भी सघन हो गए । लालचीन का कटक निश्चित सोया हुआ है । उसे ज्ञात नहीं हुआ कि वैरी शीश पर आ गए । सुषुप्त सैनिकों पर हमला करना मुसलमानों के यहाँ धर्म-विरुद्ध नहीं है । इसे ये लोग एक प्रकार की रणनीति समझते हैं । एक पहर रात से कुछ कम शेष रहते रहते फ़ीरोज़ खाँ की सेना लालचीन की सेना के निकट पहुँच गई । दोनों के बीच एक मील से कम अंतर रह गया । इसी समय न जाने क्या देखकर दो घोड़े भड़क गए । कुछ गोलमाल मचा । साथ ही साथ कोलाहल हो गया । किसी को इसका कारण नहीं ज्ञात हुआ । इसी समय किसी की असावधानता से बंदूक की एक आवाज़ हुई । सारा वन गूँज उठा । सैयद का कलेजा काँप उठा ।

लालचीन के जो सिपाही पहरे पर थे वे आवाज़ सुनकर चिहूँक पड़े और उन लोगों ने दौड़कर अपने सरदार को संवाद दिया । चारों ओर हलचल मच गई । जो जहाँ था, वहीं जाग उठा । युद्ध की भेरी बजी । आज्ञा पा सब के सब लड़ाई के लिये तैयारी करने लगे । लोगों ने अँगीठियों में आग जलाई । कोई तोड़े में आग भरने लगा,

कोई तरकस में तीर; कोई धनुष उठाने लगा, कोई भाला और शमशीर । सवार अपने अर्धनिद्रित घोड़ों पर ज़ीन कसने और लगाम लगाने लगे । कोई पड़ा पड़ा पूछने लगा कि यह खल-बली कैसी है । लालचीन उठकर अपने खेमे के बाहर दौड़ा । लोगों से यह सुनकर कि विद्रोहियों ने आक्रमण किया है वह विचलित हो गया । यह सुनकर कि खाँ-बंघुओं की सेना नदी के पार आ गई उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा । अब तो कोई बात छिपी नहीं रही । किंतु लालचीन को यह ज्ञात नहीं हुआ कि सेना किस प्रकार नदी के पार हुई ।

इसके पूर्व कि लालचीन की सेना लड़ाई के लिये तैयार हो, फ़ीरोज़ के सिपाही सामने पहुँचकर वार करने लगे । फ़ीरोज़ के सिपाही आक्रमण के लिये पहले ही से प्रस्तुत थे अतएव उन्हें तो शस्त्राघात करने में उतनी कठिनाई नहीं हुई । किंतु लालचीन की सेना अभी नाँद के कारण अलसाई हुई थी, उसका कोई सामान ठीक नहीं था और न इस समय आक्रमण करने वा आक्रमण रोकने के लिये वह तैयार ही थी । इधर कुहरे के कारण उन्हें यह भी ज्ञात नहीं हुआ कि सामने कितने सिपाही हैं । निदान अलसित रूप से घोर युद्ध आरंभ हो गया और सूर्योदय के पूर्व ही सैकड़ों आदमी खेत रहे ।

कुछ दिन चढ़ा, कुहरा फटा, तब लालचीन की सेना को ज्ञात हुआ कि फ़ीरोज़ की फ़ौज सामने पंक्तिबद्ध खड़ी है और गोली तथा तीर अविरल बरसा रही है । इधर के सिपाही भी

अब नियमपूर्वक खड़े हो गए । दोनों ओर घोर युद्ध होने लगा किंतु फ़ीरोज़ के अकस्मात् धावा करने के कारण लालचीन की सेना निर्जीव सी हो गई थी ।

इसी बीच फ़ीरोज़ के जो सिपाही पीछे रखे गए थे वे भी आ पहुँचे । उनको आते देख लालचीन के सिपाहियों का उत्साह और भी भंग हो गया और उनका पैर उखड़ गया ।

वैरियों को भागते देख फ़ीरोज़ उन पर दूट पड़ा । कुछ दूर तक पीछा करने पर लालचीन उसके पंजे में आ गया । फ़ीरोज़ की आज्ञा पा दो सिपाहियों ने उसे बाँध लिया और उसी समय सैयद कमालउद्दीन और मीर जाफ़र ने शम्सउद्दीन को गिरफ़्तार कर लिया । फिर क्या था, बात की बात में लालचीन तथा शम्सउद्दीन फ़ीरोज़ खाँ के हाथ में कैदी हो गए । लड़ाई का फैसला हो गया । फ़ीरोज़ खाँ ने आज्ञा दी कि भागते हुए का कोई पीछा न करे ।

सोलहवाँ परिच्छेद

बीजापुर के गढ़ में आज विजय-वाद्य बज रहा है। गढ़ पर विजय-पताका फहरा रही है। सारे देश में यह संवाद फैल गया कि फ़ीरोज़ खाँ ने लालचीन पर विजय पाई। देश का दुःख दूर हुआ। कई दिनों तक खूब उत्साह मनाया गया। देश देश से लोग नज़र ले लेकर बीजापुर अभिवादन करने और बधाई देने आने लगे।

आज शाही दरबार है। आज लालचीन का फैसला होगा। गढ़ ही में एक ओर लालचीन और एक ओर शम्स कैद हैं। फ़ीरोज़ ने यही निश्चय किया था कि पहला दरबार बीजापुर में होगा। राजधानी से प्रधान कर्मचारी बीजापुर आ गए थे। फ़ीरोज़ की ओर से एक ऐसी घोषणा कर दी गई थी कि किसी को कोई भय नहीं है। सबका अपराध क्षमा कर दिया गया, सब को अभयदान दिया गया। दरबार में सभी आ सकते और अपना सुख-दुःख सुना सकते हैं।

आज दरबार आम है। शहनशी के नीचे गद्दी खाली पड़ी है। एक सुंदर आसन पर अंधा गयासउद्दीन बैठा है। उसके पास ही एक दूसरे आसन पर फ़ीरोज़शाह है। दूसरे

कर्मचारी ठिकाने से अपने अपने आसन पर बैठे हैं । दरबार एकदम भरा है । देशी विदेशी अनेक प्रतिष्ठित अमीर उमरा उपस्थित हैं । नाना प्रकार की नज़र गद्दी के सामने रक्खी है । दरबार में बैठने की अब कहीं जगह न रही । सब लोग एक दूसरे का मुख देख रहे थे । कोई किसी से कुछ कहता नहीं था । चोबदार, सिपाही, नकीब, पहरेदार नाना प्रकार के वस्त्राभूषण धारण किए ठिकाने से अपने अपने स्थान पर खड़े थे ।

इसी समय न जाने कहाँ से कामिल फ़कीर शाह कमाल वहाँ पहुँच गए । उन्हें देखकर सब लोग अदब से खड़े होकर बार बार बंदगी बजा लाने लगे । गद्दी के समीप पहुँचकर फ़कीर ने सबको बैठ जाने का इशारा किया । सब बैठ गए, केवल वही खड़े रहे । दरबार में सन्नाटा छा रहा था । चारों ओर देखकर फ़कीर ने कहा—“यह जगह मेरे आने की नहीं थी; क्योंकि यहाँ मेरी कोई आवश्यकता नहीं । लेकिन एक बात आप लोगों को समझाने आया हूँ । इस राजगद्दी पर, जो आप लोग इस समय खाली देखते हैं, बैठनेवाले शाह गयासउद्दीन हैं । आप लोग अपने भूतपूर्व बादशाह को भली भाँति पहचानते हैं । वे सामने बैठे हुए हैं । हो सकता है कि अंधे होने और कारागार में बहुत कष्ट भोगने के कारण उनका चेहरा इस समय बदल गया हो और आप लोगों को इन्हें पहचानने में कुछ कष्ट होता हो । किंतु आप लोगों के

बादशाह यही हैं और इस गद्दी पर बैठने का अधिकार इन्हों को है । किंतु हम लोगों की “शरह” के अनुसार अंधा आदमी सिंहासन पर बैठ नहीं सकता; क्योंकि प्रजा का सुख दुःख अपनी आँखों से देखने की उसमें शक्ति नहीं है । और बादशाह प्रजा को सुख देने के लिये होता है, न कि स्वयं राज्य-सुख भोगने के लिये । अतएव बादशाह एक प्रकार प्रजा का दास है न कि स्वामी । अब यह जानना रहा कि शाह गयास-उद्दीन को गद्दी पर बैठने के अयोग्य किस्ने किया । मैं कहता हूँ, लालचीन ने । मेरे पास इसका यथेष्ट प्रमाण है कि लालचीन ने यह नीच कर्म किया है । किंतु मैं समझता हूँ कि आप लोगों को इस विषय में संदेह नहीं है ।” सारे दरबार से आवाज़ आई—“नहीं नहीं, कुछ भी संदेह नहीं । नीच लालचीन को सूली दी जाय । उसकी खाल खिंचवा ली जाय । उसे जिंदा गोर दिया जाय ।”

फ़कीर—इसका फ़ैसला दरबार के नियमानुसार आप लोगों के सामने किया जायगा । इसके लिये आप लोग चिंतन न करें । इस समय अब यह देखना है कि दुर्भाग्यवश जब हम लोग गयासउद्दीन को गद्दी पर नहीं बैठा सकते हैं, तब उसे कौन सुशोभित करे । गयासउद्दीन के भाई शम्सउद्दीन का उसके बाद स्वत्व था, और आज पाँच महीने से वह राज्य भी कर रहा है, किंतु अपने व्यवहार से उसने सबको दिखा दिया कि वह कदापि राजा होने योग्य नहीं है । पहले

तो अपने भाई के सर्वनाशकर्त्ता को उसने ऊँचा पद दिया । दूसरे प्रजापीड़न ही उसके राज्य का प्रधान चिह्न रहा । उसके शासन-काल में प्रजा को जो दुःख हुआ है उसका पूरा हाल आप लोग स्वयं जानते हैं । यहाँ और इस समय उसकी आलोचना की आवश्यकता नहीं है । प्रजावर्ग की सम्मति मुझे मालूम है । प्रजा की इच्छा नहीं है कि वह शम्स के अधीन रहे । तब यह विचारना रहा कि इन लोगों के बाद गद्दी पर कौन बैठ सकता है । आप लोगों ने फ़ीरोज़ खाँ का नाम सुना है । वे भी इसी राजवंश के एक भूषण हैं । मैं समझता हूँ कि आप लोग यह पसंद करेंगे कि राजछत्र इन्हीं के शीश पर अपनी छाया डाले, क्योंकि पहले तो वैरियों के पंजे से इन्हीं ने गयासउद्दीन को निकाला, दूसरे लालचीन के माथे को इन्हीं ने नीचा किया और इन्हीं के बाहुबल के सहारे शम्स एवं लालचीन के हाथ से बिलखती हुई प्रजा का निस्तार हुआ । कहिए गयासउद्दीन, आपकी क्या राय है । यों तो गद्दी पर चाहे जो कोई बैठे किंतु राज्य आपका ही है और इस दक्षिण भारत के बहमनी वंश के वर्त्तमान बादशाह आप ही हैं तथा रहेंगे ।

गयास ने फ़कीर के प्रस्ताव का समर्थन किया । चारों ओर से जयध्वनि होने लगी । फ़कीर ने फ़ीरोज़ का हाथ पकड़कर गद्दी पर बैठाया । मंगल-वाद्य बजने लगा । फ़ीरोज़ पर चारों ओर से फूलों की वृष्टि होने लगी । फ़ीरोज़ के

हाथ में अलाउद्दीन हसन गाँगू बहमनी* की तलवार देकर फ़कीर ने “फ़ीरोज़-शाह-रोज़-अफ़ग़ान” के नाम से उसे संबोधित किया और कहा—फ़ीरोज़, अब तुम राजा हुए।

॥ गाँगू नाम का एक ब्राह्मण ज्योतिषी दिल्ली में वास करता था। हसन नाम का एक मुसलमान उसका एक नीच दास था। गाँगू के खेत में हल जोतते समय एक दिन हसन को स्वर्ण-मुद्रा से भरी एक पीतल की कलसी मिली। इस दैवप्रदत्त धन को हसन अपने स्वामी के पास ले गया। इसके आचरण से प्रसन्न होकर गाँगू ने इसकी कुंडली तैयार की और गणना कर कहा कि एक न एक दिन राजकुंज उसके शीश पर छाया करेगा। गाँगू की प्रतिष्ठा मुहम्मद तुग़लक़ के दरबार में बहुत थी। गाँगू के मुँह से हसन की प्रशंसा सुनकर मुहम्मद ने उसे सेना-विभाग में भरती कर एक शत अश्वों का स्वामी बनाया। अपनी बुद्धि तथा बल की सहायता से हसन क्रमशः मुहम्मद का एक प्रधान सेनापति हो गया और दक्षिण देश में उसकी नियुक्ति हुई। वहाँ उसने बहुत सुख्याति लाभ की।

मुहम्मद तुग़लक़ के सिंहासनारूढ़ होने के समय पठान साम्राज्य का विस्तार हिमालय से कन्याकुमारी तथा बंगाल से पंजाब तक था। पर सुलतान मुहम्मद ने अपने विवेकहीन कार्यों से इसकी नींव जड़ से हिला दी। फ़ारस तथा चीन पर चढ़ाई करने का निष्फल प्रयत्न, दो बार देवगिरि को राजधानी बनाकर दिल्ली-निवासियों को वहाँ बसाने का उद्योग, ताँबे तथा कागज़ के सिक्के चलाने के विचार एवं प्रजा पर अनियंत्रित कर और कठोर अत्याचार ने समस्त देश को हताश कर दिया। सारे भारतवर्ष में विद्रोहान्नि प्रज्वलित हो गई। मालवा और पंजाब में तो शांति स्थापित हुई पर बंगाल, मालाबार,

तुम जानते हो कि राजा का कर्तव्य क्या है । इस नीति को सदा स्मरण रखना कि प्रजा के लिये जान तक समर्पण करना

कर्नाटक, तेलिंगाना आदि देश स्वतंत्र हो गए । गुजरात के कुछ विद्रोहियों को दक्षिण देश के अमीरों ने शरण दी थी । इसलिये सुलतान ने उन्हें बन्दी बना लेने की आज्ञा दी । कुछ काल में वे बन्दी-गृह से निकल भागे और कुछ सेना एकत्र कर उन्होंने दक्षिण भारत में विद्रोह उपस्थित किया । इस्माइल ख़ाँ नामक एक अफ़ग़ान सेनापति उनका सुलतान हुआ । पर मुहम्मद तुग़लक़ वीरता में किसी से कम नहीं था । शीघ्र दक्षिण भारत में पहुँच उसने इन अमीरों को देवगिरि के दुर्ग में बंद कर दिया । गुजरात में नए विद्रोह का समाचार पा अपने दामाद इमादुल्मुल्क पर दक्षिण भारत के दमन तथा शासन का भार छोड़ वह गुजरात की ओर बढ़ा । पर उसके जाते ही दक्षिण भारत के विद्रोह ने भीषण रूप धारण किया । इस्माइल ख़ाँ ने स्वयं राजपद त्याग हसन को उस पद पर प्रतिष्ठित किया । इमादुल्मुल्क युद्ध में पराजित होकर घराशायी हुआ ।

सुलतान तुग़लक़ गुजरात ही में शांति स्थापित करते करते चला बसा । इधर हसन ने अपना राज्य दृढ़ नींव पर स्थापित कर लिया । उसने अब अलाउद्दीन का नाम धारण किया और अपने पूर्व स्वामी की कृपा स्मरण कर अपने राजवंश में “गांगू बहमनी” का नाम जोड़कर उसने अपनी कृतज्ञता का परिचय दिया । अपनी राजधानी उसने कुलबर्ग में स्थापित की और ग्यारह वर्ष राज्य करके अपनी संसार-यात्रा समाप्त की ।

उसके वंशधर तेरह पीढ़ियों तक, कुल १७१ वर्ष, राज्य करते रहे । क़र्त में दक्षिण भारत दो दलों में विभक्त हो गया । इसी कारण बहमनी वंश के अंतिम राजा तृतीय मुहम्मद शाह को वहाँ के अमीरों

राजा का प्रधान धर्म है । अब तुमसे यह कहना है कि इस युद्ध और विद्रोह के कारण तुम किसी के साथ कोई कुव्यवहार न करना । प्रधान अपराधियों के साथ तुम लोग जो बर्त्ताव उचित समझो कर सकते हो । किंतु सर्वसाधारण पर—विशेषतः उन सिपाहियों तथा कर्मचारियों पर जिन्होंने तुम्हारे विरुद्ध अस्त्र धारण किया था—तुम क्रुद्ध न होना । गयास को यथार्थ राजा मानकर सदा इन्हीं की अनुमति से तुम राज-काज किया करना और ऐसा उद्योग करना कि किसी प्रकार इनका दिल न दुखे । रही एक बात । वह जो अबला

ने मिलकर मार डाला और अंततः बहमनी राज्य पाँच भागों में विभक्त हो गया ।

बहमनी राज्य तापती से लेकर कृष्णा तथा तुंगभद्रा नदी तक विस्तृत था । पूर्व में उड़ीसा और पश्चिम में मालवा इसका सीमांत था । आधुनिक निज़ाम का अधिकांश राज्य इसके अंतर्गत था । समय पाकर बहमनी राजाओं ने विजयनगर से कृष्णा तथा तुंगभद्रा के अंतर्गत भूमि को अपने हाथ में कर लिया, बंगाल का राज्य हस्तगत कर उड़ीसा के भी कुछ अंश पर अपना प्रभुत्व फैलाया । हसन गाँगू के बाद क्रमशः प्रथम मुहम्मद, मुजाहिद दाऊद और प्रथम महमूद नर-पति हुए । अनंतर सुल्तान गयासउद्दीन और शम्सउद्दीन दोनों एक ही वर्ष के भीतर सिंहासनारूढ़ और सिंहासनच्युत हुए । तदन्तर फ़ीरोज़शाह राजा हुआ जिसने १४२२ ई० तक राज्य किया ।

इस उपन्यास में अंतिम तीन सुल्तानों के जीवन का एक पृष्ठ वर्णित है । पाठकों को ज्ञात होगा कि कभी कभी सत्य घटना कल्पना से अधिक आश्चर्यजनक होती है ।

तुम्हारे अंतःपुर में आई है उसकी मर्मभेदी दुःखपूर्ण कहानी सुनकर उसकी प्रार्थना तुम लोग स्वीकार करना । उसका विशेष हाल तुम्हें शेर अफगन से ज्ञात होगा । वह शेर अफगन की कन्या नहीं है; किंतु ये उससे भली भाँति परिचित हैं । बस, अब तुम अपना दरबार देखो; मैं चला ।

दोनों हाथ फैला फीरोज़शाह को आशीर्वाद दे फ़कीर वहाँ से निकल गए । कोई उन्हें रोक न सका ।

फ़कीर के चले जाने पर फीरोज़शाह ने कहा—“पहले लालचीन का फ़ैसला हो जाना चाहिए, क्योंकि जब तक वह इस देश में रहेगा यहाँ के निवासी निश्चित नहीं रह सकेंगे और न हमों लोग सुख की नींद सो सकेंगे ।” गयासउद्दीन की ओर फिरकर उसने पूछा—“इस बारे में आप क्या कहते हैं ?”

गयास—यदि इन आँखों में देखने की शक्ति रहती तो मैं कहता कि मेरे सामने उसे न आने दीजिए । किंतु इसका भय अब नहीं है । मैं अधिक बोलना नहीं चाहता और न आपसे एक से अधिक प्रार्थना ही करूँगा । आप सुखी रहें । आप से प्रजा प्रसन्न रहे । आपके द्वारा देश का हित-साधन हो, मैं सुनूँ । सुनकर आनंद होगा । अपने मन को बहुत समझाया, अपनी वर्तमान अवस्था से संतुष्ट रहने की बहुत चेष्टा की, किंतु मन में शांति नहीं आई । जब तक लालचीन को समुचित दंड नहीं मिलेगा, मेरी आत्मा शांति नहीं पावेगी । किंतु मुझे नेत्र तो नहीं हैं, मैं क्योंकर मानूँगा कि

उसे दंड दिया गया । इसका उपाय होना चाहिए । दूसरी बात यह है कि अब मुझे मक्का शरीफ भेज दे' । उसी पाक दरगाह में पड़ा पड़ा, अपने पापों पर अनुताप करता हुआ, मैं अपना शेष जीवन बिताऊँगा । इससे उत्तम प्रायश्चित्त मुझे दूसरा नहीं जँचता । आप तो देखते ही हैं कि इस जीवन में अब मुझसे कुछ नहीं हो सकता । जब शरीर का भार ही वहन करना है तो जैसे यहाँ वैसे मक्के में । अब मुझे कोई सुख नहीं है और न दूसरे ही को मुझसे कुछ सुख मिल सकता है ।

फीरोज़शाह—आपकी आज्ञा का पालन करने में कदापि कोई त्रुटि नहीं होगी । आप मक्के में बादशाह जैसे रहेंगे । राजकोष से पाँच हजार अशर्फियाँ प्रतिमास आपके लिये जाया करेंगी । आपके हाथ में यह अस्त्र दिया जाता है । लालचीन आपके सामने खड़ा किया जायगा । आप जो चाहें, करें । किंतु यह भी निवेदन है कि यदि आप उसे छोड़ भी देंगे तो शाही आज्ञा से उसका सर धड़ से जुदा कर दिया जायगा । शम्सउद्दीन के बारे में आपकी क्या मरजी है ?

ग़यास—वह बेकसूर है; उसका कोई अपराध नहीं है । हाँ, यह तो अवश्य मानना पड़ेगा कि उसने निस्सीम दुर्बलता का परिचय दिया है । किंतु इस दोष के लिये उसे दंड देना व्यर्थ है । वह राजदंड धारण कर सुखी नहीं हुआ । राजा होने पर भी उसने राज्यसुख अनुभव नहीं किया । अतएव मैं कहता हूँ कि आप उसे छोड़ दे' ।

उपस्थित दरबारी “धन्य ! धन्य !” कहने लगे ।

गयासउद्दीन ने कहा—जो अशर्फियाँ भेजने का प्रस्ताव आपने किया वह मुझे स्वीकार नहीं है ।

फ़ीरोज़—आप इसमें हठ न करें । हम लोग जैसा उचित समझेंगे, करेंगे । कल ही आपकी यात्रा का प्रबंध ठीक कर दिया जायगा ।

शाही आज्ञा से लालचीन दरबार में हाज़िर किया गया । फ़ीरोज़शाह ने गयास से कहा—लालचीन आपके सामने खड़ा है ।

गयास—लालचीन, तुम बोलो जिसमें मुझे निश्चय हो जाय कि मेरे सामने तुम्हीं खड़े हो ।

लालचीन ने उत्तर नहीं दिया ।

गयास—जो मनुष्य अपने बादशाह को तख़्त से उतारे और धोखा देकर उसके प्रधान कर्मचारियों को मारे उसे क्या दंड मिलना चाहिए ?

लालचीन चुप रहा ।

गयास—तुमने मुझे अंधा बनाया । मेरे जीवन को सदा के लिये तुमने अंधकारमय कर दिया । कहो, इसका तुम्हें क्या दंड मिलना चाहिए । क्यों, बोलते तुम्हें लज्जा क्यों आती है ?

लालचीन कुछ न बोला ।

गयास—अच्छा, यदि तुम्हें प्राण-दंड देने में मैं पाप भी करता हूँ तो उसके लिये मैं आजन्म प्रायश्चित्त करूँगा। किंतु जब तक मुझे यह निश्चय नहीं हो जायगा कि तुम इस संसार में नहीं हो, मुझे शांति नहीं मिल सकती। अतएव तुम अब तैयार हो जाओ।

यह कह गयास ने लालचीन के कंधे पर हाथ देकर बलपूर्वक खड्ग द्वारा उसकी गर्दन पर वार किया। वार पूरा पड़ा। शीश बदन से अलग होकर गयास के पैरों पर आ गिरा।

गयास ने कहा—बस, सांसारिक संबंध यहीं से समाप्त हुआ। अब जीवन में कोई आशा न रही, कोई आकांक्षा न रही, कुछ इच्छा न रही। संसार से अब लालचीन और गयास दोनों का संबंध छूट गया, कहने सुनने को अब केवल दोनों की कहानी रह गई और रह जायगी। बस, आप लोगों से सदा के लिये अब मैं बिदा होता हूँ।

दरबार विसर्जित हुआ। सब लोग अपने अपने घर गए। सब की मन में भिन्न भिन्न भाव उदय हो रहे थे।

सत्रहवाँ परिच्छेद

दरबार खास में लुत्फुन्निसा बुलाई गई। नीचा सर किए, अश्रुपूर्ण नेत्रों से पृथ्वी की ओर देखती हुई वह फीरोज़शाह के सामने खड़ी हुई। अहमद खाँ, शेर अफगन तथा मीर जाफ़र बैठे थे। कोई कुछ बोलता नहीं था। शीश से पाँच तक लुत्फुन्निसा की ओर देखकर फीरोज़शाह ने कहा—“पुत्री, तेरी दुःखपूर्ण कहानी आद्योपांत मैंने शेर अफगन से सुनी। तेरे पिता ने अपने किए का फल पाया। इच्छा रहते भी मैं उसकी रक्षा न कर सका। न्याय की गति अविचल है। उसके सामने सबको शीश झुकाना पड़ता है। सुना है, तेरी मा ने भी अकस्मात् अपने हाथों से अपने प्राणों का शरीर से वियोग कराया। इस संसार में अब तेरा कोई न रहा। तेरे दुःख से मैं बहुत दुखी हूँ। किंतु क्या किया जाय, बुरे का परिणाम कभी अच्छा नहीं होता। अब तो जो होना था वह हो गया। आगे हम लोग तेरे आराम का पूरा प्रबंध करने पर प्रस्तुत हैं। तू जो कह, हम लोग करने को राज़ी हैं।

•• लुत्फुन्निसा—आपकी करुणा यथेष्ट है। आगे मैं क्या कहूँ? नरेश का प्रधान भूषण दया है। मेरे लिये आपको कुछ कष्ट उठाना नहीं पड़ेगा। किंतु जब आपकी मुझ पर इतनी कृपा है तब.....

फ़ीरोज़—चुप क्यों हो गई ? तू क्या चाहती है ?
निःसंकोच भाव से कह ।

लुत्फुन्निसा—अपराध क्षमा हो । आपको पिता-तुल्य
ज्ञानती हूँ, इसी से साहस करती हूँ । कृपा कर आप अपने
यहाँ के एक कैदी को प्राण-दान दें ।

फ़ीरोज़—समझ गया । तेरे पवित्र निःस्वार्थ प्रेम की बात
मैं सुन चुका हूँ । अच्छा, शम्सउद्दीन को मैं मुक्त करता हूँ ।
यह शुभ संवाद तू ही उनके पास ले जा । इतना नहीं,
मैंने उन्हें दौलताबाद का सूबेदार बनाया । मैं जानता हूँ कि
वे निर्दोष हैं ।

लुत्फुन्निसा—आपका राज्य सदा फूले-फले और अचल
रहे । आप सदा सुखी रहें और आपके द्वारा प्रजा को असीम
सुख मिले । खुदा से मेरी यही विनीत प्रार्थना है ।

फ़ीरोज़—जब शम्स मेरे सामने आवेगा, मैं उसे मजबूर
करूँगा कि वह तुझे अपनावे ।

लुत्फुन्निसा लज्जा के मारे चुप हो रही ।

फ़ीरोज़ ने कहा कि अब तू प्रधान खोजा के साथ शम्स-
उद्दीन के पास जा ।

लुत्फुन्निसा दरबार से बिदा होकर कारागार की ओर
गई । कारागार में बैठा शम्सउद्दीन अपनी अवस्था पर भँख
रहा था । मन ही मन वह कह रहा था कि इस जीवन में मुझे
कभी सुख नहीं मिला । राज्य गया, अच्छा हुआ । राजपद

पाने से मुझे क्या सुख मिला ? अपनी प्रेम-प्रतिमा से वियोग । हाय ! दरिद्र रहने पर भी यदि मुझे लुत्फुन्निसा अपनाती तो मैं कितना सुखी होता । किंतु अब वह आशा कहाँ ? कहाँ मैं और कहाँ लुत्फुन्निसा ? अब तो उसे देखे बिना ही अपना जीवन विसर्जित करना पड़ेगा । सब गया तब जीकर क्या कर रहा हूँ । इससे तो मर जाना कहीं अच्छा था । किंतु उसे देखे बिना मरने को जी नहीं चाहता । हाय ! यह रमणी भी विचित्र है । जब से मैं राजा हुआ, वह मुझसे घृणा करने लगी । क्यों ? इसका पिता विवाह करने को कहता था । मैं राज़ी भी था । तब इसकी सम्मति क्यों नहीं हुई ? मैं इसका क्या उत्तर दूँ ? यह क्योंकर ज्ञात हो कि उसका अनुराग मुझ पर है वा नहीं । क्यों लालचीन ने सब सर्वनाश किया ? आप गया, अपने साथ सबको लेता गया । उसी के कारण सबका सर्वनाश हुआ । किंतु इसके लिये अब दुःख ही करके क्या होगा ? अब आज नहीं तो कल मरना ही है । कौन विश्वास करेगा कि भाई की यह दुर्गति मेरे कारण, मेरे परामर्श से, नहीं हुई । किंतु एक बार खुदा यदि उसे दिखा देता तो मरने में कष्ट न होता ।

ठीक इसी समय कारागार का कपाट खुला और लुत्फुन्निसा ने वहाँ पदार्पण किया । माथा झुकाए शम्स चुपचाप बैठा था । मनुष्य के आने की आहट पाकर उसने अपना मुँह ऊपर किया और साथ ही उसकी दृष्टि लुत्फुन्निसा पर पड़ी ।

अकचकाकर वह चिल्ला उठा—“यह क्या ? यह क्या ? क्या तुम्हें भी लोगों ने कैद किया ? भला तुमने किसी का क्या बिगाड़ा था ? अच्छा ! जो हो, किंतु एक बार मरने के पहले तुम्हें देख तो लिया । मेरा विश्वास है कि अधिक दिनों तक वे लोग तुम्हें यहाँ न रहने देंगे । शीघ्र ही उन्हें अपनी भूल ज्ञात हो जायगी ।”

मुस्कुराकर लुत्फुन्निसा ने कहा—आप भूलते हैं । मैं यहाँ कैद होकर नहीं आई हूँ । भला लोग मुझे कैद क्यों करेंगे ! आज आपको मैं एक शुभ संवाद देने आई हूँ । आप मुझे प्रसन्न देखकर घबड़ाते हैं, मुझे पागल समझते हैं । यदि मैं पागल हो जाऊँ तो कुछ आश्चर्य नहीं । मेरे मा-बाप मर गए ! आप जानते हैं, अपने कुकर्म का फल उन लोगों ने भोगा । यह कहना मेरे लिये अनुचित है, किंतु पाप का विषम फल सब को भोगना पड़ा है । उन लोगों ने भी भोगा । आपके हाथ से राजदंड छूटा, आपका धर्म बचा । इस कारण आपको प्रसन्न होना चाहिए ।

शम्स—इसकी खुशी मुझे जरूर है कि तुम्हारे दर्शन हुए । किंतु अब तो इस दुनिया से प्रस्थान करना होगा । लालचीन के भाग्य के साथ मेरा भाग्य ऐसा सटा है कि उन्हें जो दंड मिला वही मुझे भी मिलेगा ।

लुत्फुन्निसा—दूध का दूध पानी का पानी होता आपकी रिहाई हुई । आपको दंड नहीं भोगना पड़ेगा ।

शम्स—यह तुम क्या कहती हो ?

लुत्फुन्निसा—मैं सच कहती हूँ। आप दौलताबाद के सूबेदार नियुक्त किए गए। यही राजाज्ञा है। यही संवाद मैं आपको देने आई हूँ।

शम्स—यह दया किसके द्वारा हुई ? अनंत धन्यवाद उस परमात्मा को है जिसने मेरी रक्षा की। किंतु.....

लुत्फुन्निसा—किंतु क्या ? साफ़ कहिए।

शम्स—क्या मैं तुमको पा सकता हूँ ?

लुत्फुन्निसा—यदि आप चाहें तो मैं आपकी सेवा करने को प्रस्तुत हूँ। मैं राज्य नहीं चाहती थी, किंतु आपको सदा चाहती रही।

शम्स—बस, यह दुनिया मेरे लिये अब स्वर्ग से कम नहीं है। आज मेरी मनोकामना सिद्ध हुई। मुँहमाँगा वर मिला—

“है शुक्र लाख शुक्र खुदावंद दादगर।

यह शक़ु प्यारी प्यारी जो आई हमें नज़र ॥”

परिशिष्ट

यथासमय लुत्फुन्निसा का विवाह शम्स के साथ हुआ । दोनों दौलताबाद में जाकर रहने लगे । वहाँ शम्स के प्रबंध तथा शासन से सभी संतुष्ट हुए । गयासउद्दीन मक्का गए । वहाँ धर्म के मार्ग पर चलकर वे अपने जीवन को सुखपूर्वक बिताने लगे । फ़ीरोज़-शाह-रोज़-अफ़ग़ान दक्षिण भारत में सुराज्य करने लगे । उनके शासन से प्रजा संतुष्ट थी । देश में धन-धान्य की यथेष्ट वृद्धि हुई । जिन लोगों ने १३६६ से १३६७ साल का दक्षिण भारत का इतिहास देखा है वे लोग जानते हैं कि इन पृष्ठों में वर्णित घटना उपन्यास होने पर भी ऐतिहासिक ही है ।

